जय जिनवाणी

णमो सुअस्स

प्रकाशक
श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस
12, जैन भवन, शहीद भगत सिंह मार्ग, गोल मार्किट, नई दिल्ली

जय जिनवाणी
प्रकाशक
श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस

॥ जय महावीर ॥ णमो सुअस्स ॥ जय श्रमणसंघ ॥

जय जिनवाणी

नित्य स्वाध्याय, धर्म-ध्यान और
आत्म-उपासना हेतु एक श्रेष्ठ संकलन

मंगलमय आशीष

जैन धर्म दिवाकर, ध्यान योगी, आचार्य सम्राट्

पूज्य श्री शिव मुनि जी महाराज

प्रकाशक :

श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस

12, जैन भवन, शहीद भगत सिंह मार्ग, नई दिल्ली

फोन : 011-23363729, 23365420

E-mail : aissjc1906@gmail.com

Website : www.jainconference.org

श्रुत-संवर्धन समिति :
प्रकाशन-पुष्प 1

पुस्तक	:	**जय जिनवाणी**
मंगलमय आशीष	:	जैन धर्म दिवाकर, ध्यान योगी, आचार्य सम्राट् **पूज्य श्री शिव मुनि जी महाराज**
लोकार्पण	:	11 मई 2022
प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थान	:	श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस 12, जैन भवन, शहीद भगत सिंह मार्ग, नई दिल्ली फोन : 011-23363729, 23365420 E-mail : aissjc1906@gmail.com Website : www.jainconference.org
प्रथम संस्करण	:	2000 प्रतियां
मूल्य	:	150 रुपये (लागत मात्र)
मुद्रण व्यवस्था	:	कोमल प्रकाशन, दिल्ली मो. 9210480385

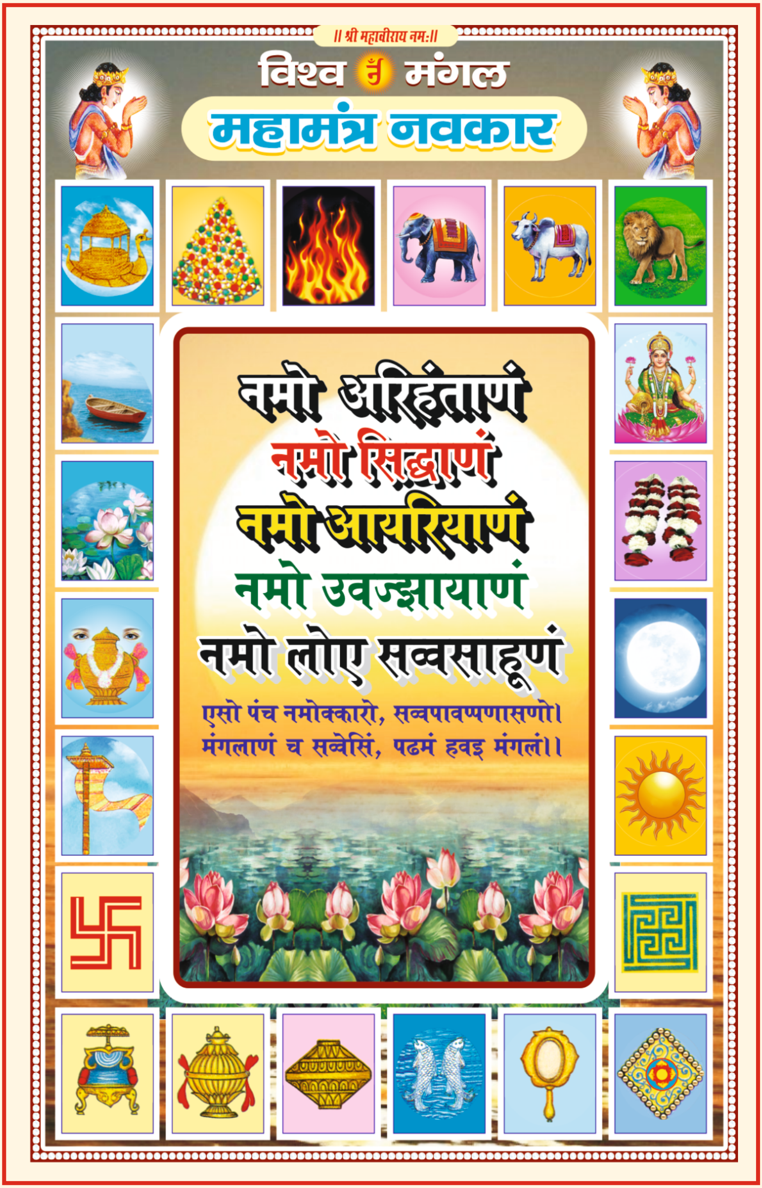
॥ श्री महावीराय नमः॥
विश्व मंगल
महामंत्र नवकार
नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो उवज्झायाणं
नमो लोए सव्वसाहूणं
एसो पंच नमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

श्रमणसंघ नायक : आचार्य परम्परा

श्रमण संघ के प्रथम पट्टधर जैनागम रत्नाकर आचार्य सम्राट
श्री आत्माराम जी महाराज

श्रमण संघ के द्वितीय पट्टधर आनन्द महोदधि आचार्य सम्राट
श्री आनन्दऋषि जी महाराज

श्रमण संघ के तृतीय पट्टधर साहित्य सुमेरु आचार्य सम्राट
श्री देवेन्द्र मुनि जी महाराज

श्रमण संघ के चतुर्थ पट्टधर ध्यानयोगी आचार्य सम्राट
श्री शिव मुनि जी महाराज

शिव-संदेश

स्वाध्याय और ध्यान। ध्यान और स्वाध्याय।

आत्म-साधना के ये दो ध्रुव स्तंभ हैं। इन स्तंभों पर साधना का भव्य प्रासाद आकार लेता है। स्वाध्याय से ध्यान में गहराई आती है। ध्यान से स्वाध्याय में एकाग्रता निर्मित होती है।

स्वाध्याय और ध्यान की संयुक्त साधना से साधक अतिशीघ्र सिद्धि के सोपानों पर आरोहण करता है और अपनी मंजिल को हस्तगत कर लेता है।

'ध्यान' नितान्त आत्मिक विषय है। उसमें किसी बाह्य अवलंबन की अपेक्षा नहीं होती।

'स्वाध्याय' में पुस्तक सहायक होती है। समय के प्रभाव से व्यक्ति की स्मरण-शक्ति सीमित हो गई है। इसलिए वर्तमान में पुस्तक के आधार पर ही सामान्यत: स्वाध्याय किया जाता है।

समाज में कई स्वाध्याय पुस्तिकाएं प्रचलित हैं। समाज में अधिक से अधिक स्वाध्याय का प्रसार और विस्तार हो, इस लक्ष्य के साथ श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस के अन्तर्गत स्थापित 'श्रुत संवर्धन समिति' ने इस दिशा में प्रशंसनीय प्रयास किया है। इस समिति के द्वारा 'जय जिनवाणी' नामक एक समृद्ध और सुन्दर स्वाध्याय पुस्तक का संकलन, प्रकाशन किया जा रहा है। अतीत में भी जैन कॉन्फ्रेंस के दिशा-दर्शन में कई बहुमूल्य ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ है। जैन कॉन्फ्रेंस की 'श्रुत संवर्धन समिति' ने पुन: इस अभियान को आगे ले जाने का संकल्प लिया है। इनके भव्य संकल्प की आत्मीय अनुमोदना! अनुशंसा!

प्रत्येक भव्यात्मा के हृदय में स्वाध्याय और ध्यान की अभीप्सा घनीभूत हो, इसी मंगल मनीषा के साथ सादर स्वस्ति!

सह मंगल मैत्री

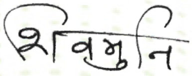

दिनांक : 25-04-2022

स्थान : बलेश्वर, सूरत, गुजरात

(आचार्य शिवमुनि)

श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस
12, जैन भवन, शहीद भगत सिंह मार्ग, गोल मार्किट, नई दिल्ली

अध्यक्षीय सन्देश

गुरु से शिष्य ने कहा—भन्ते ! मन को कैसे एकाग्र करें ?

गुरु ने उत्तर देते हुए कहा—स्वाध्याय से ।

स्वाध्याय का प्रारंभिक अर्थ है—शास्त्र-अध्ययन ! अन्य अर्थ करें तो 'स्व' का 'स्व' में अवलोकन ही वस्तुत: स्वाध्याय है। वह आत्म-अवलोकन कब होता है ? जब सज्झाय अथवा स्वाध्याय में साधक सतत संलग्न रहता है तब निज अवलोकन कर सकता है। निज का अवलोकन किये बिना आत्म-अनुशासन नहीं आता। आत्म-अनुशासन ही इन्द्रियों को विषयों से हटाकर सद्धर्म की ओर ले जा सकता है ।

मैं कौन हूं, कहां से आया हूं तथा कहाँ जाऊँगा—इन प्रश्नों के समीचीन उत्तर स्वाध्याय के माध्यम से ही प्राप्त होते हैं। श्रुत-परम्परा के संवर्द्धन का प्रमुख विषय ही स्वाध्याय है। स्वाध्याय न होता, बार-बार ज्ञान की पुनरावृत्ति न होती तो हमारा आगम-ज्ञान अब तक विलुप्ति के कगार पर खड़ा होता। श्रुत-परम्परा तथा स्वाध्याय ने ही हमारे आगम ज्ञान को अब तक अक्षुण्ण रखा है ।

महान् आचार्यों एवं गुरु-शिष्य परम्परा की ही देन है—स्वाध्याय। स्वाध्याय का सतत जागरण कर्म निर्जरा में सहायक बनता है। यह भी एक आभ्यन्तर तप है। जो तन से तप नहीं कर सकते, वे स्वाध्याय के माध्यम से कर्म निर्जरा की ओर अग्रसर हो सकते हैं। वर्तमान में आगमों या जिनवाणी का स्वाध्याय प्रकाशित पुस्तकों के माध्यम से किया जाता रहा है।

श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेन्स, नई दिल्ली के अंतर्गत स्थापित "श्रुत संवर्द्धन समिति" के द्वारा स्वाध्यायपरक धार्मिक साहित्य का जो प्रकाशन किया जा रहा है, वह प्रशंसनीय एवं अभिनंदनीय है।

प्रस्तुत पुस्तक की स्वाध्याय कर कर्म निर्जरा की ओर दो कदम बढ़ायेंगे तो श्रुत संवर्द्धन समिति का प्रयास सार्थक होगा। आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि स्वाध्यायी बंधु अपना आशीर्वाद प्रदान करेंगे। हार्दिक मंगल-मनीषा एवं शुभकामनाओं के साथ –

आनन्दमल छल्लानी जैन
राष्ट्रीय अध्यक्ष, चेन्नई

श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस
नई दिल्ली
के अंतर्गत संचालित सेवारत योजनाएँ

- *जीवन प्रकाश योजना*

- *मानव सेवा योजना*

- *जीव दया योजना*

- *ज्ञान प्रकाश योजना*

- *वैय्यावच्च योजना*

- *अल्पसंख्यक योजना*

- *विहारधाम योजना*

श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघीय पदाधिकारी मुनिराज

श्री सीमन्धर स्वामिने नमः **श्री महावीराय नमः**

जय आत्म	जय आनन्द	जय देवेन्द्र	जय शिव

युगप्रधान आचार्य सम्राट पूज्य श्री शिव मुनि जी महाराज

युवाचार्य श्री महेन्द्र ऋषि जी महाराज

उपाध्याय मण्डल

श्री विशाल मुनि जी म. 'वाचनाचार्य'
श्री रमेश मुनि जी महाराज
श्री जितेन्द्र मुनि जी महाराज
श्री प्रवीण ऋषि जी महाराज
श्री रवीन्द्र मुनि जी महाराज
श्री गौतम मुनि जी महाराज 'प्रथम'

प्रवर्तक-मण्डल

श्री कुंदन ऋषि जी महाराज
श्री रतन मुनि जी महाराज
श्री प्रकाश मुनि जी महाराज 'निर्भय'
श्री राजेन्द्र मुनि जी महाराज
श्री सुकन मुनि जी महाराज
श्री विजय मुनि जी महाराज
श्री सुभद्र मुनि जी महाराज
श्री आशीष मुनि जी महाराज

प्रमुख मंत्री

श्री शिरीष मुनि जी महाराज

मंत्री

श्री कमल मुनि जी महाराज

सलाहकार

श्री सुमति प्रकाश जी महाराज
श्री सुरेश मुनि जी महाराज 'शास्त्री'
श्री तारक ऋषि जी महाराज
श्री रमणीक मुनि जी महाराज
श्री दिनेश मुनि जी महाराज
श्री विनय मुनि जी महाराज 'भीम'
श्री राम मुनि जी महाराज 'निर्भय'

प्रवर्तिनी

श्री चंदना जी महाराज
श्री ज्ञानप्रभा जी महाराज
श्री सरिता जी महाराज
श्री सुप्रभा जी महाराज
श्री सुधा जी महाराज

भूमिका

'स्वाध्याय' आत्मा की खुराक है। अन्न-आदि आहार से जैसे देह पुष्ट होती है, उसी प्रकार दैनिक और नियमित स्वाध्याय से आत्मा पुष्ट और सबल होती है। वस्तुतः स्वाध्याय वह प्रकिया है जिससे व्यक्ति आत्म-गुणों और आत्म-ऊर्जाओं से परिचित होता है। आत्म-शक्तियों को पहचानने वाला व्यक्ति किन्हीं भी दैहिक, प्राकृतिक या दैविक आपदाओं से त्रस्त या पराजित नहीं होता है। सुख या दुख, हानि या लाभ, सफलता या असफलता - हर परिस्थिति में वह आनंदित रहता है। यथार्थतः आनंदित रहना ही जीवन की सफलता है।

स्वाध्याय की वेला में स्वाध्यायी अरिहंतों, सिद्धों, साधकों आदि आप्तपुरुषों का स्मरण करता है। उन आप्त-पुरुषों की महिमाएं, उनकी अर्हताएं और योग्यताएं स्वाध्यायी के ज्ञान-नेत्रों के समक्ष प्रकट होती हैं। आप्त-पुरुषों की अर्हताओं को पुनः-पुनः स्मरण करने से उनका चिन्तन, अनुचिन्तन और अनुवर्तन करने से, वे अर्हताएं स्वाध्यायी साधक में साकार होने लगती हैं। 'स्वाध्याय' को यदि स्वभाव बना लिया जाए तो सिद्धि का सोपान दूर नहीं रह जाता है।

प्रायः सभी मतों, पंथों, सम्प्रदायों में स्वाध्याय की अपनी-अपनी विधियां हैं। विविध स्तुति-स्तोत्र आदि सामग्रियां हैं। इस संदर्भ में जैन-धर्म-परम्परा में स्वाध्याय-संबंधी श्रुत और स्तोत्रों-स्तवनों का विशाल

कोष उपलब्ध है। बत्तीस अगामों के रूप में तीर्थंकर महावीर के वचन उपलब्ध हैं। मध्यकालीन श्रुतधरों और आचार्यों द्वारा रचित स्तोत्रों, स्तवनों, स्तुतियों का विशाल वाङ्मय हमारे पास है। जैन धर्म में जैसी श्रुत-सम्पदा उपलब्ध है वैसी अन्यत्र कम दिखाई देती है। इसका कुल कारण यह है कि जैन धर्म में 'स्वाध्याय' को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। स्वाध्याय ही वह कीमिया है जो मोक्ष का पथ प्रशस्त करती है।

'स्वाध्याय' प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का दैनिक अंग बने इसके लिए हमारे गुरुजन समाज को प्रेरित करते रहते हैं। अधिकांश भाई-बहन किसी न किसी रूप में स्वाध्याय करते भी हैं। अपने गुरुजनों की प्रेरणाओं को व्यापक रूप देने के लिए श्री ऑल इंडिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस निरन्तर प्रयत्नशील रही है। उसी के अन्तर्गत जैन कॉन्फ्रेंस ने स्वाध्याय के प्रचार-प्रसार को एक मिशन के रूप में लिया है। उसी मिशन का एक लघु-सा प्रारूप है प्रस्तुत स्वाध्याय पुस्तिका। इस पुस्तिका में जिन-वचनों, प्रवचनों, पाठों, स्तोत्रों, स्तवनों का संकलन किया गया है, अतः इसका नाम 'जय जिनवाणी' निर्धारित किया गया है। साधना और आत्मा की उपासना से संबंधित समाज में सर्वाधिक प्रचलित स्वाध्याय-सामग्री को इस पुस्तक में संकलित किया गया है। पूर्व में भी अनेक स्वाध्याय-पुस्तिकायें समाज में उपलब्ध हैं। उनमें कई पुस्तिकायें लघुरूप में हैं, कई विशाल आकार में भी हैं। हमने मध्यम आकार को चुना है और यह भी लक्ष्य रखा है कि कोई भी आवश्यक सामग्री शेष न रहे।

इस पुस्तिका के संकलन में अनेक स्वाध्याय-पुस्तकों से सामग्रियां ली गई हैं। उन पुस्तिकाओं के संयोजकों/प्रकाशकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

ध्यानयोगी, जैन धर्म दिवाकर आचार्य सम्राट परम पूज्य डॉ. श्री शिव मुनि जी म., परम पूज्य युवाचार्य श्री महेन्द्र ऋषि जी म., संघसेतु परम पूज्य उपाध्याय श्री रवीन्द्र मुनि जी म. एवं सभी प्रमुख साधु-साध्वियों का आशीष और दिशा-दर्शन, इस पुस्तक के साथ जुड़ा हुआ है। इस कृपाभाव के लिये हम सभी पूज्यवरों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।

श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री आनंदमल जी छल्लाणी जैन, कार्याध्यक्ष श्री अशोक मेहता जी जैन, राष्ट्रीय प्रमुख मार्ग-दर्शक श्री सुभाष ओसवाल जी जैन के मार्गदर्शन एवं श्रुत संर्वधन समिति के सभी सदस्य श्री रमेश जी भण्डारी जैन-इन्दौर, डॉ. अमित राय जी जैन-बड़ौत, श्री दिनेश जी जैन-चांदनी चौक-दिल्ली, श्री अतुल जी जैन-दिल्ली एवं श्री प्रशांत महेश जी जैन गंधरवाल-दिल्ली के अमूल्य सुझावों से यह पुस्तिका समृद्ध हुई है। सभी के प्रति हार्दिक धन्यवाद।

इस प्रकाशन का लक्ष्य है—चतुर्विध संघ में स्वाध्याय का अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार और प्रचलन हो। पुस्तक और स्वाध्याय-सामग्री संबंधी पाठकों के सुझाव आमंत्रित हैं। आगामी संस्करण में सुझावों के अनुरूप संशोधन-परिवर्धन किया जायेगा।

सादर शुभेच्छु :

—राजीव जैन (सी.ए.)

राष्ट्रीय कार्यकारी महामंत्री

श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस

संयोजकीय-विमर्श

'श्री ऑल इण्डिया श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेंस' अखिल भारतीय स्तर पर स्थानकवासी जैन परम्परा की एक प्रतिष्ठित और प्राचीन संस्था है। शताधिक वर्ष पूर्व इस संस्था का गठन हुआ। लक्ष्य था–विभिन्न सम्प्रदायों में विभाजित स्थानकवासी साधु-संघों और श्रावक-संघों को एक सूत्र में बद्ध करना। इस संस्था ने अपने इस लक्ष्य को सफलतापूर्वक हस्तगत किया। परिणामस्वरूप अनेक संप्रदायों का विलय हुआ और सन् 1952 में सादड़ी की पुण्य भूमि पर महान श्रमण संघ का उदय हुआ। 'श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघ' का आज जैन जगत में गौरवशाली स्थान है। समय-समय पर महान आचार्यों ने इस महान संघ को अपने कुशल नेतृत्व से सींचा और पल्लवित-पुष्पित किया। वर्तमान में चतुर्थ पट्टधर जैन धर्म दिवाकर आचार्य सम्राट् पूज्य श्री शिव मुनि जी महाराज के नेतृत्व में महान श्रमण संघ आध्यात्मिक क्षेत्र में शिखरों का स्पर्श कर रहा है।

श्री ऑल इण्डिया जैन कान्फ्रेंस ने संगठन से आगे बढ़कर सामाजिक उन्नयन के अन्य क्षेत्रों में कदम बढ़ाए। शिक्षा, चिकित्सा, साधर्मी-सहयोग से लेकर राष्ट्र और विश्व मंगल के कई अभियान इस संस्था के तत्वावधान में गतिशील हैं।

जैन कान्फ्रेंस के निर्देशन में दशकों पूर्व अर्वाचीन और प्राचीन साहित्य के प्रकाशन और प्रचार-प्रसार का मिशन प्रारंभ हुआ था। उसके अंतर्गत कई महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन भी हुआ जिन्हें जैन-जैनेतर जगत में बहुमान प्राप्त हुआ। उसी मिशन को विगत दिनों वर्तमान राष्ट्रीय

अध्यक्ष श्री आनन्द मल जी छल्लाणी जैन के दिशा-दर्शन में त्वरापूर्वक आगे बढ़ाने का संकल्प लिया गया। फलस्वरूप 'श्रुत-संवर्द्धन समिति' का गठन किया गया।

समिति के दिशा-निर्देशन में निम्न उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं-

- स्थानकवासी परम्परा के प्राचीन जैन पाण्डुलिपि-भण्डारों का वर्गीकरण, केन्द्रीय रूप से संग्रहण-संरक्षण, सूचिकरण एवं डिजिटाइजेशन करना तथा केन्द्रीय अभिलेखागार की स्थापना करना।
- स्थानकवासी परम्परा के मान्य आगमों एवं साहित्य का प्रकाशन, वितरण एवं केन्द्रीय रूप से संदर्भ पुस्तकालय समायोजित करना।
- साधु एवं श्रावकों के उपयोगी धार्मिक उपकरणों व स्थानक-वासी जैन साहित्य की केन्द्रीय कार्यालय पर उपलब्धता एवं राष्ट्र स्तर पर वितरण।

श्रुत-संवर्धन समिति के मार्गदर्शन में उपरोक्त कार्य प्रारंभ कर दिए गए हैं। इसके अंतर्गत उपाध्याय प्रवर श्री रवीन्द्र मुनि जी म. के मार्गदर्शन में संचालित पुप्फ भिक्खु मुनि श्री फूलचन्द जैन शोध संस्थान, गुरुग्राम (हरियाणा), मेरे द्वारा सन् 1994 में संस्थापित शहजाद राय शोध संस्थान, बड़ौत (उ.प्र.) में संग्रहित प्राचीन दुर्लभ पाण्डुलिपियों, दस्तावेजों एवं उत्तर भारत प्रवर्तक श्री सुभद्र मुनि जी म. के द्वारा प्रेरित महाप्राण मुनि श्री मायाराम जैन शोध संस्थान, पीतमपुरा, दिल्ली के दुर्लभ पाण्डुलिपि संग्रह के डिजिटाइजेशन का कार्य सम्पन्न हो चुका है। करीब पांच लाख प्राचीन पृष्ठों की डिजिटल कॉपी तैयार की गई है। इस महत्वपूर्ण कार्य का द्वितीय चरण स्कैन की गई पाण्डुलिपियों के सूचिकरण का कार्य

गणी श्री वैराग्यरति विजय जी महाराज के कुशल मार्गदर्शन में श्रुत-भवन संस्थान पूना के विद्वान विशेषज्ञों द्वारा युद्धस्तर पर किया जा रहा है।

प्राचीन आगम-ग्रंथों के प्रकाशन का कार्य भी प्रारंभ किया जा चुका है। इस दिशा में सर्वप्रथम संस्था द्वारा श्री आवश्यक सूत्र (श्रमण प्रतिक्रमण) एवं जय-जिनवाणी नामक स्वाध्याय-पुस्तक को प्रकाशित किया जा रहा है। 'जय जिनवाणी' नामक प्रस्तुत पुस्तक में सामायिक साधना के साथ-साथ हिन्दी, संस्कृत और प्राकृत भाषा में रचित समाज में बहुप्रचलित स्तवनों, स्तोत्रों और स्तुतियों का संकलन किया गया है। मध्यम आकार में संकलित यह स्वाध्याय-पुस्तक, मैं समझता हूं कि चतुर्विध संघ में अपना प्रमुख स्थान बनाएगी।

समाज में स्वाध्याय और ज्ञान-ध्यान का अधिकाधिक प्रचार और प्रसार हो इसी मंगल-मनीषा के साथ–

–डॉ. अमित राय जैन, बड़ौत

(संयोजक : श्रुत संवर्धन समिति)

मो.: 9837394448, 9997889995

e-mail : amitraijain78@gmail.com

श्रुत-संवर्धन समिति के माननीय सदस्य-गण

- श्री रमेश भण्डारी जैन, इन्दौर (चेयरमैन)
- डॉ. अमित राय जैन, बड़ौत (संयोजक)
- श्री दिनेश जैन, चांदनी चौक, दिल्ली
- श्री अतुल जैन, दिल्ली
- श्री प्रशांत महेश गंधरवाल जैन, दिल्ली

अनुक्रमणिका

प्रथम विभाग : हिंदी
स्तुति - स्तवन - स्तोत्र आदि

- ✦ आदि-मंगल 3
- ✦ श्री सिद्ध स्तुति 4
- ✦ सिद्ध स्तवन 6
- ✦ सिद्ध परमात्मा की स्तुति 6
- ✦ सिद्ध अर्हंत के प्रति 7
- ✦ श्री नवकार-स्तुति 8
- ✦ नवकार मन्त्र की महिमा 10
- ✦ पंच परमेष्ठी-महिमा 10
- ✦ पैंसठिया यंत्र के अंतर्गत तीर्थंकर स्तुति 11
- ✦ परमेष्ठि-वन्दना 12
- ✦ पैंसठिया यंत्र का छन्द 13
- ✦ मंगल-माला 14
- ✦ भगवान् श्री शांतिनाथ जी का स्तवन 15
- ✦ श्री शान्तिनाथ स्तुति 16
- ✦ श्री शान्तिनाथ जी का स्तवन 16
- ✦ चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तुति 17

- ✦ पार्श्व–प्रार्थना 20
- ✦ श्री पार्श्वनाथ–स्तवन 20
- ✦ श्री पार्श्वनाथ–स्तुति 21
- ✦ सिद्धि के सोपान 22
- ✦ श्री पार्श्वनाथ स्तुति 26
- ✦ महावीर–स्तवन 26
- ✦ वीर जिन–स्तुति 27
- ✦ श्री महावीर स्वामी का छंद 28
- ✦ महावीर के जन्म की बधाई 28
- ✦ श्री गुरु गौतम स्वामी जी की स्तुति 30
- ✦ लब्धिधारी श्री गौतम स्वामी का स्तवन 31
- ✦ सोलह सती का छन्द 32
- ✦ मेरी भावना 32
- ✦ बारह भावना 34
- ✦ भक्तामर स्तोत्र–भाषा 37
- ✦ कल्याणमन्दिर–स्तोत्र भाषा 44
- ✦ बड़ी साधु–वन्दना 49
- ✦ लघु साधु वन्दना 60
- ✦ आत्मसिद्धि 61
- ✦ अमूल्य तत्त्व–विचार 74
- ✦ चौदह स्वप्न का स्तवन 75

- ✦ श्री दीपावली का स्तवन 76
- ✦ रानी पद्मावती की ढाल 78
- ✦ अमृतमय उपदेश धारा 81
- ✦ विनय 82
- ✦ गुरुदेव 83
- ✦ धर्म मंगल 85
- ✦ चार शरण 86
- ✦ प्रार्थना 87
- ✦ नाम–महिमा 87
- ✦ आलोयणा 88
- ✦ श्री बृहदालोयणा 89
- ✦ जय अचलासन 113
- ✦ मंगल–धुन 113
- ✦ जैन विश्वगान 114

द्वितीय विभाग :
सामायिक-साधना, व्रत - नियम - प्रत्याख्यान आदि

- ✦ सामायिक साधना के पाठ 117
- ✦ नमस्कार मंत्र 117
- ✦ गुरु वंदन सूत्र 117
- ✦ अरिहंतो–सम्यक्त्व सूत्र 117

✦ आलोचना सूत्र 118
✦ तस्स उत्तरी का पाठ 118
✦ लोगस्स का पाठ 119
✦ सामायिक लेने का पाठ 119
✦ नमोत्थुणं का पाठ 120
✦ सामायिक पारने का पाठ 120
✦ सामायिक लेने की विधि 121
✦ सामायिक के वर्जित दोष 122
✦ क्षमा-याचना 125
✦ संकल्प 125
✦ चौबीस तीर्थंकरों के नाम 127
✦ बीस विहरमान तीर्थंकरों के नाम 128
✦ ग्यारह गणधरों के नाम 128
✦ सोलह महासतियों के नाम 129
✦ प्रत्याख्यान (संकल्प या प्रतिज्ञा) 129
✦ दश-प्रत्याख्यान संकल्प/ प्रतिज्ञायें 130
✦ प्रत्याख्यान पारणा सूत्र 134
✦ पौषध व्रत लेने का पाठ 138
✦ पौषध व्रत पारने का पाठ 138
✦ संवर करने का पाठ 139
✦ सप्त-कुव्यसन-त्याग 139
✦ श्रावक/श्राविका जी के चौदह नियम 140

✦ मुनिराज के तीन मनोरथ 141
✦ श्रावक के तीन मनोरथ 142
✦ परमेष्ठी-वन्दना 143
✦ माला 150
✦ कर-माला आवर्त्त 151
✦ पटनावर्त्त 152
✦ सिद्धावर्त्त 153
✦ क्षमा याचना 154
✦ आनुपूर्वी-जप 154
✦ शान्ति पाठ 166
✦ अंतिम संलेखना-संथारा समाधि-मरण 167
✦ अणगार-संलेखना 170
✦ बड़ी संलेखना-पाठ 172

तृतीय विभाग : प्राकृत
स्तुति - स्तोत्र - स्तवन आदि

✦ श्री मंगल सूत्र 177
✦ श्री नमस्कार सूत्र 177
✦ श्री चतुर्विंशति-स्तव-सूत्र 178
✦ सिद्ध-अर्हन्त-वन्दना 179
✦ महामंगल 180

✦ उपसर्गहर स्तोत्र 180
✦ श्री उपसर्गहर-स्तोत्र बड़ा 182
✦ श्री शांतिकर स्तोत्र 183
✦ श्री तिजयपहुत्त स्तोत्र 185
✦ श्री सर्वतोभद्र यंत्र 186
✦ श्री नमिऊण स्तोत्र 187
✦ श्री नवपद स्तुति 192
✦ श्री आदिदेव स्तवन 193
✦ श्री महावीर-स्तोत्र 194
✦ वीरत्थुई 196
✦ नमि-पव्वज्जा 199
✦ दशवैकालिक सूत्र के दो अध्ययन 205
✦ श्री नान्दी मंगल सूत्र 207
✦ श्री गौतम स्वामी वर्णन 208
✦ सुभाषित 209
✦ मंगल पाठ 212

चतुर्थ विभाग : संस्कृत स्तुति - स्तोत्र - स्तवन आदि

✦ मंगल-सूत्र 215
✦ श्री चतुर्विंशति-जिन-स्तोत्र 218

✦ श्री ऋषभदेव स्तोत्र 219
✦ श्री ऋषभ जिन स्तवन 220
✦ सर्वजिन स्तोत्र 221
✦ श्री नेमिजिन-स्तवनम् 221
✦ श्री चिन्तामणि-पार्श्वनाथ-स्तोत्र 222
✦ श्री पार्श्वनाथ-स्तोत्र 224
✦ श्री महावीराष्टक-स्तोत्र 225
✦ श्री महावीर-स्तोत्र 226
✦ श्री भक्तामर स्तोत्र 228
✦ श्री कल्याण-मंदिर-स्तोत्र 236
✦ श्री वर्द्धमान भक्तामर-स्तोत्रम् 244
✦ श्री परमात्म-द्वात्रिंशिका 253
✦ श्री परमानन्द-पंचविंशतिका 256
✦ श्री जिन-पंजर स्तोत्र 258
✦ श्री वज्रपंजर-स्तोत्र 261
✦ नमस्कार स्तवन 262
✦ श्री गौतम स्वामी स्तोत्र 263
✦ सोलह सती स्तोत्र 264
✦ श्री रत्नाकर-पंचविंशतिका 265
✦ श्री घंटाकर्ण स्तोत्र 268
✦ त्रिकाल चतुर्विंशति जिन-स्तवन 268

- ✦ श्री ग्रह-शान्ति-स्तवन 270
- ✦ श्री पद्मावती अष्टक स्तोत्र 271
- ✦ श्री लघुशान्ति-स्तव 273
- ✦ श्री बृहत् शान्ति स्तोत्र 275
- ✦ श्री ऋषिमण्डल स्तोत्रम् 280
- ✦ अंतिम मंगल 286

पंचम विभाग : परिशिष्ट
साधना, आराधना और विशिष्ट जानकारियाँ

- ✦ महामन्त्र नवकार कल्प 289
- ✦ भक्तामर स्तोत्र की साधना 289
- ✦ कल्याण-मंदिर की साधना 290
- ✦ तपश्चरण की विधि 291
- ✦ अष्टकर्म सूदन तप 292
- ✦ रोहिणी तप 293
- ✦ वर्धमान आयंबिल तप 293
- ✦ ज्ञान-पंचमी तप 294
- ✦ पौष दशमी तप 294
- ✦ पंचरंगी तप 294
- ✦ पाक्षिक तप 295
- ✦ छहमासी तप 295

- ✦ वर्षी तप 296
- ✦ अकषाय तप 296
- ✦ णमोक्कार मंत्र तप 296
- ✦ नव-पद की ओली 297
- ✦ चौबीस तीर्थंकर कल्याणक तप 298
- ✦ तप करने का फल 307
- ✦ नवाक्षरी मन्त्र 308
- ✦ उपसर्गहर स्तोत्र का कल्प 316
- ✦ संतिकर स्तोत्र की साधना 317
- ✦ तिजय पहुत्त स्तोत्र की साधना 318
- ✦ श्री सर्वतोभद्र यंत्र 318
- ✦ नमिऊण स्तोत्र की साधना 319
- ✦ दीपावली का जप 320
- ✦ तिथि आदि का विचार 320
- ✦ सिद्धि योग 321
- ✦ मृत्यु योग 322
- ✦ सूर्य-दग्धा तिथि 322
- ✦ चन्द्र-दग्धा तिथि 322
- ✦ अमृत-सिद्धि योग 323
- ✦ विजय-योग 323
- ✦ चन्द्र-विचार 323

- ✦ दिशा–शूल विचार 324
- ✦ सब कामों में वर्जित ज्वालामुखी योग 324
- ✦ दिशाओं में वर्जित नक्षत्र 325
- ✦ किस दिशा में कौन–सा वार लाभप्रद 325
- ✦ छींक विचार 325
- ✦ स्वर–विज्ञान 326
- ✦ दिन का चौघड़िया 327
- ✦ रात्रि का चौघड़िया 328
- ✦ दिल्ली.....सूर्योदय–सूर्यास्त सारिणी 329
- ✦ ॐ जय महावीर प्रभो (आरती) 332

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रथम विभाग : हिन्दी

स्तुति – स्तवन – स्तोत्र आदि

आदि-मंगल

मंगलमय अर्हंत जगत-गुरु, मंगलमय श्रीसिद्ध प्रभु।
मंगलमय मुनि, साधु तपोधन, मंगलमय जिन - धर्म विभु।।

अति उत्तम अर्हंत जगत-गुरु, अति उत्तम श्री सिद्ध प्रभु।
साधु मुनीश्वर अति परमोत्तम, अति उत्तम जिन-धर्म विभु।।

शरण प्राप्त कर श्री अर्हन् का, शरण योग्य श्री सिद्ध प्रभु।
त्राण, शरण श्री साधु मुनीश्वर, शरण योग्य जिन-धर्म विभु।।

मंगलमय ये चार समझ मन, अति उत्तम चारों जानो।
इन चारों का शरण प्राप्त कर, जीवन धन्य सदा मानो।।

चार शरण दुख-हर सुख-कर्ता, बांधव और शरण नहीं कोई।
इनका आदर करें भव्य - जन, अजर अमर पद पावे सोई।।

मंगलमय भगवान् वीर हैं, मंगलमय गौतम स्वामी।
मंगलमय श्री स्थूलभद्रादिक, मंगल जैन - धर्म नामी।।

अति उत्तम भगवान् वीर हैं, अति उत्तम गौतम स्वामी।
अति उत्तम श्री स्थूलभद्रादिक, उत्तम जैन - धर्म नामी।।

शरण-योग्य भगवान् वीर हैं, शरण-योग्य गौतम स्वामी।
शरण-योग्य श्री स्थूलभद्रादिक, शरणा जैन-धर्म नामी।।

अर्हंत जय जय, सिद्ध प्रभु जय जय।
साधु जीवन जय जय, जिन-धर्म जय जय।।
अर्हंत मंगलं, सिद्ध प्रभु मंगलं।
साधु - जीवन मंगलं, जिन - धर्म मंगलं।।
अर्हंत उत्तमं, सिद्ध प्रभु उत्तमं।
साधु-जीवन उत्तमं, जिन-धर्म उत्तमं।।

अर्हंत शरणं, सिद्ध प्रभु शरणं।
साधु-जीवन शरणं, जिन-धर्म शरणं।।

चार शरण दुख-हरण जगत् में, और न शरणा कोई होगा।
जो भव्य प्राणी करे आचरण, उसका अजर-अमर पद होगा।।

परिहित निरत सभी जन होवें, हो सब जगती का कल्याण।
दोष नाश हों, सुख पावें सब, अखिल लोक का होवे त्राण।।

○○○

श्री सिद्ध स्तुति

तुम तरण-तारण दुख-निवारण, भविक जीव आराधनं।
श्री नाभिनन्दन जगत-वन्दन, नमो सिद्ध निरंजनं।।1।।

जगत-भूषण विगत-दूषण, प्रणव प्राण निरूपकं।
ध्यान-रूप अनूप उपमं, नमो सिद्ध निरंजनं।।2।।

गगन - मंडल मुक्ति-पदवी, सर्व ऊर्ध्व - निवासनं।
ज्ञान - ज्योति अनन्त राजे, नमो सिद्ध निरंजनं।।3।।

अज्ञाननिद्रा विगत - वेदन, दलित - मोह निरायुषं।
नाम - गोत्र - निरंतरायं, नमो सिद्ध निरंजनं।।4।।

विकट क्रोधा मान योधा, माया - लोभ - विसर्जनं।
राग - द्वेष - विमर्द अंकुर, नमो सिद्ध निरंजनं।।5।।

विमल केवल - ज्ञान लोचन, ध्यान - शुक्ल - समीरितं।
योगिना अतिगम्य रूपं, नमो सिद्ध निरंजनं।।6।।

योग ने समोसरण मुद्रा, परिपल्यंक - आसनं।
सर्व दीसे तेज - रूपं, नमो सिद्ध निरंजनं।।7।।

जगत जिनके दास दासी, तास आस निरासनं।
चन्द्र पै परमानन्द - रूपं, नमो सिद्ध निरंजनं।।8।।

स्व-समय समकित दृष्टि जिनकी, सोय योगी अयोगिकं।
देख तामां लीन होवे, नमो सिद्ध निरंजनं।।9।।

चन्द्र सूर्य दीप-मणि की, ज्योति येन उल्लंघितं।
ते ज्योति थी अपरम ज्योति, नमो सिद्ध निरंजनं।।10।।

तीर्थ सिद्धा अतीर्थ सिद्धा, भेद पंच-दशाधिकं।
सर्व - कर्म - विमुक्त चेतन, नमो सिद्ध निरंजनं।।11।।

एक माँही अनेक राजे, अनेक माँही एककं।
एक अनेक की नांहि संख्या, नमो सिद्ध निरंजनं।।12।।

अजर अमर अलख अनंत, निराकार निरंजनं।
परब्रह्म ज्ञान अनंत-दर्शन, नमो सिद्ध निरंजनं।।13।।

अतुल सुख की लहर में, प्रभु लीन रहें निरंतरं।
धर्मध्यान थी सिद्ध - दर्शन, नमो सिद्ध निरंजनं।।14।।

ध्यान - धूपं मनः - पुष्पं, पंचेन्द्रिय हुताशनं।
क्षमा - जाप संतोष -पूजा, पूजो सिद्ध निरंजनं।।15।।

तुम मुक्ति-दाता कर्म-घाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थ - नन्दन जगत-वन्दन, महावीर जिनेश्वरं।।16।।

ooo

सिद्ध स्तवन

सेवो सिद्ध सदा जयकार, जासे होवे मंगलाचार।।टेक।।

अज-अविनाशी अगम अगोचर, अमल अचल अविकार।
अन्तर्यामी त्रिभुवन-स्वामी, अमित शक्ति -भण्डार।।1।।

कर पणट्‌ठ कम्मट्‌ठ अट्‌ठ गुण-युक्त मुक्त संसार।
पायो पद परमेष्ठी तास पद, बंदूं बारं-बार।।2।।

सिद्ध प्रभु का सुमरण जग में, सकल सिद्धि दातार।
मन-वांछित पूरण सुर-तरुसम, चिन्ता-चूरण-हार।।3।।

जपे जाप योगीश रात-दिन, ध्यावे हृदय मंझार।
तीर्थंकर हू प्रण में उनको, जब होवे अणगार।।4।।

सूर्योदय के समय भक्ति-युत, स्थिर चित्त दृढ़ता धार।
जपे 'सिद्ध' यह जाप तास घर, होवे ऋद्धि अपार।।5।।

श्री सिद्धस्तुति पढ़े भाव से, प्रतिदिन जो नर-नार।
सो दिव शिव सुख पावे निश्चय, बना रहे सरदार।।6।।

माधव मुनि कहे सकल संघ में, बढ़े हमेशा प्यार।
विद्या-विनय-विवेक-समन्वित, पावे प्रचुर प्रचार।।7।।

○○○

सिद्ध परमात्मा की स्तुति

जय हे जय हे जय भगवान्।
अजर अमर अखिलेश निरंजन, जयति सिद्ध भगवान्।।

1. अगम अगोचर तू अविनाशी, निराकार निर्भय सुखराशी।
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निष्कलंक निष्काम।।

2. कर्म न काया, मोह न माया, भूख न तिरषा, रंक न राया।
एक स्वरूप अरूप अगुरुलघु, निर्मल ज्योति महान्।।

3. हे अनन्त ! हे अन्तर्यामी ! अष्टगुणों के धारक स्वामी।
तुम बिना दूजा देव न पाया, त्रिभुवन में अभिराम।।

4. गुरु निर्ग्रन्थों ने समझाया, सच्चा प्रभु का रूप बताया।
तुझ में मुझ में भेद न पाऊँ, ऐसा हो सन्धान।।

5. 'सूर्यभानु' है शरण तुम्हारी, प्रभु मेरी करना रखवारी।
अब तुम में ही मिल जाऊँ मैं, ऐसा दो वरदान।।

○○○

सिद्ध अर्हंत के प्रति

सिद्ध अर्हंत में मन रमाते चलें, सर्व कर्मों के बन्धन हटाते चलें।।ध्रुव।।

इन्द्रियों के न घोड़े विषय में अड़ें।
जो अड़ें भी तो संयम के कोड़े पड़ें।
तन के रथ को सुपथ पर चलाते चलें।। सिद्ध 1।।

संत निर्ग्रन्थ का ध्यान धरते चलें।
पाप तज करके सब काम करते चलें।
सद्गुणों का परम धन कमाते चलें।। सिद्ध 2।।

लोग कहते हैं भगवान् आते नहीं।
मात मरुदेवी जैसे बुलाते नहीं।
चन्दना जैसी दृढ़ता दिखाते चलें।। सिद्ध 3।।

लोग कहते हैं भगवान् भाते नहीं।
पुद्‌गलासक्ति माया मिटाते नहीं।
आत्मभावों की ध्वनियाँ गुंजाते चलें।। सिद्ध 4।।

दुःख में तड़पें नहीं, सुख में फूलें नहीं।
प्राण जाएँ मगर धर्म भूलें नहीं।
प्रेम-भक्ति के आँसू बहाते चलें।। सिद्ध 5।।

वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी।
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी।
ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलें।। सिद्ध 6।।

सूर्य या चन्द्र जब तक चमकता रहे।
तेज सच्चे धर्म का दमकता रहे।
जैन शासन रसिक जग बनाते चलें।। सिद्ध 7।।

ooo

श्री नवकार-स्तुति

सुख कारण भवियण, सुमरो नित नवकार।
जिन शासन आगम, चौदह पूर्वनो सार।।

इण मंत्रनी महिमा, कहेतां न लहिए पार।
सुरतरु जिम चिंतित, वांछित फल दातार।।1।।

सुर दानव मानव, सेवा करें कर जोड़।
भू-मंडल विचरें, तारे, भवियण कोड़।।
सुर छन्दे विलसें, अतिशय जास अनन्त।
पद पहिले नमिये अरिगंजन अरिहन्त।।2।।

जे पनरे भेदे, सिद्ध थया भगवन्त।
पंचम गति पहुँचे, अष्टकर्म करि अन्त।।
कल अकल स्वरूपी, पंचानन्तक देह।
जिनवर-पद प्रणमुं, बीजे पद वली एह।।3।।

गच्छ भार धुरंधर, सुन्दर शशिहर शोभ।
कर सारण वारण, गुण छत्री से थोम।।
श्रुत जाण शिरोमणि, सागर जिम गंभीर।
तजे पद नमिये, आजारणज गुणधीर।।4।।

श्रुतधर गुण-आगर, सूत्र भणावें सार।
तप विधि संयोगे, भाखें अर्थ विचार।।
मुनिवर गुण-युक्ता, कहिये ते उवज्झाय।
पद चौथे नमिये, अह-निश तेना पाय।।5।।

पंचाश्रव टालें, पालें पंचाचार।
तपसी गुण-धारी, वारें विषय-विकार।।
त्रस-थावर-पीहर, लोक माहिं जे साध।
त्रिविधे ते प्रणमुं, परमारथ जिण लाध।।6।।

अरि करि हरि सायन, डायन भूत बेताल।
सब पाप पणासे, वरतें मंगल-माल।।
इण सुमर्‌याँ संकट, दूर टलें तत्काल।
इम जपे जिनप्रभ सूरी शिष्य रसाल।।7।।

नवकार मन्त्र की महिमा

नवकार मंत्र है महामंत्र, इस मंत्र की महिमा भारी है।
आगम में कथी गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी है।।ध्रु।।

अरिहंताणं पद पहला है, अरि आर्ति दूर भगाता है।
सिद्धाणं सुमिरण करने से, मनवांछित सिद्धि पाता है।।
आयरियाणं तो अष्टसिद्धि, नवनिधि के भण्डारी हैं।।1।।

उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर हर, ज्ञान प्रकाश फैलाता है।
सव्व साहूणं सब सुखदाता, तन-मन को स्वस्थ बनाता है।।
पद पांचों के सुमिरन करने से, मिट जाती सकल बीमारी है।।2।।

श्रीपाल सुदर्शन मयणरेया, जिसने भी जपा आनन्द पाया।
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया।।
मन नन्दनवन में रमण करे, यह ऐसा मंगलकारी है।।3।।

नित्य नई बधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती है।
'अशोक मुनि' जय-विजय मिले, शांति प्रसन्नता बढ़ जाती है।।
सन्मान मिले सत्कार मिले, भव जल से नैया तारी है।।4।।

○○○

पंच परमेष्ठी-महिमा

(तर्ज : काहे मचावे शोर पपीहा .....)

जय जय जय जयकार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।ध्रु.।।

जय जय भविजन बोध विधाता, जय जय आतम शुद्धि विधाता।
जय भव भंजनहार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

जय सब संकट चूरण कर्त्ता, जय सब आशा पूरण कर्त्ता।
जय जग मंगलकार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

तेरा जाप जिन्होंने कीना, परमानन्द उन्होंने लीना।
कर गये खेवा पार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

लीना शरणा सेठ सुदर्शन, शूली से बन गया सिंहासन।
जय जय करे नर नार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

द्रौपदी चीर सभा में हरना, तब तेरा ही लीना शरणा।
बढ़ गया चीर अपार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

सोमा ने तुम सुमिरन कीना, सर्प फूल-माला कर दीना।
वर्ते मंगलाचार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

अमर शरण में संप्रति आया, कर्मों के दुःख से घबराया।
शीघ्र करो उद्धार परमेष्ठी, जय जय जय जयकार।।

ooo

पैंसठिया यंत्र के अंतर्गत तीर्थंकर स्तुति

चौबीस जिनेश प्रणमुं हमेश, अघ अशिव क्लेश-भवभय हरणम्।
जपो जय जिनंद वरते आनंद, सुखशांतिवृन्द मंगलकरणम्।।ध्रुव।।

शिवादेवी-नंद आनन्द-कन्द, नेमि जिनंद संभव स्वामी।
सुविधिकृपाल, धन धर्मपाल, शांतिदयाल अन्तर्यामी।
ज्ञानी अनन्त मुनिसुव्रत कंत, नमि जगन् महंत धारे शरणम्।।
...जपो जय।।1।।

अरह अजित जीत शशिप्रभु पुनीत, श्री ऋषभ उदित कुल धर्मपति।
स्वामी सुपार्श्व, मुझ पूरो आश, बुद्धि प्रकाश करो विमल मति।

मल्ली से मल्ल, अरि से अटल्ल, तन धनुष पच्चीस हरितवरणम्।।
...जपो जय।।2।।

अरहनाथ धीर, महावीर वीर, हरो सकल पीर दो सुखसाता।
सुमति की आश दो सुमतिनाथ, नमि जोड़ूं हाथ, मांगूं दाता।
भज पद्म कद्म, सब छोड़ छद्म, दो मोक्ष सदम टालो मरणम्।।
...जपो जय।।3।।

वासुपूज्य जाप, शीतल प्रताप, हरो विषय ताप, कर दो शीतल।
श्रेयांस देव, सब करत सेव, कुन्थु कुटेव, कर दूर सकल।
पारसदयाल, करिए निहाल, अभिनन्दनजिन तारण-तरणम्।।
...जपो जय।।4।।

मंत्रों में मंत्र, पैंसठिया यंत्र, तंत्रों में तंत्र सब काज सरे।
तंत्रों में तंत्र नित ध्यान धरें।
करे सकल सिद्धि, यश ऋद्धि वृद्धि, वांछित समृद्धि भंडार भरे।
कहे अमिरिख परचो प्रत्यक्ष, गुरुदेव सीख हिरदे धरणम्।।
...जपो जय।।5।।

०००

परमेष्ठि-वन्दना

नमस्कार हो अर्हंतों को, राग-द्वेष-रिपु-संहारी।
नमस्कार हो श्री सिद्धों को, अजर अमर नित अविकारी।।

नमस्कार हो आचार्यों को, संघ - शिरोमणि आचारी।
नमस्कार हो उपाध्यायों को, अक्षय श्रुतनिधि के धारी।।

नमस्कार हो साधु सभी को, जग में जग-ममता मारी।
त्याग दिये वैराग्य भाव से, भोग-भाव सब संसारी।।

पांच पदों को नमस्कार यह, नष्ट करे कलिमल भारी।
मंगल - मूल अखिल मंगलमय, पाप - भीरु जनता तारी।।

ooo

पैंसठिया यंत्र का छन्द

(चतुर्विंशति जिन स्तवन)

श्री नेमीश्वर संभव स्वाम, सुविधि धर्म शांति अभिराम।
अनन्त सुव्रत नमिनाथ सुजान, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।1।।

अजितनाथ चन्दा प्रभु धीर, आदीश्वर सुपार्श्व गंभीर।
विमलनाथ विमल जग जाण, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।2।।

मल्लिनाथ जिन मंगल-रूप, पंचवीस धनुष सुन्दर स्वरूप।
श्री अरनाथ नमूं वर्धमान, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।3।।

सुमति पद्म प्रभु अवतंस, वासुपूज्य शीतल श्रेयांस।
कुंथु पार्श्व अभिनन्दन भाण, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।4।।

इण परे श्री जिनवर संभारिए, दुख दारिद्र विघ्न निवारिए।
पच्चीसे पैंसठ परमाण, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।5।।

इण भणतां दुःख नावे कदा, जो निज पासे राखो सदा।
धरिये पंच तणु मन ध्यान, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।6।।

श्री जिनवर नामे वांछित मिले, मन-वांछित सहु आशा फले।
'धर्मसिंह मुनि' नाम निधान, श्री जिनवर मुझ करो कल्याण।।7।।

22	3	9	15	16
14	20	21	2	8
1	7	13	19	25
18	24	5	6	12
10	11	17	23	4

चतुर्विंशति जिन (चौबीस जिनेश) यंत्र

विधि–उपरोक्त छन्द का रविपुष्य के दिन 108 बार जप कर सिद्ध करके प्रतिदिन एक बार पाठ करें। इससे ग्रहशांति, विघ्नहरण, संपत्ति लाभ, प्रतिष्ठा प्राप्ति, पुत्र वांछा, गर्भरक्षणादि सर्व मनोरथ पूर्ण होते हैं।

○○○

मंगल–माला

जय जिन ऋषभ अजित जग–स्वामी,
जय जिन संभव शिवगति–गामी।
जय अभिनन्दन सुमति शिवंकर,
जय प्रभु पद्म सुपार्श्व हितंकर।
जय चन्द्रप्रभ सुविधि जिनेशा,
जय शीतल श्रेयांस महेशा।
जय जिन वासुपूज्य भयहारी,
जय प्रभु विमल अमल अविकारी।

जय अनन्त जय धर्म सुनामी,
जय प्रभु शान्ति कुन्थु अर स्वामी।
जय जिन मल्लिनाथ मुनिसुव्रत,
जय नमि नेमि पार्श्वहित-दुर्मत।
जय जिन वर्द्धमान जग-वन्दन,
जय प्रभु सन्मति पाप-निकन्दन।
जय गौतम जय चन्दनबाला,
जय जिन-वाणी मंगल-माला।।

ooo

भगवान् श्री शांतिनाथ जी का स्तवन

प्रातः उठी श्री शांति जिनन्द को, समरण कीजे घड़ी-घड़ी।
संकट कोटि कटें भवसंचित, जो ध्यावे मन भाव धरी।।प्रा.1।।

जनमत पाण जगत दुख टलियो, गलियो रोग असाध मरी।
घट-घट अन्तर् आनन्द प्रगट्यो, हुलस्यो हिवड़ो हर्ष धरी।।प्रा.2।।

आपद व्यन्तर विषम भय भाजें, जैसे पेखत मृग हरी।
एकण चित्ते शुद्ध मन ध्यातां, प्रकटे परिचय परम सिरी।।प्रा.3।।

गले बिलाय भरम के बादल, परमारथ पद पवन करी।
अवर देव एरण्ड कुण रोपे, जो निज मन्दिर केल फली।।प्रा.4।।

प्रभु तुम नाम जग्यो घट अन्तर, तो शुं करिए कर्म अरी।
रतनचन्द शीतलता व्यापी, पापनी लाय कषाय टरी।।प्रा.5।।

ooo

श्री शान्तिनाथ स्तुति

साता कीजो जी, साता कीजो जी।
श्री शान्तिनाथ प्रभु, शिवसुख दीजो जी।।टेक।।

शान्तिनाथ है नाम आपका, सबने साताकारी जी।
तीन भुवन में चावा प्रभुजी, मरी निवारी जी।।1।।

आप सरीखा देव जगत में, और नजर न आवे जी।
त्यागी ने वीतरागी मोटा, मुझ मन भावे जी।।2।।

शान्तिनाथ मन माहीं जपतां, चाहे सो फल पावे जी।
ताप तेजरा दुख दारिद्र, सब मिट जावे जी।।3।।

विश्वसेन राजा के नन्दन, अचलादेवी जाया जी।
गुरुप्रसादे चौथमल्ल कहे, घणा सुहाया जी।।4।।

ooo

श्री शान्तिनाथ जी का स्तवन

तूं धन, तूं धन, तूं धन प्रभु जी, श्री शांति जिनेश्वर स्वामी।
मिरगी रोग निवार कियो प्रभु, सर्व भणी सुख-गामी -तूं०।।1।।

अवतरियो अचला दे उदरे, माता साता पामी।
शांति ही शांति जगत वरताई, सर्व कहें शिर नामी-तूं०।।2।।

तुम प्रसाद जगत सुख पायो, भूलें मूढ हरामी।
कंचन डार काँच चित देवे, ताकी मति में खामी-तूं०।।3।।

अलख निरंजन मुनि मनरंजन, भय भंजन विश्रामी।
शिवदायक, नायक, गुणगायक, पायक है शिवगामी-तूं०।।4।।

रतनचन्द प्रभु कुछ नहीं माँगत, सुनिये अन्तरजामी।
तुम रहवा की ठौर दिखा दो, या में सहु भर पामी-तूं०।।5।।

०००

चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्तुति

दोहा

कल्पबेल चिंतामणि, कामधेनु गुणखान।
अलख अगोचर अगमगति, चिदानंद भगवान्।।1।।

परम ज्योति परमात्मा निराकार अविकार।
निर्भय रूप ज्योति स्वरूप, पूरण ब्रह्म अपार।।2।।

अविनाशी साहिब धनी, चिंतामणि श्री पास।
अरज करूं कर जोड़ के, पूरो वांछित आस।।3।।

मन चिंतित आशा फले, सकल सिद्ध हों काम।
चिंतामणि को जाप जप, चिंता हरे यह नाम।।4।।

तुम सम मेरे को नहीं, चिंतामणि भगवान्।
चेतन की यह विनती, दीजै अनुभव ज्ञान।।5।।

चौपाई

प्राणत देवलोक से आये, जन्म बनारस नगरी पाये।
अश्वसेन कुल मंडन स्वामी, तिहुं जग के प्रभु अंतर्यामी।।6।।

वामा देवी माता के जाये, लंछन नागफणी मणि पाये।
शुभ काया नव हाथ बखाणो, नील वर्ण तन निर्मल जाणो।।7।।

मानव यक्ष सेवें प्रभु पाय, पद्मावती देवी सुख दाय।
इन्द्र-चन्द्र पारस गुण गावें, कल्प-वृक्ष चिंतामणि पावें।।8।।

नित सुमरो चिंतामणि स्वामी, आशा पूरे अन्तर्-यामी।
धन-धन पारस पुरिसादाणी, तुम सम जग में को नहीं नाणी।।9।।

तुमरो नाम सदा सुखकारी, सुख उपजै दु:ख जाय बिसारी।
चेतन को मन तुमरे पास, मन वांछित पूरो प्रभु आस।।10।।

दोहा

ॐ भगवंत चिंतामणि, पार्श्व प्रभु जिनराय।
नमो-नमो तुम नाम से, रोग शोक मिट जाय।।11।।

वात पित्त दूरे टले, कफ नहीं आवे पास।
चिंतामणि के नाम से, मिटै श्वास और कास।।12।।

प्रथम, दूसरो, तीसरो, ताव चौथियो जाय।
शूल बहत्तर दूर हों, दादर खाज न थाय।।13।।
विस्फोटक गड़गुंबड़ा, कोढ़ अठारह दूर।
नेत्र रोग सब परिहरे, कंठ-माल चकचूर।।14।।

चिंतामणि के जाप से, रोग शोक मिट जाय।
चेतन पारस नाम को, सुमरो मन चित्त लाय।।15।।

चौपाई

मन शुद्धे सुमरो भगवान्, भय भंजन चिंतामणि ध्यान।
भूत प्रेत भय जावे दूर, जाप जपे सुख संपत्ति पूर।।16।।

डाकण साकण व्यन्तर देव, भय नहीं लागे पारस सेव।
जलचर थलचर उरपर जीव, इनको भय नहिं सुमरो पीव।।17।।

बाघ सिंह को भय नहीं होय, सर्प गेह आवे नहीं कोय।
बाट घाट में रक्षा करे, चिंतामणि चिंता सब हरे।।18।।

टोणा टामण जादू करे, तुमरो नाम लिया सब डरे।
ठग फांसीगर तस्कर होय, द्वेषी दुश्मन नावे कोय।।19।।

भय सब भागें तुमरो नाम, मन वांछित पूरो सब काम।
भय निवारण पूरे आस, चेतन जपे चिंतामणि पास।।20।।

दोहा

चिंतामणि के नाम से, सकल सिद्ध हों काम।
राज-ऋद्धि रमणी मिले, सुख सम्पत्ति बहु दाम।।21।।

हय गय रथ पायक मिलें, लक्ष्मी को नहीं पार।
पुत्र कलत्र मंगल सदा, पावे शिव दरबार।।22।।

चेतन चिंता हरण को, जाप जपो तिहुं काल।
कर आंबिल षट मास को, उपजे मंगल माल।।23।।

पारस नाम प्रभाव से, बाढ़े बल बहु ज्ञान।
मन वांछित सुख उपजे, नित सुमरो भगवान्।।24।।

संवत् अठारा ऊपरे, साढ-त्रीस परिमाण।
पौष शुक्ल दिन पंचमी, वार शनिश्चर जाण।।25।।

पढ़े गुणे जो भाव से, सुणे सदा चित्त लाय।
चेतन संपत्ति बहु मिले, सुमरो मन वच काय।।26।।

○○○

पार्श्व-प्रार्थना

कल्याण रूप करुणा केतन, जय हो जय शांति निकेतन की।
चिन्तामणि चिंता दूर करो, प्रभु पारस! मेरे चेतन की।।ध्रुव।।

विघ्न विलय हो जाता है, शुभ नाम तुम्हारा लेने से।
जीवन ज्योति जल उठती है, जीवन अर्पण कर देने से।
अद्‌भुत शक्ति आ जाती है, उनमें कर्मों के छेदन की।।1।।

तापस की जलती धूनी में, करुणा से नाग बचाया था,
शरणागत ने ले शरण आपकी, सुखद अमर पद पाया था।
यह अमर कथा नित बनी रहेगी, जग में करुणा के घन की।।2।।

रौद्र रूप धारण करके, जब कमठ सामने आया था।
वैर भाव से उसने जब, विघ्नों का जाल बिछाया था।
तब ध्यान योग में अचल रहे, ममता तजकर अपने तन की।।3।।

हे करुणामय! जब जब तेरा, आदर्श सामने आता है।
मेरा मन तेरे चरणों में, पारस बनना चाहता है।
"वी.एम." मुझे बस मिल जाए, वह कला जगत के जेतन की।।4।।

○○○

श्री पार्श्वनाथ-स्तवन

आपण घर बैठा लील करो, निज पुत्र कलत्रसुं नेह धरो।
तुम देश देशांतर कांई दौड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।1 ।।

मनवांछित सघला काज सरे, शिर ऊपर चामर छत्र धरे।
कलमल आगल चाले घोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।2 ।।

भूत प्रेत पिशाच बली, सायण ने डायण जाय टली।
छल-छिद्र न कोई लागे जूड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।3 ।।

एकांतर ताव सीयो दाह, औषधि विण जाए क्षण मांह।
नवि दुखे माथुं पग गूड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।4 ।।

कंठमाल गल गुंबड सघला, तस उदर रोग टलें सबला।
पीड़ा न करे फिर गलफोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।5 ।।

जागतो तीर्थंकर पार्श्व बहु, इम जाणे सघलो जगत सहु।
तत्क्षण अशुभ कर्म तोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूडो।।6 ।।

पास वाराणसी पुरी नगरी, तिहाँ उदयो जिनवर उदय करी।
समय सुन्दर कहे कर जोड़ो, नित पास जपो श्री जिन रूड़ो।।7 ।।

ooo

श्री पार्श्वनाथ-स्तुति

प्रणमामि सदा प्रभु-पार्श्वजिनं, जिननायक दायक सौख्यधनम्।
घनचारु मनोहर देहधरं, धरणिपति नित्य सुसेवकरम्।।

करुणारस - रंजित भव्यफणि, फणी सप्त सुशोभित मौलिमणि।
मणिकांचनरूप त्रिघोट घट, घटितासुरकिन्नर-पार्श्व - तटम्।।

तटिनीपति-घोष-गंभीर - स्वरं, शरणागत-विश्व - अशेष-नरम्।
नरनारी - नमस्कृत नित्यमुदा, पद्मावती गावती गीत सदा।।

सततेन्द्रिय - गोप यथा कमठं, कमठासुरवारण - मुक्तहठम्।
हठहेलित - कर्मकृतान्त - बलं, बल-धाम - दलंदल - पंकजलम्।।

जलजद्धयपत्र प्रभानयनं, नयनंदित - भव्य - तरीशमनम्।
मन्मथ - महीरुह वह्निसमं समतागुणरत्नमयं परमम्।।

परमार्थ विचार सदा कुशलं, कुशलं कुरु मे जिननाथ अलम्।
अलिनी नलिनी–नल – नीलतनुं, तनुता प्रभु पार्श्व जिन सुधनम्।।

सुधन – धान्यकरं करुणापरं, परमसिद्धिकरं ददादरम्।
वरतरु अश्वसेनकुलोद्भवं, भवभृतां प्रभु पार्श्व जिनं शिवम्।।

ooo

सिद्धि के सोपान

(गुणस्थान–क्रमारोहण)

अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे ?
क्यारे थइशुं बाह्यान्तर – निर्ग्रन्थ जो ?
सर्वसम्बन्धनुं बन्धन तीक्ष्ण छेदीने,
विचरशुं कब महत्पुरुषने पंथ जो।।अपू०1।।

सर्वभावथी औदासीन्य वृत्ति करी,
मात्र देह ते संयम –हेतु होय जो।
अन्य कारणे अन्य कशुं कल्पे नहीं,
देहे पण किंचित् मूर्छा नवि होय जो।।अपू०2।।

दर्शन मोह व्यतीत थई उपज्यो बोध जे,
देहभिन्न केवल चैतन्यनुं ज्ञान जो।
तेथी प्रक्षीण चारित्रमोह विलोकिये,
वर्ते एवुं, शुद्धस्वरूपनुं ध्यान जो।।अपू०3।।

आत्म–स्थिरता त्रण संक्षिप्त योगनी,
मुख्यपणे तो वर्ते देह – पर्यन्त जो।

घोर परीषह के उपसर्ग - भये करी,
आवी शके नहीं ते स्थिरतानो अन्त जो।।अपू०4।।

संयमना हेतुथी योग - प्रवर्तना,
स्वरूप - लक्षे जिनआज्ञा - आधीन जो।
ते पण क्षण-क्षण घटती जाती स्थितिमां,
अन्ते थाये निज - स्वरूपमां लीन जो।।अपू०5।

पंच - विषयमां राग - द्वेष - विरहितता,
पंच - प्रमादे न मले मननो क्षोभ जो।
द्रव्य - क्षेत्र ने काल-भाव प्रतिबन्ध-विण,
विचरवुं उदयाधीन पण वीत-लोभ जो।।अपू०6।।

क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोध-स्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीनपणानु मान जो।
माया प्रत्ये माया साक्षीभावनी,
लोभ प्रत्ये नहीं लोभ - समान जो।।अपू०7।।

बहु उपसर्ग-कर्ता प्रत्ये पण क्रोध नहीं,
वन्दे चक्री तथापि न थाये मान जो।
देह जाय पण माया थाय न रोममां।
लोभ नहीं छो प्रबल सिद्धिनिदान जो।।अपू०8।।

नग्नभाव मुंडभाव सह अस्नानता,
अदन्तधोवन आदि परम प्रसिद्ध जो।
केश, रोम, नख के अंगे शृंगार नहीं,
द्रव्यभावसंयममय निर्ग्रन्थ सिद्ध जो।।अपू०9।।

शत्रु - मित्र प्रत्ये वर्ते समदर्शिता,
मान - अमाने वर्ते ते ज स्वभाव जो।

जीवित के मरणे नहीं न्यूनाधिकता,
भव - मोक्षे पण शुद्धवर्ते समभाव जो।।अपू०10।।

एकाकी विचरतो वली श्मसानमां,
वली पर्वतमां वाघ - सिंह-संयोग जो।
अडोल आसन ने मनमा नहिं क्षोभता,
परम मित्रनो जाणे पाम्या योग जो।।अपू०11।।

घोर तपश्चर्यामां पण मन ने ताप नहीं,
सरस अन्ने नहीं मन ने प्रसन्नभाव जो।
रज - कण के ऋद्धि वैमानिकदेवनी,
सर्वे मान्या पुद्‌गल एक स्वभाव जो।।अपू०12।।

एम पराजय करी ने चारित्रमोहनी,
आवुं त्यां ज्यां करण अपूर्वभाव जो।
श्रेणी क्षपक तणी करी ने आरूढ़ता,
अनन्य चिन्तन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो।।अपू०13।।

मोह स्वयंभूरमण समुद्र तरी करी,
स्थिति त्यां ज्यां क्षीणमोह गुण-स्थान जो।
अन्त-समय त्यां पूर्णस्वरूप वीतराग थई,
प्रगटावुं, निज केवलज्ञान - निधान जो।।अपू०14।।

चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद ज्यां,
भावनां बीज तणो आत्यन्तिक नाश जो।
सर्वभाव - ज्ञाता - द्रष्टा सह शुद्धता,
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनन्त प्रकाश जो।।अपू०15।।

वेदनीयादि चार कर्म वर्ते जहाँ,
वली सींदरीवत् आकृतिमात्र जो।

ते देहायुष आधीन जेनी स्थिति छे,
आयुष पूर्णे मटिये दैहिक पात्र जो।।अपू०16।।

मन - वचन - काया ने कर्मनी वर्गणा,
छूटे जहाँ सकल पुद्गल - सम्बन्ध जो।
एवं अयोगी गुण - स्थान त्यां, वर्ततुं,
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबन्ध जो।।अपू०17।।

एक परमाणुमात्रनी मले न स्पर्शता,
पूर्ण कलंक - रहित अडोल स्वरूप जो।
शुद्ध निरंजन चैतन्य - मूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहजपदरूप जो।।अपू०18।।

पूर्व - प्रयोगादि कारणना योगथी,
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो।
सादि अनन्त अनन्त - समाधि सुखमां,
अनन्तदर्शन, ज्ञान अनन्तसहित जो।।अपू०19।।

जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान् जो।
तेह स्वरूपने अन्य वाणी तो शुं कहे ?
अनुभवगोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो।।अपू०20।।

एह परमपद - प्राप्तिनुं कर्यु ध्यान में,
गजा वगरनो हाल मनोरथ - रूप जो।
तो पण निश्चय "राजचन्द्र" मन ने रह्यो,
प्रभु - आज्ञाए थाशुं ते ज स्वरूप जो।।अपू०21।।

०००

श्री पार्श्वनाथ स्तुति

जय जय जय प्रभु पार्श्व जिनन्दा, दुष्ट कर्म सब दूर निकन्दा।
जय जय।।1।।
दीनदयाल दया के सागर, जगतारक प्रकटे प्रभु चन्दा।
जय जय।। 2।।
नाग नागनी जलत बचाये, गुन गावत सुर- नर -मुनिवृन्दा।
जय जय।।3।।
निश दिश घड़ी छिन जो नर ध्यावे, विघ्न हरत सुख करत आनन्दा।
जय जय।।4।।
शिवदयाल सुमरो प्रभु पारस, जन्म जन्म के कट जायँ फन्दा।
जय जय।।5।।

○○○

महावीर-स्तवन

जय बोलो महावीर स्वामी की।
घट-घट के अन्तर्यामी की।।ध्रुव।।

जिस जगती का उद्धार किया, जो आया शरण वो पार किया।
जिस पीड़ सुनी हर प्राणी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।।1।।
जो पाप मिटाने आया था, जिस भारत आन जगाया था।
उस त्रिशला-नन्दन ज्ञानी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।।2।।
हो लाख बार प्रणाम तुम्हें, हे वीर प्रभु भगवान् तुम्हें।
मुनि दर्शन मुक्ति-गामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।।3।।

○○○

वीर जिन-स्तुति

श्री सिद्धारथ कुलदीपक चन्द, त्रिशला दे राणीनो नन्द।
कोमल कंचनवर्ण शरीर, मनवांछित पूरण महावीर।।1।।
कृपानाथ करी करुणा घणी, मुझ सामुं जुओ शासन-धणी।
त्रिभुवन-नाथ आयो जब तीर, मनवांछित पूरण महावीर।।2।।
अनन्त बली तप दुक्कर किया, सभी कर्म कुं दावानल दिया।
खम सम दम ने धारी धीर, मनवांछित पूरण महावीर।।3।।
चुम्मालीसे चेला किया, एकज दिन में महाव्रत दिया।
गौतम-सरिखा हुआ वजीर, मनवांछित पूरण महावीर।।4।।
समोसरण मां सुण्यो अधिकार, अमृतवाणी रूप दीदार।
दीठे हरखे हियडूं हीर, मनवांछित पूरण महावीर।।5।।
एक पल धरे प्रभुजी नुं ध्यान, पग-पग प्रगटे पुण्यनिधान।
वचन मीठा जिम मिसरी खीर, मनवांछित पूरण महावीर।।6।।
चैन पामे चिन्ता चकचूर, देखी दुश्मन नासे दूर।
दिन-दिन बाढ़े संपत्ति शीर, मनवांछित पूरण महावीर।।7।।
तुम नामे भव-सागर तरे, तुम नामे सब कारज सरे।
ऋद्धि-वृद्धि पामें वर चीर, मनवांछित पूरण महावीर।।8।।
चिन्तामणि जिम जिनवर जाप, क्रोड भवोना काटे पाप।
रोग शोक नाशे पर-पीड़, मनवांछित पूरण महावीर।।9।।
वैशाख सुदि दशमी दिन जाण, प्रभुजी पाम्या केवलनाण।
सागर जैसा होत गंभीर, मनवांछित पूरण महावीर।।10।।
संवत् अठारह तेतीसे ताम, मेड़ता नगर किया गुणग्राम।
षट्कायाना प्रभुजी पीर, मनवांछित पूरण महावीर।।11।।
प्रभु पावापुरीमां मुक्ति गया, ऋषि रायचन्द कहे करज्यो मया।
पहुंचाड़ो मुझ भव जल तीर, मनवांछित पूरण महावीर।।12।।

श्री महावीर स्वामी का छंद

श्री सिद्धारथ कुल सिणगार, त्रिशलादे सुत जग आधार।
शोभे सुन्दर सोवन वान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान।।1 ।।

तुम नामे लहिये संपदा, तुम नामे मनवांछित मुदा।
तुम नामे लहिये सम्मान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान।।2 ।।

दुर्जन दुष्ट वैरी विकराल, तुम नामे नाशे तत्काल।
तुम नामे दिन-दिन कल्याण, शरण तमारूँ श्री वर्धमान।।3 ।।

तुम नामे नाशे आपदा, भूत प्रेत व्यन्तर नहीं कदा।।
रोग शोक चिन्ता नवि जान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान।।4 ।।

ग्रह-आदिक पीड़ा नवि करे, नाम तमारूँ जे अनुसरे।
धर्मसिंह मुनि - भाव-प्रधान, शरण तमारूँ श्री वर्धमान।।5 ।।

○○○

महावीर के जन्म की बधाई

बधाई तीनों लोक हुई,
अजी वे तो सब जीवन प्राण आधार।।टेक।।

त्रिशलादे मता बड़ाभागन, पिता सिद्धारथ राज।
रतनकूख महावीर पधारे, देवदुंदुभि बाज।।1।।

सुखशय्या पोढ़ी त्रिशलादे, फुलवन सेज सुराग।
चौदह सुपने उत्तम देखे, कुछ सोवत कुछ जाग।।2।।

उठ रानी जा पिऊ जगाया, जागो राज कुमार।
अमृत वचन कोकिला-सी बोले, वियम करंती अबला नार।।3।।

दो कर जोड़ी कहती सुन्दर, अर्ज सुनो सुखकार।
आज रैन मैंने सुपने देखे चौदह एक ही बार।।4।।

राज सुपनपाठक बुलवाए, सुपने कहे सुनाय।
इन सुपनों का क्या फल होगा, हमको देवो बताय।।5।।

चौदह सुपने सुनके सुगनी, मन में हर्षित थाय।
राज तुम्हारे पुण्य फलेंगे, होंगे तीर्थंकर महाराज।।6।।

राज दान दियो सुगनिन को, भर-भर मोती थाल।
होंस पूर सुगनी घर आए, मोतिन में हीरा लाल।।7।।

माता रक्षा करे गर्भ की, सरस निरस नहीं खाय।
अनुपान मर्यादा करती, रोम-रोम हुलसाय।।8।।

नौ महीने साढ़े सात रात्रि, बीते गर्भ मंझार।
जा रैनी प्रभु जन्म लियो है, तीनों लोक भयो उजियार।।9।।

चारों दिशा की छप्पन कुमारी, मिलकर आई तत्काल।
चौसठ इन्द्र चले चहुँ दिश के, बोलत जै जैकार।।10।।

सुगंधकारी जल की हुई वर्षा, पान फूल बरसाद।
नगर बीच सौनियाँ बरसे, देव करें जै-जैनाद।।11।।

घर-घर द्वारे कोले लीपें, बाँधे वन्दनवार।
साथिये धरें दान बहु देवें, गावें मंगलाचार।। 12।।

चारों गति के जीव सुख पाए, जन्मे धर्मदयाल।
सेढू शरण गही प्रभु थारो, भवदधि पार उतार।।13।।

०००

श्री गुरु गौतम स्वामी जी की स्तुति

वीर जिनेश्वर–केरो शीस, गौतम नाम जपो निश–दीस।
जो कीजे गौतमनो ध्यान, ते घर विलसे नवे निधान।।1।।

गौतम – नामे गजवर चढ़े, मनवांछित हेला सांपड़े।
गौतम नामे नावे रोग, गौतम नामे सर्व–संयोग।।2।।

जे वैरी विरुआ बंकड़ा, तस नामे नावे ढुंकड़ा।
भूत प्रेत नवि खण्डे प्राण, ते गौतमना करूं वखाण।।3।।

गौतम नामे निर्मल काय, गौतम नामे बाढ़े आय।
गौतम जिन–शासन–सिणगार, गौतम नामे जय जयकार।।4।।

शाल दाल गोरस घृत गोल, मनवांछित कापड़ तंबोल।
घरे सुघरणी निर्मल चित्त, गौतम नामे पुत्र विनीत।।5।।

गौतम ऊग्यो अविचल भाण, गौतम नाम जपो जग–जाण।
म्होटा मन्दिर मेरु – समान, गौतम नामे सफल विहान।।6।।

घर मयंगल घोड़ानी जोड़, वारू पहुंचे वांछित कोड़।
महियल माने म्होटा राय, जो पूजे गौतमना पाय।।7।।

गौतम प्रणम्यां पातक टले, उत्तम नरनी संगति मिले।
गौतम नामे निर्मल ज्ञान, गौतम नामे वाधे मान।।8।।

पुण्यवंत अवधारो सहु, गुरु गौतमना गुण छे बहु।
कहे लावण्य समय कर जोड़, गौतम तूठे संपत्ति कोड़।।9।।

○○○

लब्धिधारी श्री गौतम स्वामी का स्तवन

मंगल वरते जी, मंगल वरते जी।
म्हारे गौतम गणधर, मन में बसते जी।।टेक।।

धन्ना शालिभद्र की ऋद्धि, और अष्ट महा-सिद्धि जी।
गौतम नामे प्रकटे म्हारे, नव-विध निधि जी।।1।।

लब्धि के भण्डार ज्ञान के, गौतम हैं आगारे जी।
आप नाम म्हारे सब सुख, वरते मंगलाचारे जी।।2।।

आप नाम अति आनन्दकारी, चिन्ता दुःख सब भागे जी।
सुख सम्पत्ति का मंगल बाजा, मुझ घर बाजे जी।।3।।

नाम कल्पतरु म्हारे आंगन, दारिदर भग जावे जी।
मन-वांछित म्हारे ऋषि-सम्पदा, घर में आवे जी।।4।।

अमृत कुम्भ मैं पाया चिन्तामणि, दुःख गया सब भागी जी।
अमृत सम मीठे गौतम तुम, मनसा लागी जी।।5।।

मन कमल तुम नाम हंस है, बैठा अति सुखकारे जी।
हर्षित प्राण हुए सब मेरे, अपरम्पारे जी।।6।।

किसी बात की कमी न मेरे, गौतम गणधर पाया जी।
तीन लोक की लक्ष्मी मुझ घर, वास बसाया जी।।7।।

संवत् उगणीसे साल सितम्बर, शहर सितारे आया जी।
'घासीलाल' कहे सप्तमी श्रावण, गुरु शुभ पाया जी।।8।।

○○○

सोलह सती का छन्द

शीतल जिनवर करूं प्रणाम, सोल सतीरा लेसूं नाम।
ब्राह्मी चन्दना, राजमती, द्रौपदी कौशल्या मृगावती।।1।।

सुलसा सीता सुभद्रा जाण, शिवा कुन्ती शील गुण खाण।
नल-घरणी दमयन्ती सती, चेलना प्रभावती पद्मावती।।2।।

शील गुणे सुहावे सिरी, ऋषभदेवनी धिया सुन्दरी।
सोलह सतियां शील गुण भरी, भवियन प्रणमो भावे धरी।।3।।

ये सुमरियां सब संकट टलें, मन चिन्तित मनोरथ फलें।
इण नामे सब सीझे काज, लहिये मुक्तिपुरीनो राज।।4।।

भूत प्रेत इण नामे टले, ऋद्धि सिद्धि घर आई मिले।
इण नामे सहु होय जगीश, ये सतियां सुमरो निश-दीश।।5।।

ooo

मेरी भावना

जिसने राग-द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्षमार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।।
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्तिभाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो।।1।।

विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्य भाव धन रखते हैं।
निज-पर के हित साधन में जो, निशदिन तत्पर रहते हैं।।
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख समूह को हरते हैं।।2।।

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूं।
पर धन-वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं।।3।।

अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूं।।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य व्यवहार करूं।
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं।।4।।

मैत्री-भाव जगत में मेरा, सब जीवों पर नित्य रहे।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा-स्रोत बहे।।
दुर्जन क्रूर कुमार्ग-रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।।5।।

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहां तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।।
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे।।6।।

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊं, या मृत्यु आज ही आ जावे।।
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे।।7।।

हो कर सुख में मग्न न फूले, दुख में कभी न घबरावे।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे।।
रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे।।8।।

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैर पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नए मंगल गावे।।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावे।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें।।9।।

ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से जिया करे।
परम अहिंसा-धर्म जगत में, फैले सर्वहित किया करे।।10।।

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे।।
बनकर सब 'युगवीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से, निजानन्द में रमा करे।।11।।

○○○

बारह भावना

1. अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी वार।।

2. अशरण भावना

दल-बल देवी देवता, मात-पिता परिवार।
मरती बिरियां जीव को, कोई न राखनहार।।

3. संसार भावना

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णा-वश धनवान।
कहुं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान।।

4. एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कबहूं या जीव को, साथी सगो न कोय।।

5. अन्यत्व भावना

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर-संपत्ति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय।।

6. अशुचि भावना

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन-गेह।

7. आस्रव भावना

जग-वासी घूमें सदा, मोह नींद के जोर।
सब लूटे नहीं दीसता, कर्म चोर चहुं ओर।।

8. संवर भावना

मोह नींद जब उपशमे, सद्‌गुरु देय जगाय।
कर्म-चोर आवत रुकें, तब कुछ बने उपाय।।

9. निर्जरा भावना

ज्ञान-दीप तप-तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नहीं, पैठे पूरब चोर।।

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय-विजय, धार निर्जरा सार।।

10. लोक भावना

चौदह राजु उत्तुंग नभ, लोक-पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत है बिन ज्ञान।।

11. बोधि-दुर्लभ भावना

धन-जन-कंचन राज-सुख, सबहिं सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान।।

12. धर्म-भावना

जांचे सुरतरु देय सुख, चिन्तित चिन्ता रैन।
बिन जांचे बिन चिन्तिये, धर्म सदा सुख दैन।।

○○○

भक्तामरस्तोत्र-भाषा

(दोहा)

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधि करतार।
धरम - धुरन्धर परमगुरु, नमो आदि अवतार।।

(चौपाई)

सुरनतमुकुटरतन छवि करें, अन्तर् पाप - तिमिर सब हरें।
जिनपद वन्दों मन वच काय, भवजल - पतित उधार सहाय।।1।।

श्रुतिपारग इन्द्रादिक देव, जाकी थुति कीनी कर सेव।
शब्द मनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की वरनों गुनमाल।।2।।

विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन, होय निलज थुति-मनसा कीन।
जलप्रतिबिम्ब बुद्ध को गहै, शशिमंडल बालक ही चहै।।3।।

गुनसमुद्र तुम गुन अविकार, कहत न सुरगुरु पावे पार।
प्रलयपवन - उद्धत - जलजन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु।। 4।।

सो मैं शक्तिहीन थुति करूँ, भक्तिभाववश कछु नहिं डरूँ।
ज्यों मृग निज सुत पालन हेत, मृगपति सन्मुख जाय अचेत।।5।।

मैं शठ सुधी हसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावे राम।
ज्यों पिक अम्बकली - परभाव, मधुरितु मधुर करे आराव।।6।।

तुम जस जंपत जिन छिनमांहिं, जनम-जनम के पाप नसाहिं।
ज्यों रवि उदय फटे ततकाल, अलिवत नील निशातम जाल।। 7।।

तुम प्रभाव तैं करहु विचार, होसी यह थुति जनमनहार।
ज्यों जल कमलपत्र पै परै, मुक्ताफल की दुति विस्तरै।।8।।

तुम गुनमहिमा हत दुखदोष, सो तो दूर रहो सुखपोष।
पाप - विनाशक है तुम नाम, कमल-विकाशी ज्यों रवि-धाम।।9।।
नहिं अचंभ जो होहिं तुरन्त, तुम से तुम गुण वरनत सन्त।।
जो अधीन को आप समान, करै न सो निंदित धनवान।।10।।
इक टक जन तुम को अवलोय, और विषै रति करे न सोय।
को करि खीर-जलधि जलपान, खारनीर पीवै मतिमान।।11।।
प्रभु तुम वीतराग गुन - लीन, जिन परमानु देह तुम कीन।
हैं इतने ही ते परमान, यातैं तुम सम रूप न आन।।12।।
कहां तुम मुख अनुपम अविकार, सुर - नरनाग - नयन मनुहार।
कहां चन्द्रमंडल सकलंक, दिन में ढाक - पत्रसम रंक।।13।।
पूरनचन्द जोति छविवन्त, तुम गुन तीन जगत लंघत।
एक नाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को सके निवार।।14।।
जो सुरतिय-विभ्रम आरंभ, मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ।
अचल चलावै प्रलय समीर, मेरु-शिखर डगमगे न धीर।।15।।
धूम-रहित बाती गतनेह, परकाशै त्रिभुवन - घर येह।
वातगम्य नाहिं परचण्ड, अपर दीप तुम जलो अखण्ड।।16।।
छिपहु न लुपहुं राहू की छांहि, जग-परकाशक हो छिनमाँहि।
घन अनवर्त्त दाह विनिवार, रवि ते अधिक धरौ गुनसार।।17।।
सदा उदित विदलित-तममोह, विघटित मेघ राहु अवरोह।
तुम मुख-कमल अपूरब चन्द, जगतविकाशी जोति अमन्द।।18।।
निशिदिन शशिरवि को नहिं काम, तुम मुखचन्द हरै तमधाम।
जो स्वभावतै उपजै नाज, सजल मेघतैं कौनहु काज।।19।।
जो सुबोध सोहे तुम माँहि, हरि हर आदिक में सो नाहिं।
जो दुति महारतन में होय, कांचखण्ड पावै नहिं सोय।।20।।

(नाराच छन्द)

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया,
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया।
कछु न तोहि देखके जहाँ तुही विसेखिया,
मनोग चितचोर और भूल हू न देखिया।।21।।

अनेक पुत्रवन्तिनी नितम्बिनी सपूत हैं,
न तो समान पुत्र और माततें प्रसूत हैं।
दिशा धरन्त तारिका अनेक कोटि को गिनें,
दिनेश तेजवन्त एक पूर्व ही दिशा जनैं।।22।।

पुरान हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो,
कहें मुनीश अन्धकार नाश को सुभान हो।
महन्त तोहि जानिके न होय वश्य काल के,
न और मोहि मोखपंथ देव तोहि टालके।।23।।

अनन्त नित्य चित्त के अगम्य रम्य आदि हो,
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो।
महेश कामकेतु जोग - ईश जोग-ज्ञान हो,
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संत मान हो।।24।।

तू ही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमान तैं,
तू ही जिनेश शंकरो जगत-त्रयैं विधान तैं।
तू ही विधाता है सही सुमोखपंथ धार तैं,
नरोत्तमो तू ही प्रसिद्ध अर्थ के विचार तैं।।25।।

नमो करूँ जिनेश तोहि आपदा निवार हो,
नमो करूँ सुभूरि भूमिलोक के सिंगार हो।

नमो करूँ भवाब्धिनीर-राशि शोषहेतु हो,
नमो करूं महेश तोहि मोक्ष-पंथ देतु हो।।26।।

(चौपाई)

तुम-जिन पूरन गुनगनभरे, दोष गरव करि तुम परिहरे।
और देवगन आश्रय पाय, सुपन न देखे तुम फिर आय।।27।।

तरु अशोक तर किरन उदार, तुम तनु शोभित है अविकार।
मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त, दिनकर दिपै तिमिर निहनन्त।।28।।

सिंहासन मनिकिरन विचित्र, ता - पर कंचन बरन पवित्र।
तुम तनु शोभित किरन विथार, ज्यों उदयाचलरवि तमहार।।29।।

कुन्द - पुहुप-सित चमर ढरन्त, कनक वरन तुम तनु शोभंत।
ज्यों सुमेरु - तट निर्मल कांति, झरना झरे नीर उमगांति।।30।।

ऊँचे रहें सूर - दूति लोप, तीन छत्र तुम दिपे अगोप।
तीन लोक की प्रभुता कहैं, मोती झालरसों छवि लहैं।।31।।

दुन्दुभि - शब्द गहन गम्भीर, चहुँ दिश होय तुम्हारे धीर।
त्रिभुवनजन शिवसंगम करैं, मानों जय - जय रव उचरै।।32।।

मन्द पवन गन्धोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप सुवृष्ट।
देव करैं विकसित दल सार, मानो द्विजपंकति अवतार।।33।।

तुम तन-भामण्डल जिनचन्द, सब दुतिवन्त करत है मन्द।
कोटि संख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करे अछाय।।।34।।

स्वर्ग मोक्ष मारग संकेत, परम धरम उपदेशन हेत।
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध, सब भाषा - गर्भित हितसाध।।35।।

(दोहा)

विकसित सुवरन कमल दुति, नख–दुति मिल चमकाहिं।
तुम पद पदवी जहँ धरैं, तहँ सुर कमल रचाहिं।।36।।
ऐसी महिमा तुम विषैं, और धरै नहिं कोय।
सूरज में जो जोति है, नहिं तारागन होय।।37।।

(छप्पय)

मद अवलिप्त कपोलमूल अलिकुल झंकारैं।
तिन सुन शब्द प्रचंड, क्रोध उद्धत अति धारैं।।
कालवरन विकराल, कालवत सनमुख आवै।
ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै।।
देखि गयंद न भय करैं तुम पद महिमा लीन।
विपतिरहित सम्पतिसहित, बरतैं भक्त अधीन।।38।।

अति मदमत्त गयंद कुम्भथल नखन विदारै।
मोती रक्त – समेत, डारि भूतल सिंगारै।।
बांकी दाढ़ विशाल, वदन में रसना लोले।
भीम भयानक रूप देखि, जन थरहर डोले।।
ऐसे मृगपति पगतलें, जो नर आयो होय।
शरन गहे तुम चरन की, बाधा करै न सोय।।39।।

प्रलय पवन कर उठी आग जो तास पटंतर।
बमैं फुलिंग शिखा उतंग परजलै निरंतर।।
जगत समस्त निगल्ल, भस्म कर देगी मानो।
तड़तड़ाट दव–अनल जोर चहुंदिशा उठानो।।
सो इक छिन में उपशमे नामनीर तुम लेत।
होय सरोवर परिनमें, विकसित कमल समेत।।40।।

कोकिल-कंठ समान, श्याम तन क्रोध जलंता।
रक्त-नयन फुंकार मार विषकन उगलता।।
फन को ऊँचा करै, वेग ही सनमुख धाया।
तब जन होय निशंक, देख फनपति को आया।
जो चापै निज पांवतैं, व्यापै विष न लगार।
नागदमन तुम नाम की, है जिनके आधार।।41।।

जिस रनमाहिं भयानक, शब्द कर रहे तुरंगम।
घनसम गज गरजाहिं, मत्त मानो गिरि जंगम।।
अति-कोलाहल माहिं, बात जहँ नाहिं सुनीजै।
राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजै।।
नाथ तिहारे नाम तैं, सो छिनमाहिं पलाय।
ज्यों दिनकर परकाश तैं, अन्धकार विनशाय।।42।।

मारे जहाँ गयंद, कुम्भ हथियार विदारे।
उमगे रुधिर-प्रवाह, वेग जल से विस्तारे।।
होय तिरन असमर्थ, महाजोधा बलपूरे।
तिस रन में जिन तोय, भक्त जे हैं नरसूरे।।
दुर्जय अरिकुल जीत के, जय पावै निकलंक।
तुम पद - पंकज मन बसै, ते नर सदा निशंक।।43।।

नक्र चक्र मगरादि, मच्छ करि भय उपजावै।
जामें बड़वा अग्नि, दाहतै नीर जलावै।।
पार न पावै जासु, थाह नहिं लहिये जाकी।
गरजै अतिगंभीर, लहर की गिनति न ताकी।।
सुखसों तिरै समुद्र को, जे तुम-गुण सुमराहिं।
लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाहिं।।44।।

महाजलोदर-रोग - भार-पीड़ित नर जे हैं।
वात-पित्त-कफ-कुष्ट, आदि जे रोग गहे हैं।।
सोचत रहैं उदास, नाहिं जीवन की आशा।
अति घिनावनी देह धरैं दुर्गन्ध निवासा।।
तुम पद-पंकज धूल को, जो लावें निज अंग।
ते निरोग शरीर लहि, छिन में होंहि अनंग।।45।।

पांव कंठते जकरि, बांध साँकल अतिभारी।
गाढ़ी बेड़ी पैर माहिं, जिन जाँघ विदारी।।
भूख-प्यास चिन्ता शरीर, दुख से बिललाने।
सरन नाहिं जिन कोय, भूप के बन्दीखाने।।
तुम सुमरत स्वयमेव ही, बन्धन सब खुल जाहिं।
छिनमें ते सम्पत्ति लहैं, चिन्ता भय विनसाहि।।46।।

महामत्त गजराज और मृगराज दवानल।
फनपति रन परचंड, नीरनिधि रोग महाबल।।
बन्धन के ये भय आठ, डरप कर मानो नाशैं।
तुम सुमरत छिनमाहिं, अभय थानक परकाशैं।
इस अपार संसार में, शरन नाहिं प्रभु कोय।
यातें तुम पद-भक्त को, भक्ति सहाई होय।।47।।

यह गुणमाल विशाल, नाथ! तुम गुनन सँवारी।
विविध वर्णमय पुहुप गूंथि मैं भक्ति विथारी।
जे नर पहरैं कंठ, भावना मन में भावें।
मानतुंग ते निजाधीन, शिव-लछमी पावें।।
भाषा भक्तामर कियो, 'हेमराज' हितहेत।
जे नर पढ़े सुभावसों, ते पावें शिव-खेत।।48।।

कल्याणमन्दिर-स्तोत्र भाषा

(दोहा)

परम ज्योति परमात्मा, परम ज्ञान - परवीन।
वन्दूं परमानन्दमय, घटघट अन्तर् लीन॥

(चौपाई 15 मात्रा)

निर्भय - करन परम परधान, भवसमुद्र - जल तारन यान।
शिवमन्दिर अघ हरत अनिंद, वन्दहुं पास - चरन अरविंद॥1॥

कमठ - मान - भंजन वर वीर, गरिमा - सागर गुन - गंभीर।
सुर - गुरु पार लहै नहिं जास, मैं अजान जंपू जस तास॥2॥

प्रभु स्वरूप अति अगम अथाह, क्यों हम सेती होय निवाह।
ज्यों दिन अन्ध उलू को पोत, कहि न सके रविकिरन-उदोत॥3॥

मोह - हीन जाने मन मांहि, तौहु न तुम गुन वरने जाहिं।
प्रलय पयोधि करै जल बौन, प्रगटहिं रतन गिने तिहिं कौन॥4॥

तुम असंख्य निर्मल गुणखान, मैं मतिहीन कहूँ निज वान।
ज्यों बालक निज बाँह पसार, सागर परिमित कहै विचार॥5॥

जे जोगीन्द करहिं तप खेद, तऊ न जानहिं तुम गुन-भेद।
भक्ति-भाव मुझ मन अभिलाख, ज्यों पंछी बोलै निज भाख॥6॥

तुम जस महिमा अगम अपार, नाम एक त्रिभुवन - आधार।
आवै पवन पद्मसर होय, ग्रीषम - तपन निवारै सोय॥7॥

तुम आवत भविजन-घटमाँहि, कर्म-निबंध शिथिल ह्वै जाहिं।
ज्यों चन्दनतरु बोलहिं मोर, डरहिं भुजंग लगे चहुं ओर॥8॥

तुम निरखत जन दीनदयाल, संकट तैं छूटैं तत्काल।
ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर, ते तज भागहिं होत भोर।।9।।

तुम भविजन-तारक किमि होहिं, ते चितधार तिरहिं ले तोहिं।
यह ऐसे कर जान स्वभाव, तिरहिं मसक ज्यों गर्भित बाव।।10।।

चिहँ सब देव किये वश वाम, तैं छिन में जीत्यो सो काम।
ज्यों जल करे अगनिकुल-हान, बड़वानल पीवै सो पान।।11।।

तुम अनन्त गिरवा गुण लिये, क्यों कर भक्ति धरौं निज हिये।
ह्वै लगि रूप तिरहि संसार, यह प्रभु-महिमा अगम अपार।।12।।

क्रोध-निवार कियो मन शांत, कर्म-सुभट जीते किहि भांत।
यह पटंतर देखहु संसार, नील बिरछ ज्यौं दहै तुसार।।13।।

मुनिजन हिये कमल निज टोहि, सिद्ध-रूप-सम ध्यावहिं तोहि।
कमलकरणिका विन नहिं और, कमलबीज उपजन की ठौर।।14।।

जब तुम ध्यान धरै मुनि कोय, तब विदेह परमातम होय।
जैसे धातु शिलातनु त्याग, कनकस्वरूप धवो जब आग।।15।।

जाके मन तुम करहु निवास, विनसि जाय क्यों विग्रह तास।
ज्यों महन्त बिच आवे कोय, विग्रह - मूल निवारै सोय।।16।।

करहिं विबुध जे आतम ध्यान, तुम प्रभाव तैं होय निदान।
जैसे नीर सुधा अनुमान, पीवत विष विकार की हान।।17।।

तुम भगवन्त विमल गुणलीन, समल रूप मानहिं मतिहीन।
ज्यों पीलिया रोग दृग गहै, वर्ण विवर्ण शंख सो कहै।।18।।

(दोहा)

निकट रहत उपदेश सुनि, तरुवर भयो अशोक।
ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रगट होत भुविलोक।।19।।

सुमनवृष्टि ज्यों सुर करहिं, हेठ वींट मुख सोंहि।
त्यों तुम सेवत सुमन जन, बन्ध अधोमुख होंहि।।20।।

उपजी तुम हिय-उदधि तें, वानी सुधा-समान।
जिह पीवत भविजन लहहि, अजर अमर पद थान।।21।।

कहहिं सार तिहु लोक को, ये सुर-चामर दोय।
भावसहित जो जिन नमै, तिहँ गति ऊरध होय।।22।।

सिंहासन गिरि मेरु-सम, प्रभु-धुनि गर्जन घोर।
श्याम सुतनु घनरूप लखि, नाचत भविजन मोर।।23।।

छविहत होत अशोक दल, तुम-भामण्डल देख।
वीतराग के निकट रह, रहत न राग विसेख।।24।।

सीख कहै तिहुँ लोक को, यह सुर-दुंदुभि-नाद।
शिव-पथ सारथवाह जिन, भजहु तजहु परमाद।।25।।

तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्ता-गण छवि देत।
त्रिविध रूप धर मनु शशि, सेवत नखत समेत।।26।।

(पद्धरि छन्द)

प्रभु ! तुम शरीर-दुति रतन-जेम।
परताप-पुंज जिम शुद्ध हेम।।
अति धवल सुजस रूपा-समान।
तिनके गढ़ तीन विराजमान।।27।।

सेवहिं सुरेन्द्र कर नमत भाल।
तिन सीस-मुकुट तज देहि माल।।
तुम चरण लगत लहलहै प्रीति।
नहिं रमहि और जन सुमन-रीति।।28।।

प्रभु भोग-विमुख तन कर्मदाह।
जन पार करत भव-जल निवाह।।
ज्यों माटी - कलश सुपक्क होय।
ले भार अधोमुख तिरहि तोय।।29।।

तुम महाराज ! निर्धन निराश।
तज विभव-विभव सब जग-विकाश।।
अक्षर स्वभाव सुलिखे न कोय।
महिमा भगवन्त अनन्त सोय।।30।।

कर कोप कमठ निज वैर देख।
तिन करी धूलि बरषा विसेख।।
प्रभु ! तुम छाया नहिं भई हीन।
सो भयो आप लंपट मलीन।।31।।

गरजंत घोर घन अन्धकार।
चमकंत विज्जु जल मुसलधार।।
बरसंत कमठ धर ध्यान रुद्र।
दुस्तर करंत निज भव - समुद्र।।32।।

(वास्तु छन्द)

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि।
भेजे तुरन्त पिशाचगण नाथ पास उपसर्ग-कारण।

अग्नि-झाल झलकत मुख, धुनि करत जिमिमत्तवारण!
कालरूप विकराल तन, मुंडमाल तिहँ कंठ।
के निशंक वह रंक निज, करै कर्म दृढ़ गंठ।।33।।

(चौपाई 5 मात्रा)

जे तुम चरणकमल तिहुँ काल, सेवहिं तज माया जंजाल।
भाव भगति मन हरष अपार, धन्य धन्य तिन जग अवतार।।34।।

भवसागर में फिरत अजान, मैं तुझ सुजस सुन्यो नहिं कान।
जो प्रभु नाम-मंत्र मन धरै, तासों विपत - भुजंगम डरै।।35।।

मनवांछित फल जिन-पद मांहि, मैं पूरब भव सेये नाहिं।
माया - मगन फिर्‌यो अज्ञान, करहिं रंक जन मुझ अपमान।।36।।

मोह-तिमिर छायो दृग मोहि, जन्मान्तर देख्यो नहिं तोहि।
तौ दुर्जन मुझ संगति गहैं, मर्म छेद के कुवचन कहैं।।37।।

सुन्यो कान जस पूजे पाय, नैनन देख्यो रूप अघाय।
भक्ति हेतु न भयो चित चाव, दुख-दायक किरिया बिन भाव।।38।।

महाराज ! शरणागत पाल, पतित उधारन दीन - दयाल।
सुमरन करहुँ नाय निज शीश, मुझ दुख दूर करहु जगदीश !।।39।।

कर्म - निकन्दन महिमा सार, अशरण शरण सुजस विस्तार।
नहिं सेये प्रभु तुमरे पाय, तो मुझ जन्म अकारथ जाय।।40।।

सुर-गण-वन्दित दयानिधान, जग-तारण जगपति जग-जान।
दुख - सागर तैं मोहि निकासि, निर्भय थान देहु सुखरासि।।41।।

मैं तुम-चरणकमल गुन गाय, बहुविधि भक्ति करी मन लाय।
जन्म जन्म प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवा - फल दीजै मोहि।।42।।

(दोधकांत बेसरी छन्द)

इहि विधि श्री भगवन्त, सुजस जे भविजन भाषहिं।
ते जन पुण्य - भंडार, संचि चिर पाप प्रणासहिं।।43।।
रोम रोम हुलसंत अंग, प्रभु - गुण मन ध्यावहिं।
स्वर्ग - सम्पदा भुंज वेग, पंचम - गति पावहिं।।44।।
यह कल्याणमन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्धि।
भाषा कहत 'बनारसी', कारण समकित शुद्धि।।45।।

০০০

बड़ी साधु-वन्दना

(आचार्य श्री जयमल जी म. द्वारा रचित 17 शास्त्रों का नवनीत)

नमूं श्री अनन्त चौबीसी, ऋषभादिक महावीर।
आरज क्षेत्रमां घाली, धर्म नी शीर।।1।।

महा-अतुल-बली नर, शूर-वीर ने धीर।
तीरथ प्रवर्तावी, पहुंचा भवजल-तीर।।2।।

सीमन्धर-प्रमुख, जघन्य तीर्थंकर बीश।
छे अढी-द्वीप मां, जयवंता जगदीश।।3।।

एक सौ ने सत्तर, उत्कृष्ट पदे जगीश।
धन्य म्होटा प्रभुजी, तेह ने नमावुं शीश।।4।।

केवली दोय कोड़ी, उत्कृष्टा नव कोड़।
मुनि दोय-सहस-कोड़ी, उत्कृष्टा नव-सहस-कोड़।।5।।

विचरें छे विदेह, म्होटा तपसी घोर।
भावे करी बन्दूं, टाले भवनी खोड़।।6।।

चौबीसे जिन ना, सघला, ही गण-धार।
चौदसे ने बावन, ते प्रणमूं सुखकार।।7।।

जिन-शासन-नायक धन्य श्री-वीर-जिनंद।
गौतमादिक गणधर, बर्तायो आनन्द।।8।।

श्री ऋषभदेवना, भरतादिक सौ पूत।
वैराग्य मन आणी, संयम लियो अद्भूत।।9।।

केवल उपजाव्यूं, कर करणी करतूत।
जिनमत दीपावी, सघला मोक्ष पहूंत।।10।।

श्री भरतेश्वर ना, हुआ पटोधर आठ।
आदित्य जशादिक, पहुंत्या शिवपुर-वाट।।11।।

श्री जिन-अन्तर ना, हुआ पाट असंख।
मुनि मुक्ति पहुंत्या, टाली कर्म नो बंक।।12।।

धन्य कपिल मुनिवर, नमि नमूं अणगार।
जेणे तत्क्षण त्यागो, सहस्त्र-रमणी-परिवार।।13।।

मुनिवर हरिकेशी, चित्त मुनीश्वर-सार।
शुद्ध संयम पाली, पाम्या भव नो पार।।14।।

बली इखुकार राजा, घर कमलावती नार।
भग्गू ने जशा, तेह ना दोय कुमार।।15।।

छये छती ऋद्धि छांडी, लीधो संयम-भार।
इण अल्पकालमां, पाम्या मोक्ष-दुवार।।16।।

बली संयति राजा, हिरण-आहिडे जाय।
मुनिवर गर्दभाली, आण्यो मारग ठाय।।17।।

चारित्र लेइने, भेट्या गुरु ना पाय।
नमिराज ऋषीश्वर, चर्चा करी चित लाय।।18।।

बली दशे चक्रवर्ती, राज्य-रमणी-ऋद्धि छोड़।
दशे मुक्ति पहुंत्या, कुल ने शोभा चहोड़।।19।।

इण अवसर्पिणी काल मां, आठ राम गया मोक्ष।
बलभद्र मुनीश्वर, गया पंचमे देवलोक।।20।।

दशार्णभद्र राजा, वीर-वांद्या धरि मान।
पछी इन्द्र हटायो, दियो छकाय अभयदान।।21।।

करकण्डू प्रमुख, चारे प्रत्येक-बुद्ध।
मुनि मुक्ति पहुंच्या, जीत्या कर्म-महाजुद्ध।।22।।

धन म्होटा मुनीवर, मृगापुत्र जगीश।
मुनिवर अनाथी, जीत्या राग ने रीश।।23।।

बली समुद्रपाल मुनि, राजमति रहनेम।
केशी ने गौतम, पाम्या शिवपुर खेम।।24।।

धन विजयघोष मुनि, जयघोष बली जाण।
श्री गर्गाचार्य, पहुंत्या छे निर्वाण।।25।।

श्री उत्तराध्ययन मां, जिनवर कर्या बखाण।
शुद्ध मन से ध्यावो, मन मां धीरज आण।।26।।

बली खंदक संन्यासी, राख्यो गौतम-स्नेह।
महावीर-समीपे, पञ्च महाव्रत लेह।।27।।

तप कठिन करीने, झौंसी आपणी देह।
गया अच्युत देवलोके चवि लेसे भव-छेह।।28।।

बलि ऋषभदत्त मुनि, सेठ सुदर्शन सार।
शिवराज ऋषीश्वर, धन गांगेय अणगार।।29।।

शुद्ध संयम पाली, पाम्या केवल-सार।
ये चारे मुनिवर, पहुंत्या मुक्ति-मंझार।।30।।

भगवंत नी माता, धन-धन सती देवानन्दा।
बली सती जयंती, छोड़ दिया घर-फन्दा।।31।।

सती मुक्ति पहुंत्या, बली ते वीर नी नन्द।
महासती सुदर्शना, घणी सतियों नां वृन्द।।32।।

बली कार्तिक शेठे, पड़िमा वही शूर-वीर।
जीमी मोरां ऊपर, तापस बलती खीर।।33।।

पछी चारित्र लीधुं, मित्र एक-सहस-आठ धीर।
मरी हुओ शक्रेन्द्र, चवि लेसे भव-तीर।।34।।

बली राय-उदायन, दियो भाणजा ने राज।
पछी चारित्र लेइने, सार्‍या आतम-काज।।35।।

गंगदत्त-मुनि आनन्द, तारण-तरण जहाज।
मुनि कौशल रोहो, दियो घणाने साज।।36।।

धन्य सुनक्षत्र मुनिवर, सर्वानुभूति अणगार।
आराधक हुई ने, गया देवलोक मंझार।।37।।

चवि मुक्ति जासे, बली सिंह-मुनीश्वर सार।
बीजा पण मुनिवर, भगवती मां अधिकार।।38।।

श्रेणिक ना बेटा, म्होटो मुनिवर मेघ।
तजी आठ अन्तेउर, आण्यो मन संवेग।।39।।

वीर पै व्रत लेइने, बांधी तपनी तेग।
गया विजय-विमाने, चवि लेसे शिव वेग।।40।।

धन्य थावच्चा पुत्र, तजी बतीसों नार।
तेनी साथे निकल्या, पुरुष एक-हजार।।41।।

शुकदेव संन्यासी, एक-सहस शिष्य लार।
पांच-सौ से शेलक, लीधो संयम-भार।।42।।

सब सहस-अढ़ाई, घणा जीवों ने तार।
पुण्डरीक गिरि ऊपर, कियो पादोपगमन संथार।।43।।

आराधक हुई ने, कीधो खेवो पार।
हुआ म्होटा मुनिवर, नाम लिया निस्तार।।44।।

धन्य जिनपाल मुनिवर, दोय धन्ना हुआ साध।
गया प्रथम देवलोके, मोक्ष जासे आराध।।45।।

श्री मल्लिनाथ ना छह मित्र, महाबलप्रमुख मुनिराय।
सर्वे मुक्ति सिधाव्या, म्होटी पदवी पाय।।46।।

बली जितशत्रु राजा, सुबुद्धि नामे प्रधान।
पोते चारित्र लईने, पाम्या मोक्ष-निधान।।47।।

धन्य तेतली मुनिवर, दियो छकाय अभयदान।
पोटिला प्रतिबोध्या, पाम्या केवल ज्ञान।।48।।

धन्य पांचे पाण्डव, तजी द्रौपदी नार।
थेवरां नी पासे, लीधो संयम-भार।।49।।

श्री नेमि-वन्दन नो, एहवो अभिग्रह कीध।
मास-मास खमण-तप, शत्रुंजय जई सिद्ध।।50।।

धर्मघोष तणा शिष्य, धर्मरुचि अणगार।
कीड़ियों नी करुणा, आणी दया अपार।।51।।

कड़वा तुंबानो, कीधो सघलो आहार।
सर्वार्थसिद्ध पहुंत्या, चवि लेसे भव-पार।।52।।

बली पुण्डरीक राजा, कुण्डरीक डिगियो जाण।
पोते चरित्र लेई ने, न घाली धर्म मां हाण।।53।।

सर्वार्थसिद्ध पहुंत्या, चवि लेसे निर्वाण।।
श्री ज्ञाता-सूत्र मां, जिनवर कर्‍या बखाण।।54।।

गौतमादिक कुंवर, सगा अठारे भ्रात।
सब अंधक-विष्णु-सुत, धारिणी ज्यांरी मात।।55।।

तजी आठ अन्तेउर, काढ़ी दीक्षा नी बात।
चारित्र लेई ने, कीधो मुक्ति नो साथ।।56।।

श्रीअनीकसेनादिक, छये सहोदर भाय।
वसुदेवना नन्दन, देवकी ज्यांरी माय।।57।।

भद्दिलपुर नगरी, नाग गाहावई जाण।
सुलसा-घर बधिया, सांभली नेमिनी वाण।।58।।

तजी बत्तीस-2 अंतेउर, नीकलिया छिटकाय।
नलकूबर-समाना, भेंट्या श्रीनेमिना पाय।।59।।

करी छठ-छठ-पारणा, मन मां वैराग्य लाय।
एक-मास-संथारे, मुक्ति विराज्या जाय।।60।।

बली दारुक-सारण, सुमुख दुमुख मुनिराय।
बली कुंवर अनाधृष्ट, गया मुक्ति-गढ़ मांय।।61।।

वसुदेव ना नन्दन, धन-धन गजसुकुमाल।
रूपे अतिसुन्दर, कलावंत वय-बाल।।62।।

श्री नेमि समीपे, छोड्यो मोह-जंजाल।
भिक्षुनी पडिमा, गया मसाण महाकाल।।63।।

देखी सोमिल कोप्यो, मस्तक बांधी पाल।
खेरांना खीरा, शिर ठविया असराल।।64।।

मुनि नजर न खण्डी, मेटी मन नी झाल।
परीषह सही ने, मुक्ति गया तत्काल।।65।।

धन जाली मयाली, उवयालादिक साध।
साम्ब ने प्रद्युम्न, अनिरुध साधु अगाध।।66।।

बली सतनेमि दृढ़नेमि, करणी कीधी निर्बाध।
दशे मुक्ति पहुंत्या, जिनवर-वचन आराध।।67।।

धन अर्जुनमाली, कियो कदाग्रह दूर।
वीर पै व्रत लई ने, सत्यवादी हुआ शूर।।68।।

करी छठ-छठ-पारणा, क्षमा करी भरपूर।
छह मासां मांही, कर्म किया चकचूर।।69।।

कुंवर अइमुत्ते, दीठा गौतम स्वामी।
सुणी वीरनी वाणी, कीधो उत्तम काम।।70।।

चारित्र लेई ने, पहुंत्या शिवपुर-ठाम।
धुर-आदि मकाई, अन्त-अलक्ष-मुनि नाम।।71।।

बली कृष्णरायनी, अग्रमहिषी आठ।
पुत्र-बहू दोय, संच्या पुण्यना ठाठ।।72।।

जादव-कुल-सतियां, टाल्यो दु:ख-उचाट।
पहुंती शिवपुर मां, यह छे सूत्रनो पाठ।।73।।

श्रेणिक नी राणी, काली-आदिक दश जाण।
दशे पुत्र वियोगे, सांभली वीरनी वाण।।74।।

चन्दनबाला पे, संयम लेई हुई जाण।
तप करि देह झोंसी, पहुंती छे निर्वाण।।75।।

नन्दादिक तेरह, श्रेणिक नृप नी नार।
सघली चन्दनबाला पे, लीधो संयम-भार।।76।।

एक मास संथारे, पहुंची मुक्ति-मंझार।
यह नेवुं जणांनो, अन्तगड मां अधिकार।।77।।

श्रेणिक ना बेटा, जालियादिक तेवीश।
वीर पे व्रत लेई ने, पाल्यो बिश्वा-बीश।।78।।

तप कठिन करी ने, पूरी मन-जगीश।
देवलोके पहुंत्या, मोक्ष जासे तजी रीश।।79।।

काकन्दी नो धन्नो, तजी बतीसों नार।
महावीर-समीपे, लीधो संयम-भार।।80।।

करी छठ-छठ-पारना, आयंबिल-उज्झित-आहार।
श्री वीर बखाण्यो, धन धन्नो अणगार।।81।।

एक मास संथारे, सर्वार्थसिद्ध पहुंत।
महाविदेह क्षेत्र मां, करसे भवनो अन्त।।82।।

धन्ना नी रीते, हुआ नब्बे संत।
श्री अणुत्तरोववाई मां, भाख गया भगवंत।।83।।

सुबाहु - प्रमुख, पांच - पांच - सौ नार।
तजी वीर पै लीधा पांच महाव्रत सार।।84।।

चारित्र लेई ने, पाल्या निरतिचार।
देवलोके पहुंत्या, सुख विपाके अधिकार।।85।।

श्रेणिक ना पौत्र, पौमादिक हुआ दस।
वीर पै व्रत लेई ने, काढ्यो देहनो कस।।86।।

संयम आराधी, देवलोक मां जई बस।
महाविदेह-क्षेत्रमां, मोक्ष जासे लेई जस।।87।।

बलभद्रना नन्दन, निषधादिक हुआ चार।
तजी पचास अन्तेउरी, त्याग दियो संसार।।88।।

सहु नेमि-समीपे, चार महाव्रत लीध।
सर्वार्थसिद्ध पहुंत्या, होसे विदेहे सिद्ध।।89।।

धन्नो ने शालिभद्र, मुनीश्वरों नी जोड़।
नारी ना बन्धन, तत्क्षण नांख्या तोड़।।90।।

घर-कुटुम्ब-कबीलो, धन-कंचन नी कोड़।
मास-मास-खमण तप, टालशे भवनी खोड़।।91।।

श्री सुधर्मा ना शिष्य, धन-धन जम्बू स्वाम।
तजी आठ अन्तेउरी, मात-पिता धन-धाम।।92।।

प्रभवादिक तारी, पहुंत्या शिवपुर ठाम।
सूत्र प्रवर्तावी, जग मां राख्यूं नाम।।93।।

धन ढंढन मुनिवर, कृष्ण-राय ना नन्द।
शुद्ध अभिग्रह पाली, टाल दियो भव-फन्द।।94।।

बली खंदक ऋषिनी, देह उतारी खाल।
परीषह सहीने, भव-फेरा दिया टाल।।95।।

बली खंदक ऋषिना, हुआ पांचसौ शीष।
घाणी मां पील्या, मुक्ति गया तज रीश।।96।।

संभूति-विजय तणां शिष्य, भद्रबाहु मुनिराय।
चौदह-पूर्वधारी, चन्द्रगुप्त आण्यो ठाय।।97।।

बली आर्द्रकुमार-मुनि स्थूलभद्र नन्दिषेण।
अरणक अइमुत्तो मुनीश्वरों नी श्रेण।।98।।

चौबीसे जिनना मुनिवर, संख्या अठावीश लाख।
ऊपर सहस अड़तालीस, सूत्र-परम्परा भाख।।99।।

कोई उत्तम बांचो, मोंढे जयणा राख।
उघाड़े-मुख बोल्यां, पाप लगे इम भाख।।100।।

धन्य मरुदेवी माता, ध्यायो निर्मल-ध्यान।
गज-होदे पायो, निर्मल-केवल-ज्ञान।।101।।

धन्य आदीश्वर नी पुत्री, ब्राह्मी सुन्दरी दोय।
चारित्र लेई ने, मुक्ति गई सिद्ध होय।।102।।

चौबीसे जिननी, बड़ी शिष्यणी चौबीस।
सती मुक्ते पहुंत्या पूरी मन जगीश।।103।।

चौबीसे जिननां, सर्व-साध्वी-सार।
अड़तालीस लाख ने, आठ से सत्तर हजार।।104।।

चेडा नी पुत्री, राखी धर्म से प्रीत।
राजीमती विजया, मृगावती सुविनीत।।105।।

पद्मावती, मयणरेहा, द्रौपदी दमयंती सीत।
इत्यादिक सतियां, गई जमारो जीत।।106।।

चौबीसे जिननां, साधु-साध्वी-सार।
गया मोक्ष देवलोके, हृदय राखो धार।।107।।

इण अढी द्वीप मां, घरड़ा तपसी बाल।
शुद्ध पंच-महाव्रतधारी, नमो-नमो तिहुंकाल।।108।।

इण यतियां सतियां नां, लीजे नित्यप्रति नाम।
शुद्ध मन थी ध्यावो, यह तिरण नो ठाम।।109।।

इण यतियां सतियां सूं, राखो उज्ज्वल भाव।
इम कहे ऋषि जयमल, एह तिरणनो दाव।।110।।

संवत अठारा ने, वर्ष साते शिरदार।
गढ़ जालोर मांही, एह कह्यो अधिकार।।111।।

○○○

लघु साधु वन्दना

साधुजी ने वन्दना नित-नित कीजे, प्रात उगन्ते सूर रे प्राणी!
नीच गति में ते नहिं जावे, पामे ऋद्धि भरपूर रे प्राणी।।1।।

मोटा ते पंच-महाव्रत पाले, छह-काया रा प्रतिपाल रे प्राणी!
भ्रमर-भिक्षा मुनि सूझती लेवें, दोष बयालीस टाल रे प्राणी।।2।।

ऋद्धि सम्पदा मुनि कारमी जाणी, दीधी संसार ने पूठ रे प्राणी!
एहवा पुरुषां नी सेवा करतां, आठ कर्म जाय टूट रे प्राणी।।3।।

एक-एक मुनिवर रसना-त्यागी, एक-एक ज्ञान भण्डार रे प्राणी!
एक एक वैयावचिया वैरागी, जेना गुणानो नावे पार रे प्राणी।।4।।

गुण सत्तावीस करी ने दीपे, जीता परीसा बावीस रे प्राणी!
बावन तो अनाचीरण टालें, तेने नमाऊं मारूं शीस रे प्राणी।।5।।

जहाज़ समान ते सन्त-मुनीश्वर, भव्य-जीव बैसे आय रे प्राणी!
पर-उपकारी मुनि दाम न मांगें, देवें मुक्ति पहुंचाय रे प्राणी।।6।।

साधु-चरणे जीव साता रे पावे, पावे ते लील-विलास रे प्राणी!
जन्म जरा अने मरण मिटावे, नावे फरी गर्भावास रे प्राणी।।7।।

एक वचन श्री सतगुरु-केरो, जो पैठे दिल मांय रे प्राणी!
नरक गति-मां ते नहिं जावे, एम कहे जिनराय रे प्राणी।।8।।

प्रात उठीने उत्तम प्राणी, सुने साधुजी रो व्याख्यान रे प्राणी!
ए पुरुषां नी सेवा करतां, पावे अमर-विमान रे प्राणी।।9।।

संवत् अठारे ने वर्ष अड़तीसे, बूसी-गांव चौमास रे प्राणी!
मुनि आसकरण जी इण पर जंपे, हुं तो उत्तम साधांरो दास रे प्राणी।।10।।

○○○

श्रीमद् राजचन्द्र-रचित

आत्मसिद्धि

जे स्वरूप समज्या बिना, पाम्यो दुःख अनन्त।
समजाव्युं ते पद नमुं, श्रीसद्गुरु भगवन्त।।1।।

वर्तमान आ कालमां मोक्षमार्ग बहु लोप।
विचारवा आत्मार्थीने भाख्यो अत्र अगोप्य।।2।।

कोई क्रियाजड़ थई रह्या, शुष्कज्ञानमां कोई।
माने मारग मोक्षनो, करुणा उपजे जोई।।3।।

बाह्यक्रियामां राचता, अन्तर्भेद न कांई।
ज्ञानमार्ग निषेधता, तेह क्रियाजड़ आंहि।।4।।

बंध, मोक्ष छे कल्पना, भाखे वाणी मांहि।
वर्ते मोहावेशमां, शुष्कज्ञानी ते आंहि।।5।।

वैराग्यादि सफल तो, जो सह आतमज्ञान।
तेमज आतमज्ञाननी, प्राप्तितणां निदान।।6।।

त्याग विराग न चित्तमां, थाय न तेने ज्ञान।
अटके त्याग, विरागमां, तो भूले निजभान।।7।।

ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, त्यां समजवुं तेह।
त्यां त्यां ते ते आचरे आत्मार्थी जन एह।।8।।

सेवे सद्गुरुचरणने, त्यागी दई निजपक्ष।
पामे ते परमार्थ ने, निजपदनो ले लक्ष।।9।।

आत्मज्ञान, समदर्शिता, विचरे उदयप्रयोग।
अपूर्ववाणी परमश्रुत, सद्गुरुलक्षण-योग्य।।10।।

प्रत्यक्ष सद्गुरुसम नहीं, परोक्ष जिन-उपकार।
एवो लक्ष थया विना, उगे न आत्मविचार।।11।।

सदगुरुना उपदेशविण, समजाय न जिनरूप।
समज्याविण उपकारशो, समज्ये जिनस्वरूप।। 12।।

आत्मादि-अस्तित्वना, जेह निरूपक शास्त्र।
प्रत्यक्ष सद्गुरुयोग नहीं, त्यां आधार सुपात्र।।13।।

अथवा सदगुरुए कह्यां, जे अवगाहन काज।
ते ते नित्य विचारवां, करी मतांतर त्याज।।14।।

रोके जीव स्वच्छन्द तो, पामे अवश्य मोक्ष।
पाम्या एम अनन्त छे, भाख्युं जिन निर्दोष।।15।।

प्रत्यक्ष सदगुरुयोगथी, स्वच्छन्द ते रोकाय।
अन्य उपाय कर्या थकी, प्राये बमणो थाय।।16।।

स्वच्छन्द मत आग्रह तजी, वर्ते सद्गुरु-लक्ष।
समकित तेने भाखियुं, कारण गणी प्रत्यक्ष।।17।।

मानादिक शत्रु महा, निजछंदे न मराय।
जातां सदगुरुशरणमां, अल्प-प्रयासे जाय।।18।।

जे सद्गुरु - उपदेशथी, पाम्यो केवलज्ञान।
गुरु रह्या छद्मस्थ पण, विनय करे भगवान्।।19।।

एवो मार्ग विनयतणो, भाख्यो श्रीवीतराग।
मूल हेतु ए मार्गनो, समझे कोई सुभाग्य।।20।।

असद्गुरु ए विनयनो, लाभ लहे जो कांइ।
महामोहिनी कर्मथी, बुड़े भवजलमाँहि।।21।।

होय मुमुक्षु जीव ते, समजे एह विचार।
होय मतार्थी जीव ते, अवलो ले निर्धार।।22।।

होय मतार्थी तेहने, थाय न आतमलक्ष।
तेह मतार्थी लक्षणो, अहीं कह्यां निर्पक्ष।।23।।

बाह्यत्याग पण ज्ञान नहीं ते माने गुरु सत्य।
अथवा निजकुल-धर्मना, ते गुरुमां ज ममत्व।।24।।

जे जिनदेहप्रमाणने, समवसरणादि सिद्धि।
वर्णन समजे जिननुं, रोकि रहे जिनबुद्धि।।25।।

प्रत्यक्ष सद्‌गुरुयोगमां, वर्ते दृष्टिविमुख।
असद्‌गुरुने दृढ़ करे, निजमानार्थे मुख्य।।26।।

देवादिगति-भंगमां, जे समजे श्रुतज्ञान।
माने निजमतवेषनो, आग्रह मुक्तिनिदान।।27।।

लहयुं स्वरूप न वृत्तिनु, ग्रह्युं व्रत-अभिमान।
ग्रहे नहीं परमार्थने, लेवा लौकिक मान।।28।।

अथवा निश्चयनय ग्रहे, मात्र शब्दनी मांय।
लोपे सद्‌व्यवहारने, साधनरहित थाय।।29।।

ज्ञानदशा पामे नहीं, साधनदशा न कांइ।
पामे तेनो संग जे, ते बुड़े भवमांहि।।30।।

ए पण जीव मतार्थमाँ, निजमानादि काज।
पामे नहीं परमार्थने, अनअधिकारी मांज।।31।।

नहीं कषाय-उपशान्तता, नहीं अन्तर्वैराग्य।
सरलपणुं न मध्यस्थता, ए मतार्थी दुर्भाग्य।। 32।।

लक्षण कह्यां मतार्थीनां मतार्थ जावा काज।
हवे कहुँ आत्मार्थीनां, आत्म-अर्थ सुखसाज।।33।।

आत्मज्ञान त्यां मुनिपणुं, ते साचा गुरु होय।
बाकी कुलगुरु कल्पना, आत्मार्थी नहिं जोय।।34।।

प्रत्यक्ष सद्‌गुरुप्राप्तिनो, गणे परम उपकार।
त्रणे योग एकत्वथी, वर्ते आज्ञाधार।।35।।

एक होय त्रण कालमां, परमार्थनो पंथ।
प्रेरे ते परमार्थने, ते व्यवहार - समंत।।36।।

एम विचारे अन्तरे, शोधे सद्‌गुरुयोग।
काम एक आत्मार्थनु, बीजो नहीं मन-रोग।।37।।

कषायनी उपशान्तता, मात्र मोक्ष-अभिलाष।
भवे खेद, प्राणिदया, त्यां आत्मार्थ-निवास।।38।।

दशा न एवी ज्यां सुधी, जीव लहे नहीं जोग।
मोक्षमार्ग पामे नहीं, मटे न अन्तर् रोग।।39।।

आवे ज्यां एवी दशा, सद्‌गुरुबोध सुहाय।
ते बोधे सुविचारणा, त्यां प्रगटे सुखदाय।।40।।

ज्यां प्रगटे सुविचारणा, त्यां प्रकटे निजज्ञान।
ते ज्ञाने क्षय मोह थई, पामे पद निर्वाण।।41।।

उपजे ते सुविचारणा, मोक्षमार्ग समजाय।
गुरु-शिष्य-संवादथी, भाखुं षट्‌पद आंहि।।42।।

'आत्मा छे', 'ते नित्य छे', छे कर्ता निजकर्म।
छे भोक्ता वली 'मोक्ष छे' मोक्ष-उपाय सुधर्म।।43।।

षट्स्थानक संक्षेपमां, षट्दर्शन पण तेह।
समजावा परमार्थने, कह्यां ज्ञानीए एह।।44।।

नथी दृष्टिमां आवतो, नथी जणातुं रूप।
बीजो पण अनुभव नहीं, तेथी न जीवस्वरूप।।45।।

अथवा देह ज आतमा, अथवा इन्द्रिय प्राण।
मिथ्या जूदो मानवो, नहीं जूदुँ एंधाण।।46।।

वली जो आत्मा होय तो, जणाय ते नहीं केम ?
जणाय जो ते होय तो, घट पट आदि जेम।।47।।

माटे छे नहीं आतमा, मिथ्या मोक्ष-उपाय।
ए अन्तर शंकातणो, समजावो सदुपाय।।48।।

भास्यो देहाध्यास थी, आत्मा देहसमान।
पण ते बन्ने भिन्न छे, प्रगट लक्षणे भान।।49।।

भास्यो देहाध्यासथी, आत्मा देहसमान।
पण ते बन्ने भिन्न छे, जेम असि ने म्यान।।50।।

जे द्रष्टा छे दृष्टिनो, जे जाणे छे रूप।
अबाध्य अनुभव जे रहे, ते छे जीवस्वरूप।।51।।

छे इन्द्रिय प्रत्येक ने, निजनिज विषयनुं ज्ञान।
पांच इन्द्रियना विषयनुं, पण आत्माने भान।।52।।

देह न जाणे तेहने, जाणे न इन्द्रिय प्राण।
आत्मानी सत्तावड़े, तेह प्रवर्ते जाण।।53।।

सर्व अवस्थाने विषे, न्यारो सदा जणाय।
प्रकटरूप चैतन्यमय, ए एंधाण सदाय।।54।।

घट पट आदि जाण तुं, तेथी तेने मान।
जाणनार ते मान नहीं, कहिये केवुं ज्ञान?।।55।।

परम बुद्धि कृशदेहमां, स्थूलदेह मति अल्प।
देह होय जो आतमा, घटे न आम विकल्प।।56।।

जड़चेतननो भिन्न छे, केवल प्रकट स्वभाव।
एकपणुं पामे नहीं, त्रणे काल द्वयभाव।।57।।

आत्मानी शंका करे, आत्मा पोते आप।
शंकानो करनार ते, अचरज एह अमाप।।58।।

आत्माना अस्तित्वना, आपे कह्या प्रकार।
संभव तेनो थाय छे, अन्तर कर्ये विचार।।59।।

बीजो शंका थाय त्यां, आत्मा नहीं अविनाश।
देहयोगथी ऊपजै, देह-वियोगे नाश।।60।।

अथवा वस्तु क्षणिक छे, क्षणे-क्षणे बदलाय।
ए अनुभवथी पण नहीं, आत्मा नित्य जणाय।।61।।

देहमात्र संयोग छे, वली जड़, रूपी, दृश्य।
चेतनानां उत्पत्ति-लय, कोना अनुभव-वश्य।।62।।

जेना अनुभव-वश्य ए, उत्पन्न-लयनुं ज्ञान।
ते तेथी जूदा विना, थाय न केमें भान।।63।।

जे संयोगो देखिये, ते ते अनुभव दृश्य।
उपजे नहीं संयोगथी, आत्मा नित्य प्रत्यक्ष।।64।।

जड़थी चेतन ऊपजे, चेतनथी जड़ थाय।
एवो अनुभव कोई ने, क्यारे कदी न थाय।।65।।

कोई संयोगोथी नहीं, जेनी उत्पत्ति थाय।
नाश न तेनो कोईमां, तेथी नित्य सदाय।।66।।

क्रोधादि तरतम्यता, सर्पादिकनी मांय।
पूर्वजन्मसंस्कार ते, जीवनित्यता त्यांय।।67।।

आत्मा द्रव्ये नित्य छे, पर्याये पलटाय।
बालादिवय-त्रणेयनुं, ज्ञान एकने थाय।।68।।

अथवा ज्ञान क्षणिकनुं जे जाणी वदनार।
वदनारो ते क्षणिक नहीं, कर अनुभव निर्धार।।69।।

क्यारे कोई वस्तुनो, केवल होय न नाश।
चेतन पामे नाश तो, केमां भले तपास ?।।70।।

कर्ता जीव न कर्मनो, कर्म ज कर्ता कर्म।
अथवा सहजस्वभाव कां, कर्म जीदनो धर्म।।71।।

आत्मा सदा असंग ने, करे प्रकृति बन्ध।
अथवा ईश्वर - प्रेरणा, तेथी जीव अबन्ध।।72।।

माटे मोक्ष - उपायनो, कोई न हेतु जणाय।
कर्मतणुं कर्तापणुं, कां नहीं, कां नहीं जाय ?।।73।।

होय न चेतन प्रेरणा, कोण ग्रहे तो कर्म ?
जड़स्वभाव नहीं प्रेरणा, जुओ विचारी मर्म।।74।।

जो चेतन करतु नथी, थतां नथी तो कर्म।
तेथी सहज स्वभाव नहीं, तेमज नहीं जीवधर्म।।75।।

केवल होत असंग जो, भासत तने न केम ?
असंग छे परमार्थ थी, पण निजभाने तेम।।76।।

कर्ता ईश्वर कोई नहीं, ईश्वर शुद्ध स्वभाव।
अथवा प्रेरक ते गण्ये, ईश्वर दोष-प्रभाव।।77।।

चेतन जो निजभानमां, कर्ता आप स्वभाव।
वर्ते नहीं निजभानमां, कर्ता कर्मप्रभाव।।78।।

जीव कर्मकर्ता कहो, पण भोक्ता नहिं सोय।
शुं समजे जड़कर्म के, फलपरिणामी होय।।79।।

फलदाता ईश्वर गण्ये, भोक्तापणुं सधाय।
एम कहे ईश्वरतणुं, ईश्वरपणुं ज जाय।।80।।

ईश्वर सिद्ध थया विना, जगत-नियम नहिं होय।
पछी शुभाशुभ-कर्मनां, भोग्यस्थान नहीं कोय।।81।।

भावकर्म निजकल्पना, माटे चेतनरूप।
जीववीर्यनी स्फुरणा, ग्रहण करे जडधूप।।82।।

झेर सुधा समजे नहिं, जीव खाय, फल थाय।
एम शुभाशुभकर्मनुं भोक्तापणुं जणाय।।83।।

एक रंक ने एक नृप, ए आदी जे भेद।
कारण विना न कार्य ते, ए ज शुभाशुभ वेद्य।।84।।

फलदाता ईश्वरतणी, एमां नथी जरूर।
कर्मस्वभावे परिणमे, थाय भोगथी दूर।।85।।

ते ते भोग्यविशेषना, स्थानक द्रव्यस्वभाव।
गहन बात छे शिष्य आ, कही संक्षेपे साव।।86।।

कर्ता भोक्ता जीव हो, पण तेनो नहिं मोक्ष।
वीत्यो काल अनन्त पण, वर्तमान छे दोष।।87।।

शुभ करे फल भोगवे, देवादि गति मायं।
अशुभ करे नरकादि फल, कर्म रहित न क्यां।।88।।

जेग शुभाशुभकर्मपद, जाण्यां सफल प्रमाण।
तेम निवृत्तिसफलता, माटे मोक्ष सुजाण।।89।।

वित्यो काल अनन्त ते, कर्म शुभाशुभ भाव।
तेह शुभाशुभ छेदतां, उपजे मोक्ष स्वभाव।।90।।

देहादिक - संयोगनो आत्यन्तिक वियोग।
सिद्ध मोक्ष शाश्वतपदे, निज अनन्त सुख भोग।।91।।

होय कदापि मोक्षपद, नहिं अविरोध उपाय।
कर्मो काल अनन्तनां, शाथी छेद्यां जाय।।92।।

अथवा मत दर्शन घणां, कहे उपाय अनेक।
तेमां मत साचो कयो ? बने न एह विवेक।।93।।

कयी जातिमां मोक्ष छे, कया वेषमा मोक्ष।
एनो निश्चय ना बने, घणा भेद ए दोष।।94।।

तेथी एम जणाय छ, मले न मोक्ष-उपाय।
जीवादी जाण्या तणो, शो उपकार ज थाय ।।95।।

पांचे उत्तरथी थयुं, समाधान सर्वांग।
समझुं मोक्ष-उपाय तो, उदय उदय सद्भाग्य।।96।।

पांचे उत्तरनी थई, आत्मा विषे प्रतीत।
थार्शे मोक्षोपायनी, सहज प्रतीत ए रीत।।97।।

कर्मभाव अज्ञान छे, मोक्षभाव निजवास।
अंधकार अज्ञानसम, नासे ज्ञानप्रकाश।।98।।

जे जे कारण बन्धनां, तेह बन्धनो पंथ।
ते कारण छेदकदशा, मोक्षपंथ भव अंत।।99।।

राग, द्वेष, अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रन्थ।
थाय निवृत्ति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ।।100।।

आत्मा सत् - चैतन्यमय सर्वाभास - रहीत।
जेथी केवल पामिये, मोक्षपंथ ते रीत।।101।।

कर्म अनन्त प्रकारनां, तेमां मुख्ये आठ।
तेमां मुख्ये मोहनीय, हणाय ते कहुं पाठ।।102।।

कर्म मोहनीय भेद ने, दर्शन, चारित्र नाम।
हणे बोध वीतरागता, अचूक उपाय आम।।103।।

कर्मबन्ध क्रोधादिथी, हणे क्षमादिक तेह।
प्रत्यक्ष अनुभव सर्वने, एमां शो सन्देह।।104।।

छोड़ी मत दर्शन तणो, आग्रह तेम विकल्प।
कह्यो मार्ग आ साधशे, जन्म तेहना अल्प।।105।।

षट्पदना षट्प्रश्न ते, पूछ्या करी विचार।
ते पदवी सर्वांगता, मोक्षमार्ग निरधार।।106।।

जातिवेषनो भेद नहीं, कह्यो मार्ग जो होय।
साधे ते मुक्ति लहे, एमां भेद न कोय।।107।।

कषायनी उपशान्तता, मात्र मोक्ष-अभिलाष।
भवे खेद अन्तर दया, ते कहिये जिज्ञास।।108।।

ते जिज्ञासु जीव ने, थाय सद्गुरुबोध।
तो पामे समकितने, वर्ते अन्तरशोध।।109।।

मत-दर्शन - आग्रह तजी, वर्ते, सद्गुरुलक्ष।
लहे शुद्ध समकित ते, जेमां भेद न पक्ष।।110।।

वर्ते निजस्वभावनो अनुभव लक्षप्रतीत।
वृत्ति वहे निजभावमां, परमार्थे समकित।।111।।

वर्धमान समकीत थई, टाले मिथ्याभास।
उदय थाय चारित्रनो, वीतरागपद-वास।।112।।

केवल निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान।
कहिये केवलज्ञान ते, देह छतां निर्वाण।।113।।

कोटिवर्षनुं स्वप्न पण, जाग्रत थतां शमाय।
तेम विभाव अनादिनो, ज्ञान थतां दूर थाय।।114।।

छूटे देहाध्यास तो, नहीं कर्ता तुं कर्म।
नहीं भोक्ता तुं तेहनो, एज धर्मनो मर्म।।115।।

एम धर्मथी मोक्ष छे, तुं छे मोक्षस्वरूप।
अनन्तदर्शन - ज्ञान तुं, अव्याबाधस्वरूप।।116।।

शुद्ध बुद्ध चौतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम।
बीजुं कहिये केटलुं ? कर विचार तो पाम।।117।।

निश्चय सर्वे ज्ञानिनो, आवी अत्र शमाय।
धरी मौनता एम कहि, सहज समाधी-मांय।।118।।

सद्गुरुना उपदेशथी आव्युं अपूर्व भान।
निजपद निजमांही लह्युं, दूर थयुं अज्ञान।।119।।

भास्युं निजस्वरूप ते, शुद्ध चेतनारूप।
अजर, अमर, अविनाशी ने, देहातीत-स्वरूप।।120।।

कर्ता, भोक्ता कर्मनो, विभाव वर्ते ज्यां य।
वृत्ति वही निजभावमां, थयो अकर्ता त्यां य।।121।।

अथवा निज परिणाम जे शुद्धचेतनारूप।
कर्ता, भोक्ता तेहनो, निर्विकल्पस्वरूप।।122।।

मोक्ष कह्यो निजशुद्धता, ते पामे ते पंथ।
समजाव्यो संक्षेपमां, सकल मार्ग निर्ग्रन्थ।।123।।

अहो ! अहो ! श्रीसद्गुरु, करुणासिन्धु अपार।
आ पामर पर प्रभु कर्यो, अहो! अहो उपकार।।124।।

शुं प्रभुचरण कने धरूं ? आत्मार्थी सौ हीन।
ते तो प्रभुए आपियो, वर्तुं चरणाधीन।।125।।

आ देहादी आजथी वर्तो प्रभु - आधीन।
दास, दास, हुं दास छुं, देह प्रभुनो दीन।।126।।

षट्स्थानक समजावि ने, भिन्न बताव्यो आप।
म्यानथ की तरवारवत्, ए उपकार अमाप।।127।।

दर्शन षटे समाय छे, आ षट्स्थानक मांहि।
विचारतां विस्तारथी, संशय रहें न कांइ।।128।।

आत्मभ्रान्तिसम रोग नहिं, सद्गुरु वैद्य सुजाण।
गुरुआज्ञा-समपथ्य नहिं, औषध विचार ध्यान।।129।।

जो इच्छो परमार्थ तो, करो सत्य पुरुषार्थ।
भयस्थिति आदी नाम लइ, छेदो नहिं आत्मार्थ।।130।।

निश्चय वाणी सांभली, साधन तजवां नोय।
निश्चय राखी लक्षमां, साधन करवां सोय।।131।।

नय निश्चय एकान्तथी, आमां नथी कहेल।
एकान्ते व्यवहार नहीं, वन्ने साथ रहेल।।132।।

गच्छ-मतनी, जे कल्पना, ते नहिं सद्व्यवहार।
भान नहीं निजरूपनुं, ते निश्चय नहिं सार।।133।।

आगल ज्ञानी थई गया, वर्तमानमां होय।
थाशे काल भविष्यमां, मार्गभेद नहिं कोय।।134।।

सर्व जीव छे सिद्धसम, जे समजे ते थाय।
सद्गुरु-आज्ञा जिनदशा, निमित्त कारण मांय।।135।।

उपादाननुं नाम लई, ए जे तजे निमित।
पामे नहीं सिद्धत्वने, रहे भ्रान्तिमां स्थित।।136।।

मुखथी ज्ञान कथे अने, अन्तर छूट्यो न मोह।
ते पामर प्राणी करे, मात्र ज्ञानिनो द्रोह।।137।।

दया, शान्ति, समता, क्षमा, सत्य, त्याग, वैराग्य।
होय मुमुक्षु घट विषे, एह सदाय सुजाग्य।।138।।

मोहभाव क्षय होय ज्यां, अथवा होय प्रशान्त।
ते कहिये ज्ञानीदशा, बाकी कहिये भ्रान्त।।139।।

सकल जगत् ते एठवत्, अथवा स्वप्न-समान।
ते कहिये ज्ञानीदशा, बाकी वाचाज्ञान।।140।।

स्थानक पांच विचारी ने, छठे वर्ते जेह।
पामे स्थानक पांचमुं, एमां नहीं संदेह।।141।।

देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत।
ते ज्ञानीनां चरणमां, हो वन्दन अगणीत।।142।।

○○○

अमूल्य तत्त्व-विचार

(श्रीमद् रायचन्द जी कृत)

बहु पुण्यकेरा पुंज थी शुभदेह मानवनो मल्यो।
तोये अरे! भवचक्रनो, आंटो नहीं एके टल्यो।।
सुख प्राप्त करतां सुख टले छे, लेश ए लक्षे लहो।
क्षण-क्षण भयंकर भावमरणे कां अहो राची रहो।।1।।

लक्ष्मी अने अधिकार वधतां शुं वध्युं ते तो कहो।
शुं कुटुम्ब के परिवारथी, वधवापणुं ए नय ग्रहो।।
वधवापणुं संसारनुं नरदेहने हारी जवो।
एनो विचार नहीं अहो हो, एक पल तमने हवो।।2।।

निर्दोष सुख, निर्दोष आनन्द, ल्यो गमे त्यांथी भले।
ए दिव्य शक्तिमान जेथी, जंजिरेथी निकले।।
परवस्तुमा नहीं मुंझवो, एनी दया मुजने रही।
ए त्यागवा सिद्धांत के, पश्चात् दुख ते सुख नहीं।।3।।

हुं कोण छुं? क्याथी थयो? शुं स्वरूप छे मारुं खरुं?
कोना संबंधे वलगणा छे? राखुं के ए परिहरुं?
एना विचार विवेकपूर्वक शान्तभावे जो कर्या।
तो सर्व आत्मिक ज्ञाननां सिद्धान्ततत्त्वो अनुभव्यां।।4।।

ते प्राप्त करवा वचन कोनुं सत्य केवल मानवुं?
निर्दोष नरनुं कथन मानो, तेह जेणे अनुभव्युं।
रे आत्म तारो! आत्म तारो! शीघ्र एने ओलखो।
सर्वात्ममां समदृष्टि द्यो, आ वचन ने हृदय लखो।।5।।

○○○

चौदह स्वप्न का स्तवन

राय सिद्धारथ घर पट-राणी, नामे त्रिसला सुलक्षणा जी।
राज-भवन मांहे पलंगे पोढ़तां, चौदह सुपना राणी लह्या जी।।1।।

पहले सुपने गजवर दीठो, बीजे वृषभ सुहामणो जी।
तीजे सिंह सुलक्षण दीठो, चौथे लक्ष्मी देवता जी।।2।।

पांचवें पंचवरणी फूलनी माला, छठे चन्दा अमिय-झर्‍यो जी।
सातमे सूरज, आठमे ध्वजा, नवमे कलश अमिय भरयो जी।।3।।

पद्‌म सरोवर दशमे दीठो, क्षीर समुद्र दीठो ग्यारमे जी।
देव विमान ते बारमें दीठो, रण-झण घंटा बाजतो जी।।4।।

रतनोनी राशि ते तेरमे दीठी, अग्निशिखा दीठी चउदमे जी।
चौदह सुपन देखी राणी जागी, राय समीपे पहुंचिया जी।।5।।

सुणोजी स्वामी मैं सुपना दीठा, पाछली रात रलियामणा जी।
राजा सिद्धारथ पंडित तेड्‌या, कहो पंडित फल एहना जी।।6।।

अम कुलमण्डन तुम कुलदीवो, जयवंता तीर्थंकर जन्मशे जी।
जे नर गावे ते सुख पावे, आनन्द रंग वधामणा जी।।7।।

○○○

श्री दीपावली का स्तवन

पूरब दिशे हुई पावा पुरी, धन धान्य ऋद्धि समृद्धि भरी।
हस्तीपाल नामे तिहां भूपाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।1।।

गौतमे गुरुनी सेवा कीधी मनआनी, एक रात में हुआ केवलज्ञानी।
जी के चौदह राजु रह्या भाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।2।।

अठारे राय हुआ भगता, दोय दोय पोसा कीधा लगता।
जी के वीर सामुं रह्या निहाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।3।।

प्रभुए दोय दिनरो संथारो कीधो, सोल पहोर लगे उपदेश दीधो।
प्रभु मुक्ति गया कर्माने गाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।4।।

प्रभुजी तीस वर्ष संयम लीधो, निज आतम कारज सिध कीधो।
वर्ष बियालीस दीक्षा पाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।5।।

प्रभु ने सात सौ चेला चौदह सौ चेली,
ज्यां ने मुक्ति महलां में दिया मेली।
जेणे कर्मना बीज दिया बाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।6।।

प्रभु ने एक राणी ने हुई एक बेटी, जी के मुक्ति गया दुख दिया मेटी।
जमाई हुआ ज्यांरो जमाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।7।।

प्रभु ने एक बहन ने एकज भाई, जी के स्वर्ग गया समकित पाई।
श्रावकना व्रत शुद्ध पाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।8।।

ऋषभदत्त ने देवानन्दा माता, नयणे निरखंता हुई साता।
दोनुं मुक्ति गया कर्माने गाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।9।।

सिद्धारथ राजा ने त्रिशला राणी, जेणे संथारो कीधो समता आणी।
अच्युत देवलोके टांको दियो झाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।10।।

जेणी राते वीरे मुक्ति पामी, केवल पाम्या गौतम स्वामी।
ज्यांरो जाप जपो नव-करवाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।11।।

सुधर्मा स्वामी हुआ पाट धणी, ज्यांरी कीर्ति महिमा जोर घणी।
दया मारग दीयो अजवाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।12।।

ज्यांरे पाटे हुआ जंबू वैरागी, राते परण्या प्रभाते आठों त्यागी।
सोलं वर्ष में काटी कर्म जाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।13।।

आठे भामिनी वैराग्ये भीनी, प्रभाते पियु साथे दीक्षा लीनी।
अवीहड़ प्रीति सघली पाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।14।।

प्रभवो पण राजानो बेटो, जी के जंबू कुंवर से हुओ भेटो।
पाचं सौ से वैराग्य पाम्यो तत्काली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।15।।

बीस जिन समेत-शिखर सीझ्या, अष्टापद गिरनार दोय सीझ्या।
वासुपूज्य सीझ्या चंपा चाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।16।।

महावीरे चौमास कीधो पावापुरी, कारतक वदी अमावस मुक्ति वरी।
भणतां सुणतां मंगल-माली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।17।।

दिन दीवालीनो पायो टाणो, तो रात्रि भोजन अशनादि नहिं खाणो।
ज्यांरो जाप जपो शीयल पाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।18।।

गुरु चेलानी जोड़ी सूरज शशी, ऋषि रायचन्द कहे म्हारे मनड़े वशी।
मैं जुगतीशुं जोड़ी जोड़ टकशाली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।19।।

पूज्य जयमलजी रहिया पासो, शहर नागौर में कियो चौमासो।
संवत् अठारा वर्ष पीस्ताली, वीर मुक्ति विराज्या दिन दिवाली।।20।।

○○○

रानी पद्मावती की ढाल

(आत्म आलोयणा)

हिवे राणी पद्मावती, जीवराशि खिमावे।
जाणपणुं जग ते भलुं इण वेला जो आवे।।ते. 1।।

ते मुझ मिच्छामि दुक्कड़ं, अरिहंतों नी साख।
जे मैं जीव विराधिया, चौरासी लाख।।ते. 2।।

सात लाख पृथ्वी तणा, साते अप्काय।
सात लाख तेऊ तणा, साते वली वाय।।ते. 3।।

दस लाख प्रत्येक वनस्पति, चउदे साधार।
बी-ती-चौरिंद्रिय जीवनी, बे बे लाख विचार।।ते. 4।।

देवता तिर्यंच नारकी, चार चार प्रकाशी।
चौदह लाख मनुष्य ना, ये लाख चौरासी।।ते. 5।।

इण भव परभव सेविया, जे पाप अठार।
त्रिविध त्रिविध करि परिहरूं दुर्गतिना दातार।।ते. 6।।

हिंसा कीधी जीवनी, बोल्या मृषावाद।
दोष अदत्तादानना मैथुन उन्माद।।ते. 7।।

परिग्रह मेल्यो कारमो, कीधो क्रोध विशेष।
मान माया लोभ मैं किया, वली राग ने द्वेष।।ते. 8।।

कलह करी जीव दूहव्या, दीधा कूड़ा कलंक।
निंदा कीधी पार की, रति अरति निःशंक।।ते. 9।।

चाड़ी कीधी पार की, कीधो थापण-मोसो।
कुगुरु कुदेव कुधर्मनो, भलो आण्यो भरोसो।।ते. 10।।

खाटकी ने भवे में किया, जीवना वध-घात।
चिड़ीमार भवे चरकला, मार्‍या दिन-रात।।ते. 11।।

काजी मुल्ला ने भवे, पढ़ी मंत्र कठोर।
जीव अनेक जिबह किया, कीधा पाप अघोर।।ते. 12।।

माछी ने भवे माछला, झाल्या जलवास।
धीवर भील कोल भवे, मृग पाड्या पास।।ते. 13।।

कोटवाल ने भवे में किया, आकरा कर दण्ड।
बंदीवान मराविया, कोरड़ा छड़ी दण्ड।।ते. 14।।

परमाधामी ने भवे, दीधा नारकी दुःख।
छेदन भेदन वेदना, ताड़न अति तिक्ख।।ते. 15।।

कुंभार ने भवे में किया, नीमाह पचाव्या।
तेली भवे तिल पीलिया, पापे पिंड भराव्या।।ते. 16।।

हाली-भवे हल खेड़िया, फोड्या पृथ्वीना पेट।
सूड़ नियाण किया घणा, दीधा बलद चपेट।।ते. 17।।

माली भवे रूंख रोपिया, नानाविध वृक्ष।
मूलपत्र फल फूलना, लाग्या पाप अलक्ष।।ते. 18।।

अधोवाइया ने भवे, भरिया अधिका भार।
पोठी ऊंट कीड़ा पड्या, दया नाणी लगार।।ते. 19।।

छीपा ने भवे छेतर्‍या, कीधा रंगण पास।
अग्नि आरम्भ किया घणा, धातुवाद अभ्यास।।ते. 20।।

शूरपणे रण झूझता, मार्‍या माणसवृन्द।
मदिरा-मांस माखण भख्या, खाधा मूल ने कंद।।ते. 21।।

खाण खणावी धातुनी, सर पाणी उलीच्या।
आरंभ कीधा अति घणा, पोते पापज संच्या।।। ते. 22।।

अङ्गारकर्म किया वली, वन में दव दीधा।
कसम खाधी वीतरागनी, कूड़ा दोष ज दीधा।।। ते. 23।।

बिल्लीभवे उन्दर गल्या, गिरोली हत्यारी।
मूढ़ गंवार तणे भवे, मैं जूं लीखां मारी।।। ते. 24।।

भडभुंजा तणे भवे, एकेन्द्रिय जीव।
जुवार चणा गेहूं सेकिया, पाड़ता रीव।।। ते. 25।।

खांडन पीसण गारना, किया आरम्भ अनेक।
रांधण इंधण अग्निना, कीधा पाप उद्वेग।।। ते. 26।।

विकथा चार कीधी वली, सेव्या पंच प्रमाद।
इष्टवियोग पड़ाविया, रोवन विषवाद।। ते. 27।।

साधु अने श्रावक तणा, व्रत लेई ने भांग्या।
मूल अने उत्तर तणा, मुझ दूषण लाग्या।। ते. 28।।

सांप बिच्छू सिंह चीतरा, शकरा ने समली।
हिंसक जीव तणे भवे, हिंसा कीधी सबली।। ते. 29।।

सुवावड़ी दूषण घणा, वली गर्भ गलाव्या।
जीवाणी ढोली घणी, शील व्रत भंजाव्या।। ते. 30।।

भव अनन्त भमतां थकां, कीधो देह-सम्बन्ध।
त्रिविध-त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबंध।। ते. 31।।

भव अनन्त भमतां थकां, कीधो परिग्रह सम्बन्ध।
त्रिविध-त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबंध।। ते. 32।।

भव अनन्त भमतां थकां, कीधो कुटुम्ब-सम्बंध।
त्रिविध-त्रिविध करि वोसिरूं, तिणशुं प्रतिबंध।। ते. 33।।

इण पर इहभव परभवे, कीधा पाप अखत्र।
त्रिविध-त्रिविध करि वोसिरूं, करूं जन्म पवित्र।। ते. 34।।

इण विध यह आराधना, भावे करसे जेह।।
श्याम सुन्दर कहे पापथी, बली छूटसे तेह।। ते. 35।।

०००

अमृतमय उपदेश धारा

दया सुखों की बेलड़ी, दया सुखों की खान।
अनन्त जीव मुक्ते गया, दया तणां फल जान।।

हिंसा दुख की बेलड़ी, हिंसा दुख की खान।
अनन्त जीव नरके गया, हिंसा तणां फल जान।।

चेतो रे भवि प्राणिया, यह संसार असार।
स्थिरता कुछ दीसे नहीं, धन जोबन परिवार।।

धर्म करो तुम प्राणिया, धर्म थकी सुख होय।
धर्म करंता जीव ने, दुखी न दीठा कोय।।

जीव दया पाली सही, पाली छै छह काय।
बसता घरनो पाहुणो, मीठा भोजन खाय।।

जीवदया पाली नहीं, पाली नहीं छह काय।
सूना घरनो पाहुणो, जिम आयो तिम जाय।।

धर्म करत संसार-सुख, धर्म करत निर्वान।
धर्मपंथ साधे बिना, नर तिर्यंच-समान।।

जहां दया तहां धर्म है, जहां लोभ तहां पाप।
जहां क्रोध तहां काल है, जहां क्षमा तहां आप।।

क्षमा तुल्य कोउ तप नहीं, सुख संतोष-समान।
नहीं तृष्णा सम व्याधि हू, धर्म दया समान।।

दुख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय।।

ooo

विनय!

अहो जगतगुरु, एक सुनिए अरज हमारी।
तुम हो दीन-दयाल, मैं दुखिया संसारी।।1।।

इस भव-वन में वादि, काल अनादि गमायो।
भ्रमत चहुंगति मांहि, सुख नहिं दुख बहु पायो।।2।।

कर्म महारिपु जोर, एक ना कान करैं जी।
मनमान्या दुख देहिं, काहू सो न डरैं जी।।3।।

कब हूं इतर निगोद, कब हूं नरक दिखावैं।
सुर-नर-पशुगति मांहि, बहुविध नाच नचावैं।।4।।

प्रभु! इनके परसंग, भव माहिं बुरे जी।
जे दुख देखे देव तुमसो नाहिं दुरे जी।।5।।

एक जन्म की बात, कहि न सको सुनि स्वामी।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरजामी।।6।।

मैं तो एक अनाथ, ये मिली दुष्ट घनेरे।
कियो बहुत बेहाल, सुनिये साहिब मेरे।।7।।

ज्ञान-महानिधि लूटि, रंक निबल करि डार्यो।
इनने तुम मुझ मांहि, हे जिन! अन्तर पार्यो।।8।।

पाप पुण्य की दोइ, पांयनि बेरी डारी।
तन कारागृह मांहि, मोहि दियो दुख भारी।।9।।

इनको नेक बिगार, मैं कुछ नाहिं कियो जी।
बिन कारन जगवंद्य! बहुविधि वैर लियो जी।।10।।

अब आयो तुम पास, सुनि जिन सुजस तिहारो।
नीति-निपुण जगराय, कीजो न्याय हमारो।।11।।

दुष्टन देहु निकास, साधन को रख दीजे।
विनवै 'भूधरदास' हे प्रभु ढील न कीजै।।12।।

ooo

गुरुदेव

वे गुरु मेरे उर बसो, जे भवजलधि-जहाज।
आप तिरे पर तारहिं, ऐसे श्री मुनिराज।।टेक।।

मोह महारिपु जीत के, छोड़े सब घर-बार।
होय विरागी वन बसे, आत्म शुद्ध विचार।।1।।

रोग-उरग-बिल वपु गिण्यो, भोग सुजंग समान।
कदली तरु संसार है, त्यागो सब यह जान।।2।।

पंच महाव्रत आदरें, पांचों समिति - समेत।
तीन गुपति पालें सदा, अजर अमर पद हेत।।3।।

धर्म धरें दश लक्षणी, भावें भावना बार।
सहें परीसह बीस दो चारित-रतन भण्डार।।4।।

रत्न-त्रय निज उर धरें, अरु निर्ग्रन्थ त्रिकाल।
जीते काम-पिशाच को, स्वामी परम दयाल।।5।।

जेठ तपै रवि आकरो, सूखे सरवर नीर।
शैल-शिखर मुनि तप तपै दाझैं नगन शरीर।।6।।

पावस रैन डरावनी, बरसे जलधर-धार।
तरु-तल निवसैं साहसी, बाजे झंझा वार।।7।।

शीत पड़े कपि-मद गलै, दाझे सब वनराय।
ताल तरंगिणी के तटै, ठाडे ध्यान लगाय।।8।।

इण विधि दुर्द्धर तप तपै, तीनों काल मंझार।
लागे सहज स्वरूप में, तन सों ममत निवार।।9।।

पूरब-भोग न चिन्तवैं, आगम-वांछा नाहिं।
चहूं गति के दुखसों डरैं, सुरति लगी शिव मांहि।।10।।

रंग-महल में पोढ़ते, कोमल सेज बिछाय।
ते कंकराली भूमि में सोवें संवर काय।।11।।

गज चढ़ि चलते गर्व सों, सेना सजि चतुरंग।
निरखि-निरखि पग वे धरैं, पालै करुणा अंग।।12।।

षट रस भोजन जीमता, स्वर्ण थाल मझार।
अब सब छिटकायने, प्रासुक लेते आहार।।13।।

वे गुरु चरण जहां धरैं, जंगम तीरथ जेह।
सो रज मम मस्तक चढ़ो, 'भूधर' मांगे जी एह।।14।।

ooo

धर्म मंगल

(दशवैकालिक सूत्र का प्रथम अध्ययन)

धम्मो मंगल महिमानिलो, धर्म-समो नहिं कोय।
धर्म थकी नमे देवता, धर्मे शिव-सुख होय।।1ध.।।

जीव दया नित पालिये, संजम सतरह प्रकार।
बारा-भेदे तप तपे, धर्मतणो यह सार।।2ध०।।

जिम तरुवरने फूलड़े, भमरो रस लेवा जाय।
तिम संतोषे आतमा, फूल ने पीड़ा नहिं थाय।।3ध.।।

इणविध जावे गोचरी, बहोरे सूझतो आहार।
ऊँच-नीच-मध्यम कुले, धन धन ते अनगार।।4ध.।।

मुनिवर मधुकरसम कह्या, नहीं तृष्णा नहीं लोभ।
लाध्यो भाड़ो दिये देह ने, अणलाध्यां संतोष।।5ध.।।

अध्ययन पहले दुमपुप्फिये, सखरा अर्थ-विचार।
पुण्यकलश-शिष्य जेतसी, धर्मे जय-जयकार।।6ध०।।

○○○

चार शरण

प्रातः उठी ने सुमरिये हो, भविजन मंगलिक शरणा चार।
आपदा मिटे संपदा हुवे हो, भविजन दौलतना दातार।।1।।
हिरदै राखिए हो, भविजन मंगलिक शरणा चार।।टेक।।
अर्हंत सिद्ध साधू तणां हो, भविजन केवलिभाषित धर्म।
ये शरणा नित ध्यावतां हो, भविजन टूटें आठों कर्म।।2।।
वाटे घाटे चालतां हो, भविजन रात दिवस मंझार।
ग्राम नगर पुर विचरतां हो, भविजन कष्टनिवारणहार।।3।।
ये चारे सुखकारिया हो, भविजन ये चारे जगसार।
ये चारे उत्तम कह्या हो, भविजन ये चारे हितकार।।4।।
डायण सायण भूतड़ा हो, भविजन सिंह बाघ ने सूर।
वैरी दुश्मन चोरटा हो, भविजन रहे ते सगला दूर।।5।।
राखो शरणारी आसता हो, भविजन नेडो नहिं आवे रोग।
आनन्द बरते इण नामथी हो, भविजन वहाला तणो संयोग।।6।।
सुखसाता बरते घणी हो, भविजन जो ध्यावे नर-नार।
परभव जातां जीव ने हो, भविजन एह तणो आधार।।7।।
मनचिन्तित मनोरथ फले हो, भविजन बरते कोड़ कल्याण।
शुद्ध मने नित ध्यावतां हो, भविजन निश्चय पद निरवाण।।8।।
इण सरिखो शरणो नहीं हो, भविजन इण सरिखो नहिं नाम।
इण सरिखो मित्र नहीं हो, भविजन गाँव नगर पुर ठाम।।9।।
दान शील तप भावना हो, भविजन यह जग में तत सार।
करो अराधो भाव से हो, भविजन पामो मोक्ष द्वार।।10।।
जोड कीधी छै जुगति से हो, भविजन पाली शेषे काल।
ऋषि चौथमल जी इम भणे हो, भविजन सुणजो बाल-गोपाल।।11।।

प्रार्थना

हमारी वीर हरो भव पीर।
मैं दुख-तपित दयामृत-सर तुम, लख आयो तुम तीर।
तुम परमेश मोख मग-दर्शक, मोह दावानल-नीर।।1।।
तुम विनु हेतु जगत-उपकारी, शुद्ध चिदानन्द धीर।
गणपति-ज्ञानसमुद्र न लंघै, तुम गुणसिन्धु गहीर।।2।।
याद नहीं मैं विपति सही जो, धर-धर अमित शरीर।
तुम गुण चिंतत नशत तथा भय, ज्यों घन चलत समीर।।3।।
कोटि वार की अरज यही है, मैं दुख सहुँ अधीर।
हरहु वेदना - फन्द 'दौल' को, कतर कर्म - जंजीर।।4।।

ooo

नाम-महिमा

रे मन ! भज-भज दीनदयाल।
जाके नाम लेत इक छिन में, कटें कोटि अघजाल।।टेक।।
परम ब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखे होत निहाल।
सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजे काल।।1।।
इन्द्र फनिंद्र चक्कधर गावें, जा को नाम रसाल।
जाको नाम ज्ञान परगासे, नाशै मिथ्या-जाल।।2।।
जा के नाम समान नहीं कछु ऊरध मध्य पाताल।
सोई नाम जपो नित द्यानत. छोड निषय विकराल।।3।।

ooo

आलोयणा

आरम्भ-विषय-कषाय वश, भमियो काल अनन्त।
लाख चौरासी योनि में, अब तारो भगवन्त।।1।।
करुणानिधि कृपा करी, कठिन कर्म मम छेद।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, करिये ग्रन्थी-भेद।।2।।
पतित उद्धारण नाथजी, अपनो विरुद विचार।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारंबार।।3।।
क्षमा करो सब माहरा, आज तलक रा दोष।
दीनदयालु देवो मुझे, श्रद्धा शील संतोष।।4।।
देव-गुरु-धर्म-सूत्र में, नवतत्त्वादिक जोय।
अधिका ओछा जो कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय।।5।।
जो मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
प्रभु तुम्हारी साख से, बार-बार धिक्कार।।6।।
कहने में आवे कहां, अवगुण भर्या अनन्त।
घट-घट अन्तरयामी तुम, जानो सब भगवन्त।।7।।
बुरा बुरा सबको कहे, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूं आपना, मुझसा बुरा न कोय।।8।।
आत्म-निंदा शुद्ध भणी, गुणवन्त वन्दन भाव।
राग-द्वेष पतला करी, सबसे खिमत-खिमाव।।9।।
छूटूं पिछले पाप से, नवा न बांधू कोय।
श्री गुरुदेव-प्रसाद से, सफल मनोरथ होय।।10।।
घड़ी-घड़ी पल-पल सदा, प्रभु स्मरण को चाव।
नरभव सफलो जो करे, दान-शील-तप-भाव।।11।।
अरहंत देव निर्ग्रन्थ गुरु, संवर-निर्जरा धर्म।
केवलिभाषित शास्त्र यह, जैन धर्म का मर्म।।12।।

ooo

लाला श्री रणजीत सिंह जी कृत

श्री बृहदालोयणा

(आत्म-आलोचना का बड़ा पाठ)

दोहा

सिद्ध श्री परमात्मा, अरिगंजन[1] अरिहंत।
इष्टदेव वंदूं सदा, भयभंजन भगवंत।।1।।

अरिहंत सिद्ध समरूं सदा, आचारज उवज्झाय।
साधु सकल के चरण कुं, वंदूं शीश नमाय।।2।।

शासन नायक सुमरिये, भगवन्त वीर जिनन्द।
अलिय[2] विघन दूरे हरे, आपे परमानन्द।।3।।

अंगूठे अमृत बसे, लब्धि तणा भण्डार।
श्री गुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार।।4।।

श्री गुरुदेव प्रसाद से, होते मनोरथ सिद्ध।
ज्यों घन[3] बरसत बेलि तरु, फूल फलन की वृद्ध।।5।।

पंच परमेष्ठी देव को, भजनपूर पहिचान।
कर्म अरि भाजे सभी, होवे परम कल्याण।।6।।

श्री जिन युगपद कमल में, मुझ मन भ्रमर बसाय।
कब ऊगे वो दिन करूं, श्रीमुख दर्शन पाय।।7।।

---

1. कर्मरूपी शत्रु का नाश करने वाले
2. मिथ्या
3. मेघ

प्रणमी पदपंकज[1] भणी, अरिगंजन अरिहन्त।
कथन करूं अब जीव का, किंचित् मुझ विरतंत।।8।।

आरम्भ विषय कषाय वश, भमियो काल अनंत।
लख चौरासी योनि से, अब तारो भगवन्त।।9।।

देव गुरु धर्म सूत्र में, नव तत्वादिक जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छामि दुक्कडं मोय।।10।।

मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, भरियो रोग अथाग।
वैद्यराज गुरु शरण से, औषध ज्ञान वैराग।।11।।

जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
प्रभो तुम्हारी साख से, बारम्बार धिक्कार।।12।।

बुरा-बुरा सबको कहूं, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूं आपणो, तो मोसूं[2] बुरा न कोय।।13।।

कहवा में आवे नहीं, अवगुण भरया अनन्त।
लिखवा में क्योंकर लिखूं, जानो श्री भगवंत।।14।।

करुणानिधि कृपा करी, कठिन कर्म मोय छेद।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, करजो ग्रंथि भेद[3]।।15।।

पतित उद्धारण नाथजी, अपनो विरुद विचार।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारम्बार।।16।।

माफ करो सब माहरा, आज तलक रा दोष।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील सन्तोष।।17।।

---

1. चरण रूपी कमल
2. मेरे से
3. कर्मों की गांठ तोड़ना

आत्म निन्दा शुद्ध भणी, गुणवन्त वंदन भाव।
राग द्वेष पतला करी, सबसे खमत खमाव।।18।।

छूटूं पिछला पाप से, नवा न बांधूं कोय।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय।।19।।

परिग्रह ममता तजि करी, पंच महाव्रत धार।
अन्त समय आलोयणा, करूं संथारो सार।।20।।

तीन मनोरथ[1] ए कह्या जो ध्यावे[2] नित्य मन्न।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न।।21।।

अरिहन्त देव निर्ग्रन्थ गुरु, संवर निर्जरा धर्म।
केवलि भाषित शास्त्र, यही जैनमत धर्म।।22।।

आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार।
जिन आज्ञा परमाण कर, निश्चय खेवो पार।।23।।

खिण[3] निकमो रहणो नहीं, करणो आतम काम।
भणणो गुणणो सीखणो, रमणो ज्ञान आराम[4]।।24।।

अरिहन्त सिद्ध सब साधुजी, जिन आज्ञा धर्मसार।
मांगलीक उत्तम सदा, निश्चय शरण चार।।25।।

घड़ी-घड़ी पल-पल सदा, प्रभु सुमरण को चाव।
नरभव सफलो जो करे, दान शील तप भाव।।26।।

❁❁❁

1. मन की अभिलाषा
2. चिन्तन करना
3. क्षण-थोड़ी देर भी
4 बगीचा

सिद्धां जैसो जीव है, जीव सोई सिद्ध होय।
कर्म मैल का आंतरा, बूझे[1] विरला कोय।।1।।

कर्म पुद्‌गल रूप है, जीव रूप है ज्ञान।
दो मिलकर बहुरूप है, बिछुड्या[2] पद निरवाण।।2।।

जीव कर्म भिन्न-भिन्न करो, मनुष्य जन्म को पाय।
ज्ञानात्म वैराग्य से, धीरज ध्यान जगाय।।3।।

द्रव्य थकी जीव एक है, क्षेत्र असंख्य प्रमाण।
काल थकी सर्वदा रहे, भावे दर्शन ज्ञान।।4।।

गर्भित[3] पुद्‌गल पिण्ड में, अलख[4] अमूरति[5] देव।
फिरे सहज भव चक्र में, यह अनादि की टेव[6]।।5।।

फूल इत्तर घी दूध में, तिल में तेल छिपाय।
यूं चेतन जड़ करम संग, बंध्यो ममत दुःख पाय।।6।।

जो-जो पुद्‌गल की दशा, ते निज माने हंस[7]।
या ही भरम विभाव से, बढ़े करम को वंश।।7।।

रतन बंध्यो गठड़ी विषे, सूर्य छिप्यो घन मांय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कुछ नांय।।8।।

---

1. समझे
2. अलग होना
3. मिला हुआ
4. दिखाई न देने वाला
5. आकार रहित
6. आदत
7. आत्मा

ज्यों बन्दर मदिरा पियां, बिच्छू डंकित गात।
भूत लग्यो कौतुक करे, त्यों कर्मन उत्पात।।9।।

कर्म संग जीव मूढ़ है, पावे नाना रूप।
कर्म रूप मल के टले, चेतन सिद्ध सरूप।।10।।

शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरब, रह्यो कर्म मल छाय।
तप संयम सुं धोवतां, ज्ञान ज्योति बढ़ जाय।।11।।

ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप।
चारित्र से आवत रुके, तपस्या क्षपण[1] सरूप।।12।।

कर्म रूप मल[2] के शुधे, चेतन चांदी रूप।
निर्मल ज्योति प्रकट भयां, केवल ज्ञान अनूप[3]।।13।।

मूसी[4] पावक[5] सोहगी[6], फूंका तणो उपाय।
राम चरण चारूं मिल्यां, मैल कनक[7] को जाय।।14।।

कर्म रूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चंद।
ज्ञानरूप गुण चांदनी, निर्मल ज्योति अमन्द[8]।।15।।

---

1. क्षय करना
2. मैल
3. उपमा रहित
4. मूसी-मूस सोना चांदी गलाने के बर्तन
5. पावक-अग्नि
6. सोहगी-सोना चांदी साफ करने का खार
7. कनक-सोना
8. उत्कृष्ट

रागद्वेष दो बीज से, कर्म बंध की व्याध[1]।
ज्ञानात्म वैराग्य से, पावे मुक्ति समाध।।16।।

अवसर बीत्यो जात है, अपने वश कछु होत।
पुण्य छतां पुण्य होत है, दीपक दीपक ज्योत।।17।।

कल्पवृक्ष चिन्तामणि, इण भव में सुखकार।
ज्ञान वृद्धि इनसे अधिक, भव दु:ख भंजनहार।।18।।

राई मात्र घट बध नहीं, देख्या केवल ज्ञान।
यह निश्चय कर जानके, तजिये प्रथम[2] ध्यान।।19।।

दूजा[3] कभी न चिंतिये, कर्मबंध बहु दोष।
तीजा[4] चौथा[5] ध्याय के, करिये मन संतोष।।20।।

गई वस्तु सोचे नहीं, आगम वांछा नांय।
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग मांय।।21।।

अहो समदृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तर्गत न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल।।22।।

सुख दु:ख दोनुं बसत हैं, ज्ञानी के घट मांय।
गिरि[6] सर[7] दीसे मुकुर[8] में, भार भींजवो नांय।।23।।

---

1. पीड़ा
2. आर्त्तध्यान
3.. रौद्रध्यान
4 धर्मध्यान
5. शुक्लध्यान
6. पर्वत
7. तालाब
8. दर्पण–कांच

जो जो पुद्गल फरसना, निश्चय फरसे सोय।
ममता-समता भाव से, करम बंध क्षय होय।।24।।

बांध्या सोई भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव।
फल निर्जरा होत है, यह समाधि चित्त चाव।।25।।

बांध्या बिन भुगते नहीं, बिन भुगत्यां न छुड़ाय।
आप ही करता भोगता, आप ही दूर कराय।।26।।

पथ कुपथ घट बध करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
यूं पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जग में पाय।।27।।

सुख दियां सुख होत है, दुःख दियां दुःख होय।
आप हणे नहीं अवर कूं, तो आपकूं हणे न कोय।।28।।

ज्ञान गरीबी गुरु वचन, नरम वचन निर्दोष।
इनकूं कभी न छांड़िये, श्रद्धा शील संतोष।।29।।

सत मत छोड़ो ए! नरा, लक्ष्मी चौगुनी होय।
सुख दुःख रेखा कर्म की, टाली टले न कोय।।30।।

गोधन गजधन रत्नधन, कंचन खान सुखान।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूल समान।।31।।

शील रतन मोटो रतन, सब रतनां की खान।
तीन लोक की संपदा, रही शील में आन।।32।।

शीले सर्प न आभड़े[1], शीले शीतल आग।
शीले अरि[2], करि[3], केसरी[4], भय जावे सब भाग।।33।।

---

1. डसे, 2. शत्रु
3. हाथी
4. सिंह

शील रतन के पारखी, मीठा बोले बैन[1]।
सब जग से ऊंचा रहे, जो नीचा राखे नैन[2]।।34।।

तन कर मन कर वचन कर, देत न काहु दुःख।
कर्म रोग पातक[3] झड़े, देखत वां को मुख।।35।।

❁❁❁

पान खिरंतो इम कहे, सुन तरुवर[4] वनराय।
अब के बिछड़े कब मिले, दूर पड़ेंगे जाय।।1।।

तब तरुवर उत्तर दियो, सुनो पत्र इक बात।
इस घर एही रीत है, इक आवत इक जात।।2।।

बरस दिनों की गांठ को, उच्छव[5] गाय बजाव।
मूरख नर समझे नहीं, बरस गांठ को जाय।।3।।

सोरठाः पवन तणो विश्वास, किण कारण ते दृढ़ करी।
इनकी एही रीत, आवे के आवे नहीं।।4।।

दोहाः करज बिरानां काढ़ के, खर्च किया बहु दाम।
जब मुद्दत पूरी हुवे, देणा पड़सी दाम।।5।।
बिन दियां छूटे नहीं, यह निश्चय कर मान।
हंस-हंस के क्यूं खरचिये, दाम बिराना जान।।6।।

---

1. वचन
2. नयन-आंख
3. पाप
4. वृक्ष
5. उत्सव

जीव हिंसा करतां थकां, लागे मिष्ट अज्ञान।
ज्ञानी इम जाने सही, विष मिलियो पकवान।।7।।

काम भोग प्यारा लगे, फल किंपाक समान।
मीठी खाज खुजावतां, पीछे दुःख की खान।।8।।

जप तप संजम दोहिलो, औषध कड़वी जाण।
सुख कारण पीछे घणो, निश्चय पद निर्वाण।।9।।

डाभ अणी[1] जल बिन्दुवो, सुख विषयन को चाव।
भवसागर दुःख जल भर्यो, यह संसार स्वभाव।।10।।

चढ़ उत्तंग[2] जहां से पतन, शिखर नहीं वो कूप[3]।
जिस सुख भीतर दुःख बसे, सो सुख भी दुःख रूप।।11।।

जब लग जिसके पुण्य को, पहुँचे नहीं करार[4]।
तब लग उसको माफ है, अवगुण करे हजार।।12।।

पुण्य क्षीण जब होत है, उदय होत है पाप।
दाझे[5] वन की लाकड़ी, प्रजले आपो आप।।13।।

पाप छिपाया ना छिपे, छिपे तो मोटा भाग।
दाबी दूबी ना रहे, रूई लपेटी आग।।14।।

बहु बीती थोड़ी रही, अब तो सुरत संभार।
परभव निश्चय जावणो, वृथा जन्म मत हार।।15।।

---

1. कुश के अग्रभाग पर
2. ऊंचा
3. कुआं
4. करार-मियाद
5. जलना

चार कोस गामान्तरे, खरची बांधे लार।
परभव निश्चय जावणो, करिये धर्म विचार।।16।।

रज विरज ऊंची गई, नरमाई के पान।
पत्थर ठोकर खात है, करड़ाई के ताण।।17।।

अवगुण उर धरिये नहीं, जो हुवे वृक्ष बबूल।
गुण लीजे कहां लग कहे, नहीं छाया में शूल।।18।।

जैसी जांपे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय।
वांको बुरा न मानिये, वो लेन[1] कहां से जाय।।19।।

गुरु कारीगर सारिखा, टांची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार।।20।।

संतन की सेवा कियां, प्रभु रीझत[2] है आप।
जांका बाल खिलाइये, तांका रीझत बाप।।21।।

भवसागर संसार में, दीपा श्री जिनराज।
उद्यम करी पहुंचे तीरे, बैठी धर्म जहाज।।22।।

निज आतम कुं दमन कर, पर आतम कूं चीन।
परमातम को भजन कर, सोही मत परवीन।।23।।

समझूं शंके पाप से, अण-समझूं हरषन्त।
वे लूखा वे चीकणा, इण विध कर्म बंधन्त।।24।।

समझ सार संसार में, समझूं टाले दोष।
समझ-समझ कर जीव ही, गया अनंता मोक्ष।।25।।

---

1. लेने के लिए
2. खुश होना

उपशम विषय कषाय नो, संवर तीनूं योग।
किरिया जतन विवेक से, मिटे कुकर्म दुःख रोग।।26।।

रोग मिटे समता बंधे, समकित व्रत आराध।
निर्वैरी सब जीव का, पावे मुक्ति समाध।।27।।

***

अठारह पापों की आलोचना

सिद्ध श्री परमात्मा, अरिगंजन अरिहन्त।
इष्टदेव वन्दूं सदा, भयभंजन भगवन्त।।1।।

अनन्त चौबीसी जिन नमूं, सिद्ध अनन्ता कोड़।
वर्तमान जिनवर सभी, दो कोड़ी नव कोड़।।2।।

गणधरादिक सर्व साधुजी, समकित व्रत गुणधार।
यथायोग्य वंदन करूं, जिन आज्ञा अनुसार।।3।।

(प्रथम एक नवकार गुणनो)

णमो अरिहंताणं। णमो सिद्धाणं। णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं। णमो लोए सव्वसाहूणं।।
एसो पंच णमुक्कारो, सव्व पाव प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढ़मं हवइ मंगलं।।

***

पंच परमेष्ठी देव को, भजन पूर पंचान।
कर्म अरि भाजे सभी, शिवसुख मंगल थान।।4।।

अरिहन्त सिद्ध सिमरूं सदा, आचारज उवज्झाय।
साधु सकल के चरण कूं, वंदूं शीश नमाय।।5।।

शासन नायक समरिये, वर्धमान जिनचन्द।
अलिय विघन दूरे हरे, आपे परमानन्द।।6।।

अंगूठे अमृत बसे, लब्धि तणा भण्डार।
श्री गुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार।।7।।

श्री जिन युग पद-कमल में, मुझ मन अलिय बसाय।
कब ऊगे वो दिनकरू, श्री मुख दर्शन पाय।।8।।

प्रणमी पद-पंकज भणी, अरिगंजन अरिहन्त।
कथन करूं अब जीव का, किंचित् मुझ विरतंत।।9।।

प्रथम पाप : हिंसा
अंजना की देशी

हूं अपराधी अनादि को, जनम-जनम गुना किया भरपूर के।
लूटिया प्राण छः काय ना, सेविया पाप अठारे करूर के।।
श्री मुनि सुव्रत साहिबा।।1।।

आज दिन तक इस भव में और पहले संख्यात, असंख्यात, अनन्त भवों में कुगुरु, कुदेव और कुधर्म की सद्दहणा, प्ररूपणा, फरसना, सेवनादि संबंधी पाप दोष लगा हो उनका मिच्छामि दुक्कडं।

मैंने अज्ञानपन से, मिथ्यात्वपन से, अव्रतपन से, कषायपन से, अशुभयोग से, प्रमाद करके, अपछंदा, अविनीतपना किया, तो मुझे माफ करो, उसका मिच्छामि दुक्कडं।

श्री अरिहन्त भगवंत वीतराग देव, केवलज्ञानी, गणधर देव, आचार्य जी महाराज, धर्माचार्य जी महाराज, उपाध्याय जी महाराज, साधु जी महाराज, आर्या जी महाराज, तथा सम्यग्दृष्टि, स्वधर्मी श्रावक और श्राविका जी, इन उत्तम पुरुषों की तथा शास्त्र, सूत्रपाठ, अर्थ, परमार्थ और धर्म सम्बन्धी समस्त पदार्थों की अविनय, अभक्ति, आशातना

आदि की, कराई, अनुमोदी, मन, वचन काया से, द्रव्य, क्षेत्र काल भाव से सम्यक् प्रकार विनय भक्ति आराधना पालना फरसना सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रम से नहीं की, नहीं कराई, नहीं अनुमोदी तो मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं। मेरी भूल-चूक अवगुण अपराध सब मुझे माफ करो, मैं मन, वचन, काया करके खमाता हूं।

दोहा : **मैं अपराधी गुरुदेव को, तीन भुवन को चोर।**
ठगूं बिराना माल मैं, हा हा कर्म कठोर।।1।।
कामी कपटी लालची, अपछंदा अविनीत।
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी रणजीत[1]।।2।।
जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
नाथ तुम्हारी साख से, बारम्बार धिक्कार।।3।।

मैंने छ कायपन से, छ काय की विराधना की– पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय वायुकाय, वनस्पतिकाय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सन्नी, असन्नी, गर्भज, चौदह प्रकार के सम्मूर्छिम आदि त्रस स्थावर जीवों की विराधना मन, वचन, काया से की, कराई, अनुमोदी हो, उठते, बैठते, सोते, हलते, चलते, शस्त्र, वस्त्र, मकानादि उपकरण उठाते, धरते, लेते, देते, वर्तते, वर्तावते, अपडिलेहणा, दुप्पडिलेहणा सम्बन्धी अप्रमार्जना, दुष्प्रमार्जना संबंधी, न्यूनाधिक विपरीत पडिलेहणा संबंधी और आहार विहार आदि अनेक प्रकार के कर्त्तव्यों में संख्यात, असंख्यात और निगोद आश्रयी अनन्त जीवों के जितने प्राण लूटे उन सब जीवों का मैं अपराधी हूं, निश्चय करके बदले का देनदार हूं। सब जीव मेरे को माफ करो, मेरी भूल, चूक, अवगुण अपराध सब माफ करो।

देवसी, राईसी, पक्खी, चौमासी या सम्वत्सरी संबंधी बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं, बारम्बार मैं खमाता हूं। आप सब क्षमा करो।

---

1 पढ़ने वाले यहां अपना नाम बोलें।

गाथा : खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वैरं मज्झं न केणइ॥1॥

वह दिन धन्य होगा, जिस दिन छः काय के वैर (बदले) से निवृत्त होऊंगा, समस्त चौरासी लाख जीव योनि को अभयदान देऊंगा, वह दिन मेरा परम कल्याण का होगा॥1॥

दोहा : सुख दियां सुख होत है, दु:ख दियां दु:ख होय।
आप हणे नहीं अवर कूं आपकूं हणे न कोय॥1॥

दूसरा पाप : मृषावाद

दूजा पाप मृषावाद–झूठ बोलना। क्रोध के वश, मान के वश, माया के वश, लोभ के वश, हास्य वश, भय वश, मृषा (झूठ) वचन बोला हो, निंदा, विकथा की हो, कर्कश–कठोर, मर्मकारी वचन बोला हो, इत्यादि अनेक प्रकार से मृषावाद बोला, बोलवाया और अनुमोदा हो, उसका मन–वचन–काया से मिच्छा मि दुक्कडं।

दोहा : थापनमोसा मैं किया, करी विश्वासघात।
परनारी धन चोरिया, प्रकट कह्यो नहीं जात॥1॥

मुझे धिक्कार–धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं। वह दिन धन्य होवेगा जिस दिन सर्व प्रकार से मृषावाद का त्याग करूंगा, वह दिन मेरा परम कल्याण स्वरूप होवेगा॥2॥

तीसरा पाप : अदत्तादान

अदत्तादान–बिना दी हुई वस्तु चोरी करके लेना। यह बड़ी चोरी लौकिक विरुद्ध अल्प चोरी मकान संबंधी अनेक प्रकार के कर्त्तव्यों में उपयोग सहित या बिना उपयोग से अदत्तादान–मन–वचन–काया से चोरी की, कराई, अनुमोदी तथा धर्म–सम्बन्धी ज्ञान, दर्शन, चारित्र और

तप श्री भगवन्त तथा गुरुदेव की आज्ञा के बिना किया हो, उसका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन सर्व प्रकार से अदत्तादान का त्याग करूंगा। वह दिन मेरा परम कल्याण का होवेगा।।3।।

चौथा पाप : मैथुन

मैथुन सेवन करने के लिए मन, वचन और काया के योग प्रवर्ताये, नवबाड़ सहित ब्रह्मचर्य नहीं पाला, नवबाड़ में अशुद्धपन से प्रवृत्ति हुई, मैंने मैथुन सेवन किया, दूसरों से करवाया और सेवन करने वालों को अच्छा समझा, उसका मन-वचन-काया से मुझे धिक्कार-धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन मैं नवबाड़ सहित ब्रह्मचर्य-शीलरत्न आराधूंगा यानी सर्वथा प्रकार से काम-विकार से निवर्तूंगा। वह दिन मेरा परम कल्याण का होगा।।4।।

पांचवां पाप : परिग्रह

सचित्त परिग्रह जो दास, दासी, द्विपद, चतुष्पद (पशु) आदि अनेक प्रकार के हैं और अचित्त परिग्रह जो सोना, चांदी, वस्त्र, आभूषण आदि अनेक प्रकार के हैं, उनकी ममता-मूर्च्छा की हो, क्षेत्र, घर आदि नव प्रकार के बाह्य परिग्रह और चौदह प्रकार के आभ्यन्तर परिग्रह को रखा, रखवाया और अनुमोदा तथा रात्रि-भोजन, अभक्ष्य आहारादि सम्बन्धी पाप दोष सेव्या हो तो वह मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होवेगा जिस दिन सब प्रकार के परिग्रह का त्याग कर संसार के प्रपंच से निवर्तूंगा, वह दिन मेरा परम कल्याण रूप होवेगा।।5।।

छठा पाप : क्रोध

क्रोध करके अपनी आत्मा को तथा पर-आत्मा को दुःखी किया हो।।6।।

सातवां पाप : मान

अहंकार भाव लाया हो, तीन गर्व और आठ मद आदि किया हो।।7।।

आठवां पाप : माया

धर्म-संबंधी तथा संसार संबंधी अनेक कर्त्तव्यों में कपट किया हो।।8।।

नौवां पाप : लोभ

मूर्च्छा भाव लाया हो, आशा-तृष्णा-वांछा आदि की हो।।9।।

दसवां पाप : राग

मन पसन्द वस्तु से स्नेह किया हो।।10।।

ग्यारहवां पाप : द्वेष

नापसंद वस्तु देखकर उस पर द्वेष किया।।11।।

बारहवां पाप : कलह

अप्रशस्त (खराब) वचन बोलकर क्लेश उत्पन्न किया हो।।12।।

तेरहवां पाप : अभ्याख्यान

किसी पर कलंक लगाया हो।।13।।

चौदहवां पाप : पैशुन्य

दूसरे की चुगली की हो।।14।।

पन्द्रहवां पाप : परपरिवाद

दूसरे का अवगुण वाद (अवर्णवाद) बोला, निंदा की हो।।15।।

सोलहवां पाप : रति-अरति

पांच इन्द्रियों के 23 विषय और 240 विकार हैं, इनमें मनपसन्द पर राग किया हो और नापसन्द पर द्वेष किया हो तथा संयम-तप आदि पर अरुचि रखी हो तथा आरम्भादिक असंयम और प्रमाद में रति भाव किया हो।।16।।

सत्रहवां पाप : माया मृषावाद

कपट सहित झूठ बोला हो।।17।।

अठारहवां पाप : मिथ्या दर्शनशल्य

श्री जिनेश्वर देव के मार्ग में शंका-कांक्षा आदि विपरीत श्रद्धा प्ररूपणा की हो[1]।।18।।

इस प्रकार अठारह पाप का द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जानते, अजानते, मन, वचन और काया से सेवन किया, कराया, और अनुमोदा, दिन को, रात्रि को, सभा में, एकान्त में, सोते हुए, जागते हुए इस भव में, परभव में, पहिले के संख्यात, असंख्यात, अनन्त भवों में भवभ्रमण करते आज दिन[2] तक राग-द्वेष, विषय, कषाय, आलस,

---

1. यहां अठारह पाप स्थानों की आलोयणा विशेष विस्तारपूर्वक अपनी इच्छानुसार कहनी चाहिए।
2. यहां बोलने वाले वर्तमान में जो संवत्, महीना और तिथि हो वह कहें।

प्रमाद आदि पौद्गलिक प्रपंच, परगुण पर्याय की विकल्प भूल की, ज्ञान की विराधना की, दर्शन की विराधना की, चारित्र की विराधना की, चारित्राचारित्र की व तप की विराधना की, शुद्ध श्रद्धा, शील, संतोष, क्षमा आदि निज स्वरूप की विराधना की, उपशम, विवेक, संवर, सामायिक, पौषध, प्रतिक्रमण, ध्यान, मौन आदि व्रत-पच्चक्खाण, दान, शील, तप वगैरह की विराधना की, परम कल्याणकारी इन बोलों की आराधना-पालनादि मन, वचन और काया से नहीं की, नहीं कराई और नहीं अनुमोदी। छह आवश्यक को सम्यक् प्रकार से विधि व उपयोग सहित आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विधि अनुपयोग निरादरपने की, किन्तु आदर-सत्कार भाव भक्तिसहित नहीं किया। ज्ञान के चौदह, समकित के पांच, बारह व्रतों के साठ, कर्मादान के पन्द्रह, संलेखणा के पांच, इन निन्नानवे अतिचारों में तथा 124 अनाचारों में तथा साधु जी के 125 अतिचारों में तथा 52 अनाचारों का श्रद्धानादि में विराधना आदि जो कोई अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार आदि सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा, जानते-अजानते मन, वचन, काया से किया, उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

मैंने जीव को अजीव श्रद्धया, पररूप्या, अजीव को जीव श्रद्धया, पररूप्या, धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म श्रद्धया, पररूप्या तथा साधु को असाधु व असाधु को साधु श्रद्धया, परूप्या तथा उत्तम पुरुष साधु मुनिराज, महासतियां जी की सेवा-भक्ति मान्यता आदि यथाविधि नहीं की, नहीं कराई, नहीं अनुमोदी तथा असाधुओं की सेवा-भक्ति-मान्यता आदि का पक्ष लिया, मुक्तिमार्ग में संसार का मार्ग यावत् पच्चीस मिथ्यात्व में से किसी मिथ्यात्व का सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा, मन, वचन, काया से, पच्चीस कषाय सम्बन्धी, पच्चीस क्रिया सम्बन्धी, तेतीस आशातना सम्बन्धी, ध्यान के 19 दोष, वंदना के 32 दोष,

सामायिक के 32 दोष, पौषध के 18 दोष आदि में मन, वचन और काया से जो कोई पाप-दोष लगा हो, लगाया हो, अनुमोदा हो, उसका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

महामोहनीय कर्मबंध के तीस स्थानकों में से किसी एक को भी मन, वचन और काया से सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदना की, शील की नववाड़ तथा आठ प्रवचन माता की विराधनादि की, श्रावक के 21 गुण और बारह व्रत की विराधनादि मन, वचन और काया से की, कराई, अनुमोदी तथा तीन अशुभ लेश्या के लक्षणों की, और अशुभ बोलों की सेवना की व तीन शुभ लेश्या के लक्षणों की और अन्य बोलों की विराधना की, चर्चा-वार्ता वगैरह में श्री जिनेश्वर देव का मार्ग लोपा, गोपा, नहीं माना, अछते की स्थापना की, छते की स्थापना नहीं की और अछते को निषेध नहीं किया, छते की स्थापना और अछते को निषेध करने का नियम नहीं किया, कलुषता की हो, तथा छह प्रकार के ज्ञानावरणीय बन्ध के बोल, ऐसे ही छह प्रकार के दर्शनावरणीय बन्ध के बोल, आठ कर्म की अशुभ प्रकृति बंध के बोल, सत्तावन कारणों से पाप की बयासी प्रकृति बांधी, बंधाई, अनुमोदी हों, मन-वचन-काया करके तो उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

एक-एक बोल से लगाकर कोड़ा-कोड़ी यावत् संख्याता-असंख्याता अनंता-अनंत बोलों में से जानने योग्य बोलों को सम्यक् प्रकार से जाना नहीं, श्रद्धया नहीं, पररूप्या नहीं, तथा विपरीतपने से श्रद्धा आदि की, कराई, अनुमोदी, मन-वचन-काया से तो, उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

एक-एक बोल से यावत् अनन्त बोलों में छोड़ने योग्य बोल को छोड़ा नहीं, उनको मन-वचन-काया से सेवन किया, सेवन कराया और अनुमोदा हो, उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

एक-एक बोल से लगाकर जाव अनन्ता-अनन्त बोलों में आदरने योग्य बोलों को आदरा नहीं, आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विराधना, खंडना आदि की, कराई, अनुमोदी हो, मन-वचन-काया से उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छा मि दुक्कडं।

श्री जिन भगवन्त जी महाराज! आपकी आज्ञा में जो-जो प्रमाद किया और सम्यक् प्रकार उद्यम नहीं किया, नहीं कराया, नहीं अनुमोदा हो, मन-वचन-काया करके तथा अनाज्ञा में उद्यम किया, कराया, अनुमोदा हो, एक अक्षर के अनन्तवें भाग मात्र दूसरा कोई स्वप्न मात्र में भी श्री भगवन्त महाराज! आपकी आज्ञा से न्यूनाधिक विपरीत प्रवृत्ति की हो तो उसका मुझे धिक्कार-धिक्कार, बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

दोहा

श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा, करी फरसना सोय।
जान-अजान पक्षपात में, मिच्छा दुक्कडं मोय।।1।।

सूत्र अर्थ जानूं नहीं, अल्प बुद्धि अनजान।
जिनभाषित सब शास्त्र का, अर्थ पाठ परमाण।।2।।

देव गरु धर्म सूत्र कूं, नव तत्त्वादिक जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय।।3।।

मैं मगसेलिया[1] हो रह्या, नहीं ज्ञान रस भींज।
गुरु सेवा न कर सकूं, किम मुझ कारज सीझ।।4।।

जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय।
अपराधी उन सबन का, बदला देसूं सोय।।5।।

1. मगसेलिया एक प्रकार का पत्थर होता है जो पानी से कभी नहीं भीगता है।

गबन करूं बुगचा रतन, द्रव्य भाव सब कोय।
लोकन में प्रगट करूं, सूई पाई मोय।।6।।
जैन धर्म शुद्ध पाय के, वरतूं विषय कषाय।
यह अचम्भा हो रह्या, जल में लागी लाय।।7।।
जितनी वस्तु जगत में, नीच-नीच में नीच।
सब से मैं पापी बुरो, फंसूं मोह के बीच।।8।।
एक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तलवार।
उठा था जिन भजन कूं, बिच में लियो मार।।9।।

।। सवैया कवित्त ।।

(मैं महापापी)

छांड के संसार, छार-छार ही का विहार करूं,
माया को निवारि फिर माया दिल धारी है।
अगला कुछ धोय कीच, फेर कीच बीच रहूं,
विषय सुख चाहूं मन, प्रभुता बधारी है।
काम क्रोध लोभ मान, जाल में फंस्यो रहूं,
श्री भगवन्त! मेरी, करतूत सब कारी है।
करत फकीरी ऐसी, अमीरी की आस करूं,
काहे कूं धिक्कार सिर, पगड़ी उतारी है।।10।।

दोहा

त्याग न कर, संग्रह करूं, विषय वमन जिम आहार।
मुझ से ऐसे पतित कूं, बारम्बार धिक्कार।।11।।
राग - द्वेष दो बीज हैं, कर्म - बन्ध फल देत।
इनकी फांसी में बंध्यों, छूटूं नहीं अचेत।।12।।

रतन बंध्यो गठड़ी विषे, भानुं छिप्यो घन मांय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कछु नांय।।13।।

बुरा-बुरा सबको कहूं, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूं आपणो, मोसूं बुरो न कोय।।14।।

कामी कपटी लालची, कठिन लोह की दाम।
तुम पारस संग पाय के, बनूं स्वर्ण उद्दाम।।15।।

पद

(मैं) जपहीन हूं, तपहीन हूं, प्रभु हीन संवर समगतं।
हे दयाल! कृपाल करुणानिधि, आयो तुम शरणागतं।
प्रभु आयो तुम शरणागतं।।16।।

दोहा

नहीं विद्या नहीं वचन बल, नहीं धीरज गुण ज्ञान।
इस सेवक निज दास की, पत राखो भगवान्।।17।।

विषय कषाय अनादि को, भरियो रोग अगाध।
वैद्यराज गुरु शरण से, पाऊं चित्त समाध।।18।।

कहवा में आवे नहीं, अवगुण भर्‌यो अनन्त।
लिखवा में क्योंकर लिखूं, जाणो श्री भगवन्त।।19।।

आठ कर्म प्रबल करी, भमियो जीव अनादि।
आठ कर्म छेदन करी, पावे मुक्ति समाधि।।20।।

पथ कुपथ कारण करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
इमि पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुख जग में पाय।।21।।

बांध्या बिन भुगते नहीं, बिन भुगत्यां न छुटाय।
आप ही करता भोगता, आपे दूर कराय।।22।।
हूं अविवेकी मोहवश, आंख मींच अंधियार।
मकड़ी जाल बिछायके, फंसूं आप धिक्कार।।23।।
सर्व भक्षी जिम अग्नि हूं, तपियो विषय कषाय।
स्वच्छन्दी अविनीत मैं, धर्मी ठग दुःख दाय।।24।।
कहा भयो घर छांड के, तज्यो न माया संग।
नाग तजी जिम कांचली, विष नहीं तजियो अंग।।25।।
आलस विषय कषाय वश, आरम्भ परिग्रह काज।
योनि चौरासी लख भ्रम्यो, अब तारो महाराज।।26।।
आत्म-निंदा शुद्ध भणी, गुणवन्त वंदन भाव।
राग द्वेष उपशम करी, सबसे खमत खमाव।।27।।
पुत्र कुपुत्र जे मैं हुआ, अवगुण भर्यो अनन्त।
अपनो विरुद[1] विचार के, माफ करो भगवंत।।28।।
शासनपति वर्धमान जी, तुम लग मेरी दौड़।
जैसे समुद्र जहाज बिन, सूझत और न ठौड़।।29।।
भव भ्रमण संसार दुःख, ताका वार न पार।
निर्लोभी सतगुरु बिना, कौन उतारे पार।।30।।
भव सागर संसार में, दीपा श्री जिनराज।
उद्यम करि तट पहुंचिए, बैठी धर्म जहाज।।31।।
पतित उद्धारन नाथ जी, अपनो विरुद विचार।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारम्बार।।32।।

1. विरुद-पक्ष

माफ करो सब माहरा, आज तलक रा दोष।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील सन्तोष।।33।।

देव अरिहन्त गुरु निर्ग्रन्थ, संवर निर्जरा धर्म।
केवली भाषित शास्त्र ही, यही जैन धर्म को मर्म।।34।।

इस असार संसार में, शरण नहीं अरु कोय।
या ते तुम पद कमल ही, भक्त सहायी होय।।35।।

छूटूं पिछला पाप से, नवा न बांधूं कोय।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय।।36।।

आरंभ परिग्रह तज करी, समकित व्रत आराध।
अन्त अवसर आलोय के, अनशन चित्त समाध।।37।।

तीन मनोरथ ए कह्या, जे ध्यावे नित्य मन्न।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिव सुख धन्न।।38।।

श्री पंच परमेष्ठी भगवंत गुरुदेव महाराज जी आपकी आज्ञा है। सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, संयम, संवर, निर्जरा और मुक्ति-मार्ग यथाशक्ति से शुद्ध उपयोग सहित आराधने-फरसने-सेवने की आज्ञा है। बारम्बार शुभयोग सम्बन्धी, स्वाध्याय, ध्यानादिक अभिग्रह, नियम, पक्चक्खाण आदि करने, करवाने की समिति-गुप्ति प्रमुख सर्व प्रकारे आराधने की आज्ञा है।

दोहा

निश्चल मन शुद्ध मुख पढ़त, तीन योग थिर थाय।
दुर्लभ दीसे कायरा, हलुकर्मी मन भाय।।1।।
अक्षर पद हीना अधिक, भूल चूक कहीं होय।
अरिहंत सिद्ध आत्म साख से, मिच्छा दुक्कडं मोय।।2।।

भूल-चूक मिच्छा मि दुक्कडं। ○○○

जय अचलासन

जय अचलासन, शांति सिंहासन द्वेष-विनाशन, शासन-स्यन्दन।
सन्मति-कारण, कुमति-निवारण, भवभय-हारण, शीतल चन्दन।
जय करुणा-वरुणालय जय जय, जीव सभी करते अभिनन्दन।
जय सुख-कन्दन, दुरित-निकन्दन, जय जग-वन्दन, त्रिशला नंदन।।

○○○

मंगल-धुन

सबसे बढ़कर है नवकार, करता है भवसागर पार।
चौदह पूर्व का यह सार, बारंबार जपो नवकार।।
ऋषभ जय, प्रभु पारस जय जय।
महावीर जय, गुरु गौतम जय जय।।
महावीर को भज ले मनवा, गौतम को भज ले।
शान्ति करेंगे, शान्तिनाथ को भज ले।।
देव हमारे श्री अरिहन्त, गुरु हमारे सद्‌गुणी संत।
धर्म हमारा दया-प्रधान, शास्त्र हमारे ज्ञान निधान।
श्रमण भगवन्त श्री महावीर, त्रिशलानन्दन हरियो पीर।।

○○○

जैन विश्वगान

(राष्ट्रगान की धुन)

(1)

शिवपुरपथ–परिचायक जय हे, सन्मति युग–निर्माता।
गंगा कल–कल स्वर में गाती, तव गुण–गौरव–गाथा।
सुर–नर–किन्नर, तव पद–युग में, नित नत करते माथा।
सब तेरे गुण गाते, सादर शीश झुकाते।
हे सद्बुद्धि – प्रदाता!
दुख–हारक, सुख–दायक जय हे सन्मति युग निर्माता।
जय हे, जय हे जय हे, जय जय जय जय हे।।

(2)

मंगल–कारक, दया–प्रचारक, खग–पशु–नर–उपकारी।
भविजन–तारक, कर्म–विदारक, सब जग तव आभारी।
जब तक रवि शशि तारे, तब तक गीत तुम्हारे।
विश्व रहेगा गाता, सन्मति युग निर्माता।
चिर सुख शान्ति विधायक–
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।

(3)

भ्रातृ–भावना भुला परस्पर, लड़ते हैं जो प्राणी।
उनके उर में प्रेम बसाती, तेरी मीठी वाणी।
सबमें करुणा जागे, जग से हिंसा भागे।
पावें सब सुखसाता !
हे दुर्जय, दुख–त्रायक जय हे, सन्मति युग–निर्माता।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।।

द्वितीय विभाग

सामायिक – साधना,
व्रत – नियम –
प्रत्याख्यान आदि

सामायिक साधना के पाठ

नमस्कार मंत्र

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं,
नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्व साहूणं।
एसो पंच नमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

गुरु-वन्दना (तिक्खुत्तो का पाठ)

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि।

अरिहंतो-सम्यक्त्व सूत्र

अरिहंतो मह देवो, जावजीव सुसाहुणो गुरुणो ।
जिण - पण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं॥1॥

पंचिंदिय - संवरणो, तह नवविह बंभचेर - गुत्तिधरो !
चउविह कसाय - मुक्को, इअ अट्ठारस गुणेहिं संजुत्तो॥2॥

पंच महव्वयजुत्तो, पंच - विहायार-पालण समत्थो।
पंच – समिओ तिगुत्तो, छत्तीस - गुणो गुरु मज्झ॥3॥

आलोचना-सूत्र
(प्रायश्चित्त)

इच्छाकारेण संदिसह भगवं! इरियावहियं, पडिक्कमामि? इच्छं! इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए। गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा-उत्तिंग पणग-दग-मट्टी-मक्कडा-संताणा-संकमणे। जे मे जीवा विराहिया-
एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया। अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परिया-विया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ-ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तस्स उत्तरी का पाठ

तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं, विसोहि करणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाय ठामि, काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं। खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलिए, पित्त-मुच्छाए। सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठी संचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउसग्गो। जाव अरिहंताणं, भगवंताणं, नमोक्कारेणं, न पारेमि, ताव कायं, ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि।।

चतुर्विंशति-स्तव सूत्र (लोगस्स का पाठ)

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली॥1॥

उसभ-मजियं च वंदे, सम्भवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥2॥

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल-सिज्जंस-वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥3॥

कुंथुं अरं च मल्लिं वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥4॥
एवं मए अभित्थुआ, विहूय-रयमला पहीण जरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥5॥

कित्तिय-वंदिय-महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरोग्ग-बोहि लाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु॥6॥

चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागर-वर-गम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसन्तु॥7॥

सामायिक लेने का पाठ

करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव नियमं मुहुत्तं पज्जुवासामि। दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि मणसा, वयसा, कायसा। तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

विशेष : एक सामायिक करनी है तो मुहूर्त्त एक, घड़ी दो बोलें। यदि दो सामायिक करनी हैं तो मुहूर्त्त दो, घड़ी चार बोलें।

नमोत्थुणं का पाठ

नमोत्थुणं! अरिहंताणं, भगवंताणं, आइगराणं, तित्थयराणं, सयं-संबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवर पुंडरीयाणं, पुरिसवर गंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोग-पज्जोयगराणं अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं,

धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंत, चक्कवट्टीणं दीव त्ताण-सरण-गइ-पइट्ठाणं, अप्पडिहय- वरनाण दंसण-धराणं, विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं, बुद्धाणं बोहियाणं, मुत्ताणं, मोयगाणं, सव्वन्नूणं, सव्व-दरिसीणं, सिव-मयल-मरुय मणंत-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणरावित्ति सिद्धिगइ नामधेयं ठाणं, संपत्ताणं नमो जिणाणं जियभयाणं।

विशेष : अरिहंत स्तुति में '**ठाणं संपत्ताणं**' के स्थान पर '**ठाणं संपाविउ कामाणं**' कहना चाहिए।

सामायिक पारने का पाठ

एयस्स नवमस्स सामाइयवयस्स, पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा—मणदुप्पणिहाणे, वय दुप्पणिहाणे, काय-दुप्पणिहाणे। सामाइयस्स सइ अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामाइयं सम्मं काएण न फासियं, न पालियं, न तीरियं, न किट्टियं, न सोहियं, न आराहियं, आणाए अणुपालियं न भवइ, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक में दस मन के, दस वचन के, बारह काया के, इन कुल बत्तीस दोषों में से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक में स्त्री-कथा, भत्त कथा (भोजन-कथा), देश-कथा, राज-कथा, इन चार विकथाओं में से कोई कथा की हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक में आहार-संज्ञा, भय-संज्ञा, मैथुन-संज्ञा, परिग्रह-संज्ञा इन चार संज्ञाओं में से किसी संज्ञा का सेवन किया हो, सामायिक में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार, जानते-अजानते, मन-वचन काया से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक व्रत विधि से लिया, विधि से पूर्ण किया, विधि में कोई अविधि हुई हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक का पाठ बोलने में काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ न्यूनाधिक, विपरीत पढ़ने में आया हो तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

सामायिक लेने की विधि

सर्वप्रथम स्थान, आसन, पूंजणी, मुखवस्त्रिका आदि की पडिलेहणा करना। फिर यतनापूर्वक पूंज कर आसन बिछाना। बाद में आसन छोड़ कर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह कर के दोनों हाथ जोड़कर पंचांग नमा कर **'तिक्खुत्तो'** के पाठ से तीन बार विधिपूर्वक वंदना करना और श्रीसीमंधर स्वामी या अपने धर्माचार्य जी (गुरुदेव) की आज्ञा लेकर **'नमस्कार मंत्र'**, **'इच्छाकारेणं'** और **'तस्स उत्तरी'** का पाठ बोल कर काउस्सग्ग करना। काउस्सग्ग में लोगस्स का पाठ मन में

कहना। 'णमो अरिहंताणं' कहकर काउस्सग्ग पारना। बाद में 'नमस्कार मंत्र', 'ध्यान का पाठ' (काउस्सग्ग में आर्त्तध्यान रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान शुक्लध्यान न ध्याया हो, काउस्सग्ग में मन-वचन-काया चलित हुए हों तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं) और 'लोगस्स' का पाठ कहना। फिर 'करेमि भंते' के पाठ से सामायिक लेना। 'करेमि भंते' के पाठ में जहां 'जाव नियमं' शब्द आता है वहां जितनी+सामायिक लेनी हों उतनी सामायिक लेकर आगे का पाठ समाप्त करना। बाद में नीचे बैठकर बायां घुटना खड़ा रख कर दो बार 'णमोत्थुणं' का पाठ पढें। दूसरी बार 'णमोत्थुणं' का पाठ बोलने के समय 'ठाणं संपत्ताणं' के बदले 'ठाणं संपाविउकम्माणं' बोलना।

सामायिक में नया ज्ञान सीखना, सीखे हुए ज्ञान, थोकड़ा, बोल आदि चितारना, स्वाध्याय करना, परमात्मा के स्तवन, प्रार्थना, स्तोत्र, स्तुति आदि बोलना, माला फेरना आदि ज्ञान-ध्यान करना। आशय यह है कि सामायिक का काल प्रमाद-रहित होकर ज्ञान, ध्यान, चिन्तन-मनन में बिताना चाहिये। सन्त-मुनिराज विराजते हों तो उनकी ओर पीठ करके नहीं बैठना चाहिए। स्वाध्याय, व्याख्यान या उपदेश दे रहे हों तो उसमें उपयोग रखना चाहिए। सामायिक में विकार-जनक उपकरण नहीं रखना चाहिए। सामायिक के 32 दोषों का सेवन नहीं करना चाहिए।

सामायिक के वर्जित दोष

सामायिक करने वाले साधकों को इन 32 दोषों से रहित शुद्ध सामायिक करनी चाहिए।

मन के दस दोष

अविवेग-जसो-कित्ती, लाभत्थी गव्व-भय-नियाणत्थी।
संसयरोस-अविणओ अबहुमाणए, दोसा भाणियव्वा।

1. **अविवेक**–सामायिक में किसी भी कार्य के औचित्य तथा अनौचित्य का ध्यान न रखना।
2. **यश:कीर्ति**–लोक-सम्मान के लिए सामायिक करना।
3. **लाभार्थ**–धन आदि के लाभ की कामना से सामायिक करना।
4. **गर्व**–मेरे समान कौन सामायिक कर सकता है! इत्यादि अभिमान करना।
5. **भय**–लोकनिन्दा आदि के भय से सामायिक करना।
6. **निदान**–सांसारिक सुख के लिये सामायिक करना।
7. **संशय**–सामायिक का फल मिलेगा या नहीं, ऐसा सन्देह करना।
8. **रोष**–सामायिक में क्रोध करना या क्रोध में सामायिक करना।
9. **अविनय**–सामायिक के प्रति आदर-भाव न रखना।
10. **अबहुमान**–सभक्तिभाव और सोत्साह सामायिक न करना।

वचन के दस दोष

कुवयण - सहसाकारे सछंद - संखेव - कलहं च।
विकहा विहासाऽसुद्धं, निरवेक्खो, मुणमुणा दोसा दस।

1. **कुवचन**–सामायिक में अशिष्ट वचन बोलना।
2. **सहसाकार**–सामायिक में बिना विचारे हानिकर वचन बोलना।

3. **स्वच्छन्द**–सामायिक में काम-वर्धक गन्दे गीत गाना आदि।
4. **संक्षेप**–सामायिक के पाठों को संक्षेप में बोलना।
5. **कलह**–सामायिक में क्लेशोत्पादक वचन बोलना।
6. **विकथा**–मनोरंजन की दृष्टि से स्त्री-कथा, भक्त-कथा, राजकथा और देश कथा करना।।
7. **हास्य**–सामायिक में हंसना।
8. **अशुद्ध**–सामायिक के पाठों को अशुद्ध बोलना।
9. **निरपेक्ष**–सामायिक के पाठों को असम्बद्ध अथवा बिना ध्यान से बोलना।
10. **मुम्मुण**–सामायिक के पाठों का लुप्तवर्णों के साथ अस्पष्ट उच्चारण करना।

काया के बारह दोष

कुआसणं चलासणं चलादिट्ठी,
सावज्जकिरिय-आलंबणाकुंचण-पसारणं।
आलस मोडन-मल विमासणं,
निद्दा वेयावच्चं ति बारस काय-दोसा।

1. **कुआसन**–सामायिक में योग साधना के अनुकूल आसन के औचित्य का ध्यान न रखना।
2. **चलासन**–सामायिक में बार-बार आसन को बदलते रहना।
3. **चल-दृष्टि**–सामायिक में इधर-उधर देखते रहना, दृष्टि स्थिर न रखना।
4. **सावद्यक्रिया**–सामायिक में पाप-युक्त क्रियाएं करना, कराना।

5. **आलंबन**–निष्कारण दीवार आदि का सहारा लेना।
6. **आकुञ्चन-प्रसारण**–निष्प्रयोजन हाथों तथा पांवों को सिकोड़ना या फैलाना।
7. **आलस्य**–सामायिक में अंगड़ाइयां लेना।
8. **मोडन**–सामायिक में हाथों तथा पांवों की उंगलियां चटखाना।
9. **मल**–सामायिक में शरीर का मैल उतारना।
10. **विमासन**–बिना पूंजे शरीर खुजाना, या रात्रि में इधर-उधर आना-जाना या शोकग्रस्त की भांति बैठे रहना।
11. **निद्रा**–सामायिक में नींद लेना।
12. **वैयावृत्य**–सामायिक में निष्कारण ही सेवा कराना।

क्षमा याचना

जैन धर्म में क्षमा-याचना का बहुत बड़ा महत्व है। क्षमा-याचना करने से जन्म-जन्म के संचित पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं। आत्मा निर्मल बन जाती है और पाप कर्मों का फल भोगना नहीं पड़ता। अतः प्रत्येक साधक को क्षमा-याचना अवश्य करनी चाहिये। क्षमा-याचना के पश्चात् किसी को अपना शत्रु नहीं मानना चाहिए। किसी से अनबन रही हो तो उसे दूर करके उससे बोल-चाल प्रारम्भ कर मैत्री स्थापित करनी चाहिए। यह क्षमा-प्रार्थना का भाव है।

संकल्प

मैं जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र आर्य खण्ड के...नामक नगर का निवासी ..., तीर्थंकर देवों की साक्षी से, अपने पूज्य धर्माचार्य - गुरुदेव की साक्षी

से और अपनी आत्मा की साक्षी से, चार गति, चौरासी लाख जन्म-स्थानों के अनन्त-अनन्त जीवों के साथ इस भव (जन्म) सम्बंधी, पूर्वभव संख्यात्-असंख्यात-अनन्त जन्मों में राग-द्वेष, कषाय भावों से मैंने किसी भी जीव का कोई बुरा किया हो, कोई अपराध किया हो, करवाया हो, अनुमोदन किया हो, उसके लाभ में हानि पहुंचाई हो तो मैं समस्त जीवों से मन-वचन-काया से हाथ जोड़कर, मान मोड़कर पूर्ण समर्पण व निष्कपट भाव से अपने अपराधों की क्षमा-याचना करता हूं। हे जीवो! आप मुझे क्षमा प्रदान करें!

(हाथ जोड़कर क्षमा याचना करें। तत्पश्चात् यह भावना करें—मैं आपका मित्र हूं, आप मेरे मित्र हैं। संसार में मेरा कोई भी शत्रु/ विरोधी नहीं है।)

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ति मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ॥

○○○

चौबीस तीर्थंकरों के नाम

1. श्री ऋषभदेव जी
2. श्री अजितनाथ जी
3. श्री सम्भवनाथ जी
4. श्री अभिनन्दन जी
5. श्री सुमतिनाथ जी
6. श्री पद्मप्रभ जी
7. श्री सुपार्श्वनाथ जी
8. श्री चन्द्रप्रभ जी
9. श्री सुविधिनाथ जी
10. श्री शीतलनाथ जी
11. श्री श्रेयांसनाथ जी
12. श्री वासुपूज्य जी
13. श्री विमलनाथ जी
14. श्री अनन्तनाथ जी
15. श्री धर्मनाथ जी
16. श्री शांतिनाथ जी
17. श्री कुन्थुनाथ जी
18. श्री अरनाथ जी
19. श्री मल्लिनाथ जी
20. श्री मुनिसुव्रत स्वामी जी
21. श्री नमिनाथ जी
22. श्री अरिष्टनेमिनाथ जी
23. श्री पार्श्वनाथ जी
24. श्री महावीर स्वामी जी

तीर्थंकर भगवान् सृष्टि-तल के सर्वोच्च साधक और सर्वोच्च आत्माएं होती हैं। उनका समग्र जीवन स्व-पर कल्याण हेतु समर्पित होता है। परम-मंगल को जीने वाले श्री तीर्थंकर देवों का स्मरण-मनन भी मंगलरूप होता है।

ऊपर लिखित चौबीस तीर्थंकरों के चौबीस नाम अपने आप में मंत्र-रूप हैं, परम सत्य और संपूर्ण सुखों के मूल स्त्रोत हैं। इन पावन नामों को प्रतिदिन स्मरण करने वाला व्यक्ति जन्म, जरा, मरण और दुख-दारिद्रय से शीघ्र ही मुक्त हो जाता है, तथा आत्मा के अपने घर-सिद्धालय को प्राप्त कर लेता है।

बीस विहरमान तीर्थंकरों के नाम

1. श्री सीमन्धर स्वामी जी	2. श्री युगमंदिर स्वामी जी
3. श्री बाहु स्वामी जी	4. श्री सुबाहु स्वामी जी
5. श्री सुजात स्वामी जी	6. श्री स्वयंप्रभ स्वामी जी
7. श्री ऋषभानन स्वामी जी	8. श्री अनन्तवीर्य स्वामी जी
9. श्री सूरप्रभ स्वामी जी	10. श्री विशालधर स्वामी जी
11. श्री वज्रधर स्वामी जी	12. श्री चन्द्रानन स्वामी जी
13. श्री चन्द्रबाहु स्वामी जी	14. श्री भुजंग स्वामी जी
15. श्री ईश्वर स्वामी जी	16. श्री नेमीश्वर स्वामी जी
17. श्री वीरसेन स्वामी जी	18. श्री महाभद्र स्वामी जी
19. श्री देवयश स्वामी जी	20. श्री अजितवीर्य स्वामी जी

ग्यारह गणधरों के नाम

1. श्री इन्द्रभूति जी	2. श्री अग्निभूति जी
3. श्री वायुभूति जी	4. श्री व्यक्त स्वामी जी
5. श्री सुधर्मा स्वामी जी	6. श्री मण्डितपुत्र जी
7. श्री मौर्यपुत्र जी	8. श्री अकम्पित जी
9. श्री अचलभ्राता जी	10. श्री मेतार्य जी
11. श्री प्रभास जी	

सोलह महासतियों के नाम

1.	श्री ब्राह्मी जी	2.	श्री सुन्दरी जी
3.	श्री कौशल्या जी	4.	चौथी श्री सीता जी
5.	श्री राजीमती जी	6.	श्री कुन्ती जी
7.	श्री द्रौपदी जी	8.	श्री चन्दनबाला जी
9.	श्री मृगावती जी	10.	श्री पुष्पचूला जी
11.	श्री प्रभावती जी	12.	श्री सुभद्रा जी
13.	श्री दमयंती जी	14.	श्री सुलसा जी
15.	श्री शिवादेवी जी	16.	श्री पद्मावती जी

○○○

प्रत्याख्यान (संकल्प या प्रतिज्ञा)

मूल–पच्चक्खाणेणं भन्ते! जीवे किं जणयइ?

पच्चक्खाणेणं आसव दाराइं निरूंभइ, पच्चक्खाणेणं इच्छानिरोहं जणयइ, इच्छा निरोहं गए य णं जीवे सव्वदव्वेसु विणीय तण्हे सीइभूए विहरई। – उत्तराध्ययन. 29

अर्थ–भगवन्! प्रत्याख्यान करने से आत्मा को किस फल की प्राप्ति होती है?

प्रत्याख्यान करने से हिंसादि आश्रव द्वार बन्द हो जाते हैं और इच्छा का निरोध हो जाता है। इच्छा का निरोध होने से समस्त विषयों के प्रति वितृष्ण होकर साधक शांत चित्त रहकर विचरण करता है।

दश-प्रत्याख्यान संकल्प / प्रतिज्ञायें

1. नमस्कार सहित सूत्र (नवकारसी)

उग्गए सूरे नमोक्कार-सहियं पच्चक्खामि।
चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं।
अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं वोसिरामि।

अर्थ : सूर्य उदय होने पर, (सूर्योदय के 48 मिनट पश्चात् तक) नमस्कार सहित प्रत्याख्यान ग्रहण करता हूं। अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य—चारों प्रकार के आहारों का त्याग करता हूं।

अनाभोग और सहसाकार—उक्त दो आगारों (अपवाद) के सिवा चारों आहारों का त्याग करता हूं।

2. पौरुषी-सूत्र (पोरसी पहर)

उग्गए सूरे पोरिसिं पच्चक्खामि। चउव्विहंपि आहारं, असणं पाणं खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्न-कालेणं दिसा मोहेणं, साहुवयणेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरामि।

अर्थ—पौरुषी का प्रत्याख्यान करता हूं। सूर्योदय से लेकर पहर दिन चढ़े तक अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य—चारों प्रकार के आहारों का त्याग करता हूं। अनाभोग, सहसाकार, प्रच्छन्नकाल, दिशा-मोह, साधु-वचन, सर्व समाधि प्रत्याकार, उक्त छह आगारों के सिवा चारों आहारों का त्याग करता हूं।

3. पूर्वार्ध सूत्र (दो पोरसी—दो प्रहर)

उग्गए सूरे पुरिमड्ढं पच्चक्खामि। चउव्विहं पि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं,

दिसामोहेणं, साहूवयणेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।

अर्थ–सूर्योदय से लेकर दिन के पूर्वार्ध तक (दो पहर तक) चारों आहारों–आशन, पान, खाद्य, और स्वाद्य का त्याग करता हूं।

अनाभोग, सहसाकार, प्रच्छन्नकाल, दिशा-मोह, साधु-वचन, महत्तराकार और सर्व समाधि प्रत्ययाकार–उक्त सात आगारों के सिवा चारों आहारों का त्याग करता हूं।

4. एकाशन सूत्र (एकासन व्रत का संकल्प)

एगासणं पच्चक्खामि। तिविहं पि (चउव्विहंपि) आहारं असणं (पाणं) खाइमं साइमं।

अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं आउंटण-पसारणेणं, गुरु अब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।

नोट : एकाशन तिविहार करना हो तो कोष्ठक के शब्द का उच्चारण नहीं करे। चौविहार करना हो तो तिविहं शब्द नहीं बोले।

अर्थ–एकाशन का प्रत्याख्यान करता हूं। अशन (पान), खाद्य और स्वाद्य इन तीनों (चौविहार करना हो तो चारों) आहारों का त्याग करता हूं। (पूरे दिन-रात्रि के 24 घंटों में एक बार एक ही स्थान पर बैठकर भोजन करना एकशन व्रत कहलाता है।)

अनाभोग, सहसाकार, सागारिकाकार, आकुंचन-प्रसारण, गुरु अभ्युत्थान, पारिष्ठापनिकाकार, महत्तराकार, सर्व समाधि प्रत्ययाकार, उक्त आठ आगारों के सिवाय तीनों (चारों) आहारों का त्याग करता हूं।

5. एकलस्थान सूत्र (एकलठाणा–एक हाथ से भोजन करना)

एक्कासणं एगट्ठाणं पच्चक्खामि। तिविहं पि चउव्विहंपि आहारं-असणं पाणं खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, सागारियागारेणं, गुरु अब्भुट्ठाणेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरा-गारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरामि।

अर्थ–एकाशन रूप एक स्थान का प्रत्याख्यान करता हूं। अशन (पान), खाद्य और स्वाद्य–तीनों (चारों) आहार का त्याग करता हूं।

अनाभोग, सहसाकार, सागारिकाकार, गुरु–अभ्युत्थान, पारिष्ठा-पनिकाकार, महत्तराकार व सर्व समाधि प्रत्ययाकार, उक्त सात आगारों के सिवाय चारों आहारों का त्याग करता हूं।

6. आचाम्ल सूत्र (आयंबिल–रूखा-नीरस भोजन एक बार लेना)

आयंबिलं पच्चक्खामि। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, लेवालेवेणं, उक्खित्तविवेगेणं, गिहत्थ संसट्ठेणं, पारिट्ठावणिया-गारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।

अर्थ–आयंबिल तप का प्रत्याख्यान करता हूं। अनाभोग, सहसाकार, लेपालेप, उत्क्षिप्तविवेक, गृहस्थ–संसृष्ट, पारिष्ठापनिकाकार, महत्तराकार, सर्व–समाधि–प्रत्ययाकार, उक्त आठ आगारों के सिवाय आहार का त्याग करता हूं।

7. उपवास–सूत्र
(व्रतः दिन–रात के 24 घंटे तक आहार का त्याग)

उग्गए सूरे अभत्तट्ठं पच्चक्खामि। (चउव्विहंपि) तिविहंपि, आहारं असणं (पाणं) खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहि-वत्तियागारेणं, वोसिरामि।

नोट : 1. जितनी तपस्या करनी हो उससे दुगुना करके दो और जोड़ देना चाहिए। जैसे बेला में छट्ठम, तेला में अट्ठम, चौला में दसम, पचौला में दुवालसमं इत्यादि....।

2. तिविहार करना हो तो **'चउव्विहंपि'** की जगह **'तिविहंपि'** बोले व **'पाणं'** नहीं बोले।

अर्थ–सूर्योदय से उपवास का पच्चक्खाण करता हूं। अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य–चारों आहारों का त्याग करता हूं। अनाभोग, सहसाकार, पारिष्ठापनिकाकार, महत्तराकार व सर्व-समाधि प्रत्ययाकार, उक्त पांच आगारों के सिवाय चारों आहारों का त्याग करता हूं।

8. दिवस चरिम सूत्र

दिवस चरिमं पच्चक्खामि। चउव्विहंपि आहारं असणं पाणं खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।

अर्थ–दिवस चरम का प्रत्याख्यान करता हूं। अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य–चारों आहारों का त्याग करता हूं। अनाभोग, सहसाकार, महत्तराकार, सर्व समाधि प्रत्ययाकार, उक्त चार आगारों के सिवा चारों आहारों का त्याग करता हूं।

9. अभिग्रह सूत्र

अभिग्गहं पच्चक्खामि। चउव्विहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं साइमं। अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहि वत्तियागारेणं वोसिरामि।

अर्थ–अभिग्रह का प्रत्याख्यान करता हूं। चारों आहार–अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का त्याग करता हूं।

अनाभोग, सहसाकार, महत्तराकार, सर्व समाधि प्रत्ययाकार, उक्त चार आगारों के सिवा चारों आहारों का त्याग करता हूं।

10. निर्विकृतिक (नीवीं) सूत्र
(रूखा-नीरस भोजन एवं छाछ दिन में एक बार)

विगईओ पच्चक्खामि। अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, लेवालेवेणं, गिहत्थ संसट्ठेणं, उक्खित्तविवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं, पारिट्ठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।

अर्थ–विकृतियों (विगयों) का त्याग करता हूं। अनाभोग, सहसाकार, लेपालेप, गृहस्थ संसृष्ट, उत्क्षिप्त विवेक, प्रतीत्यम्रक्षित, पारिष्ठापनिक, महत्तराकार, सर्व समाधि प्रत्ययाकार उक्त नव आगारों के सिवाय (विगय) का त्याग करता हूं।

ooo

प्रत्याख्यान पारणा सूत्र

(संकल्प-संपन्नता का पाठ)

उग्गए सूरे नमोक्कार-सहियं पच्चक्खाणं कयं। तं पच्चक्खाणं सम्मं कायेणं फासियं, पालियं, तीरियं, किट्टियं, सोहियं, आराहियं।

जं च न आराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

नोट : 1. जो प्रत्याख्यान पारना हो उसका उच्चारण करे। जैसे एकाशन किया हो तो **"नमोक्कार सहियं"** की जगह **"एगासणं"** का उच्चारण करें।

अर्थ–सूर्योदय होने पर जो नमस्कार सहित प्रत्याख्यान किया था, वह प्रत्याख्यान शरीर (मन एवं वचन) के द्वारा सम्यग् रूप से स्पृष्ट, पालित, शोधित, तीरित, कीर्तित व आराधित किया व जो सम्यग् रूप से आराधित न किया हो तो उसका दुष्कृत मेरे लिए मिथ्या हो।

विशेष : प्रत्याख्यान पालने के छह अंग बतलाए हैं। अतः ग्रहण किये हुए प्रत्याख्यान की आराधना छहों अंगों से करनी चाहिए। वे छह अंग निम्नोक्त हैं–

1. **फासियं**–स्पर्शित–गुरुदेव से या स्वयं विधिपूर्वक प्रत्याख्यान लेना।

2. **पालियं**–पालित–प्रत्याख्यान को बार–बार उपयोग में लाकर सावधानी के साथ उसकी सतत् रक्षा करना।

3. **सोहियं**–शोधित–कोई दूषण लग जाये, तो सहसा उसकी शुद्धि करना।

4. **तीरियं**–तीरित–गृहीत प्रत्याख्यान का काल पूरा हो जाने पर भी कुछ समय ठहर कर भोजन करना।

5. **किट्टियं**–कीर्तित–भोजन प्रारम्भ करने से पहले लिए हुए प्रत्याख्यान को विचार कर उत्कीर्तन पूर्वक कहना कि मैंने अमुक प्रत्याख्यान अमुक रूप से ग्रहण किया, व भली–भांति पूरा हो गया है।

6. **आराहियं**–आराधित–सब दोषों से सर्वथा दूर रहते हुए ऊपर कही हुई विधि के अनुसार प्रत्याख्यान की आराधना करना।

प्रत्याख्यान सूत्रों में प्रयुक्त आगारों (प्रतिज्ञाओं में छूट) का अर्थ

1. **अन्नत्थणाभोगेणं–अनाभोग**–अत्यन्त विस्मृति / प्रत्याख्यान लेने की बात सर्वथा भूल जाये और उस समय असावधानीवश कुछ खा–पी लिया जाये।

2. सहसागारेणं-सहसाकार–मेघ बरसने पर, अथवा दही आदि मथते समय अचानक ही जल या छाछ आदि का छींटा मुंह में चला जाये।

3. पच्छन्नकालेणं–प्रच्छन्नकाल–बादल अथवा आंधी आदि के कारण सूर्य ढ़क जाने से पौरुषी पूर्ण हो जाने की भ्रान्ति हो जाना। उपलक्षण से घड़ी के आगे-पीछे होने का भी समझना चाहिए।

4. दिसामोहेणं–दिशामोह–पूर्व को पश्चिम समझकर पौरुषी न आने पर भी सूर्य के ऊंचा चढ़ आने की भ्रान्ति से आहार ग्रहण कर लेना।

5. साहुवयणेणं–साधु-वचन–'पौरुषी आ गई' इस प्रकार किसी आप्तपुरुष-साधु-साध्वी के कहने पर बिना पौरुषी आए ही पौरुषी पार लेना।

6. सव्वसमाहि वत्तियागारेणं–सर्व समाधि प्रत्ययाकार–आकस्मिक शूल आदि तीव्र रोग की उपशान्ति के लिए औषधि आदि ग्रहण कर लेना।

7. महत्तरागारेणं–महत्तराकार–विशेष निर्जरा आदि को ध्यान में रखकर रोगी आदि की सेवा के लिए, धर्म संघ के किसी महत्वपूर्ण कार्य के लिए, अथवा अन्य आवश्यक कार्यवशात् गुरुदेव आदि महत्तर महान् पुरुष की आज्ञा पाकर निश्चित समय के पहले ही प्रत्याख्यान पार लेना।

8. सागारियागारेणं–सागारिकाकार–सागारि-गृहस्थ के आ जाने पर उसके सम्मुख भोजन करना मना है। अतः गृहस्थ के आने पर साधु को भोजन करना छोड़कर यदि बीच में ही उठकर, एकान्त में जाकर पुनः दूसरी बार भोजन करना पड़े।

सर्प या अग्नि आदि उपद्रव होने पर भी अन्यत्र भोजन किया जा सकता है।

9. आउंटणा पसारणेणं–आकुंचन-प्रसारण–भोजन करते समय सुन्न पड़ जाने या रोगादि के कारण से हाथ, पैर आदि अंगों का सिकोड़ना या फैलाना।

10. गुरु अब्भुट्ठाणेणं–गुर्वभ्युत्थान–गुरुदेव एवं साधु-साध्वियों के आने पर उनका विनय-सत्कार करने के लिए उठना या खड़े होना।

11. लेवालेवेणं–लेपालेप–आयंबिल व्रत में ग्रहण न करने योग्य शाक तथा घृत आदि विगय से यदि पात्र अथवा हाथ आदि लिप्त हो और दातार गृहस्थ यदि उसे पोंछकर उसके द्वारा आयंबिल योग्य भोजन बहराए।

12. उक्खित्त-विवेगेणं–उत्क्षिप्त विवेक–शुष्क ओदन एवं रोटी आदि पर गुड़ तथा शक्कर आदि अद्रव-सूखी विकृति (विगय) पहले से रखी हो। आयंबिल व्रतधारी को यदि कोई वह विकृति उठाकर रोटी आदि देना चाहे तो ग्रहण की जा सकती है।

13. गिहत्थसंसट्ठेणं (गृहस्थ संसृष्ट)–घी, तेल आदि से चिकने हाथों से गृहस्थ द्वारा दिया हुआ आहार-पानी तथा दूसरे चिकने आहार का जिसमें लेप लग गया हो ऐसा आहार-पानी ग्रहण करना।

14. पडुच्चमक्खिएणं–प्रतीत्यप्रक्षित–भोजन बनाते समय जिन रोटी आदि पर सिर्फ अंगुली से घी आदि विगय चुपड़ गया हो, तो ऐसी वस्तुओं को ग्रहण करना।

15. पारिट्ठावणियागारेणं–पारिष्ठापनिकाकार–किसी दातार के भावातिरेक या अन्य कारण से आहार करने वाले साधु-साध्वियों के आहार ज्यादा आ गया हो तो व्रत होते हुए भी उस आहार को ग्रहण करना।

नोट : उपरोक्त आगारों में 8वां, 11वां, 12वां, 13वां, 14वां, 15वां आगार मुख्यतया साधु-साध्वी के लिए ही है।

ooo

पौषध व्रत लेने का पाठ

ग्यारहवां पौषध व्रत–असणं पाणं खाइमं साइमं चारों आहार का पच्चक्खाण, अबंभ सेवन का पच्चक्खाण, माला वण्णग-विलेवण का पच्चक्खाण, अमुक मणि-सुवर्ण का पच्चक्खाण, सत्थ मुसलादि सावज्ज योग सेवन का पच्चक्खाण, जाव अहोरत्तं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं, न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तस्स भन्ते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

पौषध लेने और पारने की विधि सामायिक की विधि के अनुसार ही है। गृहस्थोचित वस्त्र, कोट, पाजामा और पगड़ी आदि उतार कर, शुद्ध दुपट्टा और धोती आदि धारण कर पौषध व्रत लेना चाहिए । नवकार मन्त्र से ले कर सब पाठ सामायिक ग्रहण करने के अनुसार ही पढ़ने चाहिएं। केवल जहाँ सामायिक में **'करोमि भंते'** बोला जाता है, वहाँ ऊपर लिखित पौषध लेने का पाठ बोलना चाहिए । इसी प्रकार पौषध पारते समय जहाँ सामायिक पारने का **'एयस्स नवमस्स'** पाठ बोला जाता है; वहाँ नीचे लिखा पौषध पारने का पाठ बोलना चाहिए ।

○○○

पौषध व्रत पारने का पाठ

ग्यारहवें प्रतिपूर्ण पौषध के विषय में जो कोई अतिचार दोष लगा हो तो आलोउं–1. पौषध में शय्या संथारा न देखा हो या अच्छी तरह न देखा हो, 2. प्रमार्जन नहीं किया हो या अच्छी तरह नहीं किया हो, 3. उच्चार पासवण परठने की भूमि अच्छी तरह से न देखी हो या अविधि से अपूर्ण देखी हो, 4. उच्चार पासवण परठने की भूमि पूंजी

न हो या अच्छी तरह न पूंजी हो, 5. उपवास युक्त पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन न किया हो तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

○○○

संवर करने का पाठ

द्रव्य से पांच आश्रव सेवन का पच्चक्खाण, क्षेत्र से ... (जितने क्षेत्र की मर्यादा करनी हो उतने क्षेत्र का परिमाण कहना), काल से (जितने काल तक संवर करना हो उतना काल कहना), भाव से उपयोग सहित, गुण से निर्जरा के हेतु तथा जब तक 5 नवकार मंत्र न पढ़ लूं तब तक। दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भंते! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

नोट : पांच नवकार-मंत्र बोलकर संवर पारना चाहिये।

○○○

सप्त-कुव्यसन-त्याग

1. शिकार खेलना–निरपराध जीव को मारना, पीड़ा पहुंचाना, 2. जुआ, सट्टा खेलना, 3. चोरी करना, 4. मांस, अण्डा, मछली आदि भक्षण, 5. मदिरा आदि मादक वस्तु सेवन, 6. परस्त्री-गमन, 7. वेश्यागमन।

प्रत्येक मनुष्य को इन सात कुव्यसनों का जीवन भर के लिये त्याग कर देना चाहिये। इनका त्याग मनुष्य को सच्चा मनुष्य बनाने वाला है, मानव-जीवन का उत्थान एवं कल्याण करने वाला है। ये कुव्यसन व्यक्तिगत दोष होते हुए भी नैतिक, सामाजिक, राष्ट्रीय अपराध हैं। इन कुव्यसनों का त्याग किये बिना कोई व्यक्ति साधक नहीं बन सकता।

श्रावक/श्राविका जी के चौदह नियम

1. **सचित्त**–जीव सहित वस्तु अर्थात् कच्चा नमक, कच्चा पानी, फल, फूल, मूल, शाक, बीज आदि कोई भी सचित्त वस्तु जो छेदन-भेदन होकर तथा अग्नि आदि का शस्त्र पाकर अचित्त न हुई हो, उसका परिमाण करना।
2. **द्रव्य**–रोटी, दाल, भात आदि।
3. **विगय**–दूध, दही, घी, तेल मिठाई आदि।
4. **उपानत्**–जूते, चप्पल आदि।
5. **ताम्बूल**–मुखवास पान-सुपारी आदि।
6. **वस्त्र**–पहनने-ओढ़ने के सब कपड़े।
7. **कुसुम**–सूंघने की वस्तु-फूल, इत्र आदि।
8. **वाहन**–घोड़ा, हाथी, जहाज, मोटर साइकिल, तांगा आदि।
9. **शयन**–पलंग, खाट, बिछौने आदि।
10. **विलेपन**–चन्दन, तेल, उबटन आदि।
11. **ब्रह्मचर्य**–मैथुन का त्याग।
12. **दिशा**–ऊंची, नीची, तिरछी दिशा का परिमाण।
13. **स्नान**–स्नान के जल का परिमाण।
14. **भत्त**–भोजन आदि कितनी बार करना, उसकी गिनती।

सूचना : मर्यादित जीवन जीने के लिए जहां तक हो सके व्यक्ति को प्रतिदिन चौदह नियम ग्रहण करने चाहिएं। ऊपर लिखित चौदह वस्तुओं की आवश्यकता के अनुसार जितनी मर्यादा (संख्या अथवा मात्रा) रखनी हो, उसके उपरान्त त्याग करना चाहिए। जितना त्याग उतनी ही शांति। चौदह नियम धारण से समुद्र जितना पाप घट कर बूंद के बराबर रह जाता है।

मुनिराज के तीन मनोरथ

'साधु' जीवन को तेजस्वी रखने के लिये नीचे लिखे तीन मनोरथों का प्रातः-सायं चिंतन-मनन करता है-

1. 'ज्ञान' साधना के क्षेत्र में चक्षु का काम करता है-**आगमचक्खू साहू।** अतः साधु का पहले मनोरथ के रूप में महान् संकल्प है-वह दिन महान् कल्याण का होगा, जब मुझे आत्मा की व्याख्या करने वाले समस्त पूर्वों की विद्या का ज्ञान होगा।

2. ज्ञान-प्राप्ति के पश्चात् आचरण होता है। जीवन को ऊंचा उठाने में आचरण अनिवार्य है। ज्ञान + आचरण ही मोक्ष है। अतः ज्ञान को सार्थक करने के लिये साधु को आचरण के लिये भी ऊंचा संकल्प तैयार करना है। अतः साधु दूसरे मनोरथ-रूप में उत्कृष्ट चारित्र का संकल्प करे, कि वह समय सुन्दरतम होगा, जब मैं समाज-सम्प्रदाय आदि के सभी बन्धनों से उन्मुक्त होकर जिन-कल्परूप भिक्षु-प्रतिमा (एक विशिष्ट तरह का उच्च चारित्र) अंगीकृत करके अबाध गति से विचरण करूंगा।

3. साधु तीसरे मनोरथ के रूप में यह संकल्प करता है, कि वह दिन धन्य होगा जब मैं मृत्यु का हर तरह से स्वागत करूंगा। उसके लिये मैं संलेखना द्वारा क्रोध आदि कषायों को क्षीण कर अपनी आत्मा को पवित्र करूंगा। आत्मा का लक्ष्य ही मेरे सामने होगा, शरीर का नहीं। मृत्यु के समय मैं आहार आदि का त्याग करूंगा। पादपोपगमन की विधि के अनुसार मृत्यु का स्वागत करूंगा।

इस तरह तीनों मनोरथों को साकार रूप देता हुआ साधु, महान् निर्जरा करता हुआ संसार का पर्यवसान-अन्त कर देता है।

○○○

श्रावक के तीन मनोरथ

श्रावक के लिए आवश्यक है, कि वह प्रतिदिन प्रातःकाल सामायिक करते समय अथवा वैसे ही मनोरथों के द्वारा भविष्य के लिए शुभ संकल्प करे। भगवान् महावीर ने भी स्थानांगसूत्र में यह वर्णन किया है।

1. श्रावक का पहला मनोरथ यह है कि ''वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं अपने धन-संपत्ति-रूप परिग्रह का पीड़ित जनता के हित के लिए त्याग करूंगा। यह परिग्रह मेरी आत्मा के लिए सबसे बड़ा बन्धन है। यह ममता का जहर आध्यात्मिक जीवन को दूषित कर रहा है। धन का सच्चा उपयोग संग्रह में अथवा अपने स्वार्थ के पोषण में नहीं है, प्रत्युत जन-हित के लिए अर्पण कर देने में है। अस्तु, जिस दिन मैं अपने परिग्रह को जन-सेवा में त्याग कर प्रसन्नता अनुभव करूंगा, ममता के भार से हलका हो जाऊंगा, वह दिन मेरे लिए महान् कल्याणकारी होगा।''

2. श्रावक का दूसरा मनोरथ यह है, कि ''वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं संसार की मोह-माया और विषय-वासना का त्याग करके साधु-जीवन स्वीकार करूंगा! अहिंसा आदि पांच महाव्रतों को धारण कर और परीषह-उपसर्गों को समभाव से सहन कर जिस दिन मुनि पद की ऊंची भूमिका में विचरण करूंगा, वह दिन मेरे लिए महान कल्याणकारी होगा।''

3. श्रावक का तीसरा मनोरथ यह है, कि ''वह धन्य दिन कब होगा, जब मैं अपनी संयम यात्रा को सकुशल, निर्विघ्नभाव से पूर्ण कर अन्त समय में आलोचना, निन्दना एवं गर्हणा करके संथारा ग्रहण करूंगा? सब प्रकार की उपाधि, आहार और जीवन की ममता का भी त्याग कर जिस दिन मैं पूर्ण रूप से अपने आपको वीतराग भगवान् की उपासना में लगाऊंगा। वह दिन मेरे लिए कल्याणकारी होगा।''

परमेष्ठी-वन्दना

अरिहंत-वन्दना

नमूं श्री अरिहन्त, कर्मों का किया अन्त।
हुआ सो केवलवन्त, करुणा भण्डारी है॥
अतिशय चौंतीस धार, पैंतीस वाणी उच्चार।
समझावे नर-नार पर उपकारी है॥
शरीर सुन्दराकार, सूरज सो झलकार।
गुण हैं अनन्तसार, दोष परिहारी है॥
कहत हैं तिलोकरिख, मन-वच-काया करी।
झुकि-झुकि बारम्बार, वन्दना हमारी है॥1॥

नमो अरिहंताणं—पहले पद श्री अरिहन्त महाराज चौंतीस अतिशय, 35 वाणी के गुणोंकरी विराजमान, महाविदेह क्षेत्र में जयवन्त विचरे श्री सीमन्धर स्वामी (श्री युगमन्धर स्वामी, श्री बाहु स्वामी, श्री सुबाहु स्वामी, श्री सुजात स्वामी, श्री स्वयंप्रभ स्वामी, श्री ऋषभानन स्वामी, श्री अनन्तवीर्य स्वामी, श्री सूरप्रभ स्वामी, श्री विशालधर स्वामी, श्री वज्रधर स्वामी, श्री चन्द्रानन स्वामी, श्री चन्द्रबाहु स्वामी, श्री भुजंग स्वामी, श्री ईश्वर स्वामी, श्री नेमप्रभ स्वामी, श्री वीरसेन स्वामी, श्री महाभद्र स्वामी, श्री देवयश स्वामी, श्री अजितवीर्य स्वामी) आदि जघन्य 20, उत्कृष्ट 160 तथा 170 तीर्थंकर अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्त बल, देव-दुन्दुभी, भामण्डल, स्फटिक सिंहासन, अशोक-वृक्ष, पुष्प-वृष्टि, दिव्य ध्वनि, छत्र धरे, चामर वींजे, इन 12 गुणों से विराजमान, चौंसठ इन्द्रों के पूजनीय, जघन्य दो करोड़, उत्कृष्ट नौ करोड़ केवली, केवल-ज्ञान, केवल दर्शन कर सहित, 18 दोषों से

रहित, सर्व द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के जानकार इत्यादि अनेक गुणों कर विराजमान जिन महाराजों को मेरी भाव-वन्दना नमस्कार हो जो।

ऐसे अरिहन्त भगवन्त महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय-आशातना हुई हो तो 1008 बार तिक्खुत्तो के पाठ से नमस्कार करता हूं। आप मांगलिक हो, उत्तम हो, आपका इस भव में पर-भव में शरणा हो जो।।1।।

सिद्ध-वन्दना

सकल कर्म टाल, वश कर लियो काल।
मुक्ति में रह्या माल, आत्मा को तारी है।।
देखत सकल भाव, हुआ है जगत राव।
सदा ही क्षायिक भाव, भये अविकारी है।।
अचल अटल रूप, आवे नहीं भव-कूप।
अनुप-सरूप-ऊप, ऐसे सिद्धिधारी है।।
कहत है तिलोकरिख, बताओ ए वास प्रभु।
सदा ही उगंत सूर, वन्दना हमारी है।।2।।

नमो सिद्धाणं—दूसरे पद श्री सिद्ध भगवन्त महाराज 14 प्रकारे 15 भेदे सिद्ध (सकल कर्म-रहित) हुए हैं, आठ गुणाकरी विराजमान, 1. अनन्त ज्ञान, 2. अनन्त दर्शन, 3. अनन्त सुख, 4. क्षायिक समकित, 5. अटल अवगाहना, 6. अमूर्तपना, 7. अगुरुलघु, 8. अनन्त बल, इकतीस अतिशय से विराजमान, पांच भेदे ज्ञानावरणीय कर्म क्षय किये, नौ भेदे दर्शनावरणीय कर्म-क्षय किये, दो भेदे वेदनीय कर्म क्षय किये, दो भेदे मोहनीय कर्म क्षय किए, चार भेदे आयु कर्म क्षय किये, दो भेदे नामकर्म क्षय किये, दो भेदे गोत्रकर्म क्षय किये और पांच भेदे अन्तरायकर्म क्षय किये, जहां जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, भय नहीं,

रोग नहीं, शोक नहीं, दु:ख नहीं, दारिद्र्य नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, लघु नहीं, गुरु नहीं, यावत् निरञ्जन निराकार ज्योति-स्वरूप ज्योति में विराजमान अनन्त सुख में लवलीन, उन सिद्ध भगवंतों को मेरी भाव-वन्दना नमस्कार हो जो।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त महाराज आपकी अविनय-आशातना हुई हो तो हाथ जोड़ 1008 बार तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना-नमस्कार करता हूं। हे सिद्ध भगवन्त! महाराज! आप मांगलिक हो, उत्तम हो, आपका इस भव में पर-भव में शरणा हो जो।।1।।

आचार्य-वन्दना

गुण हैं छत्तीसपूर, धारत धरम उर।
मारत कर्म कूर, सुमति विचारी है।।
शुद्ध सो आचारवन्त, सुन्दर है रूप कन्त।
भणया सभी सिद्धान्त, वाचणी सुप्यारी है।।
अधिक मधुर वेण, कोई नहीं लोपे केण।
सकल जीवों का सेण, कीरत अपारी है।।
कहत है तिलोकरिख, हितकारी देत सीख।
ऐसे आचारज ताकूं, वन्दना हमारी है।।3।।

नमो आयरियाणं-तीजे पद श्री आचार्य महाराज, 36 गुणाकरी विराजमान, पांच आचार पालें, पांच महाव्रत पालें, पांच इन्द्रियां जीतें, चार कषाय टालें, नौ बाड़ शुद्ध शील पालें, पांच समिति, तीन गुप्ति से गुप्त, आठ संपदा-सहित, निश्चल समकिती, निकट भवी, शुक्ल पक्षी, मोक्ष-मार्ग के सारथी इत्यादि अनेक गुणों से विराजमान उन आचार्य भगवंतों को मेरी भाव-वन्दना-नमस्कार हो जो।

ऐसे श्री आचार्य महाराज! आपकी अविनय-आशातना हुई हो तो हाथ जोड़ 1008 बार तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना-नमस्कार करता हूं। हे आचार्य महाराज! आप मांगलिक हो, उत्तम हो, आपका इस भव में परभव में बारम्बार शरण हो जो।।3।।

उपाध्याय-वन्दना

पढ़त इग्यारह अंग, कर्मों से करे जंग।
पाखंडी को मान भंग, करण हुसियारी है।।
चउदे पूरव-धार, जानत आगम-सार।
भवियन के सुखकार, भ्रमता निवारी है।।
पढ़ावे भविक जन, स्थिर करि देते मन।
तप करी तावे तन, ममता निवारी है।।
कहत है तिलोकरिख ज्ञान-भानु परतिख।
ऐसे उपाध्याय जी को वन्दना हमारी है।।4।।

नमो उवज्झायाणं—चौथे पद श्री उपाध्याय जी महाराज आप पढ़ें औरों को पढ़ावें, पच्चीस गुणोकर विराजमान, ग्यारह अंग, बारह उपांग के पाठक, (**ग्यारह अंगों के नाम**—1 आचाराङ्ग, 2. सूयगडांग, 3. ठाणांग, 4. समवायांग, 5. भगवती, 6. ज्ञाता, 7. उपासक-दशाङ्ग, 8. अन्तगड-दशाङ्ग, 9. अनुत्तरोववाई, 10. प्रश्नव्याकरण, 11. विपाक सूत्र।) **बारह उपांग**—1. उववाई, 2. रायपसेणी, 3. जीवाभिगम, 4. पन्नवणा, 5. जम्बूदीप-पन्नत्ति, 6. चन्दपन्नत्ति, 7. सूरपन्नत्ति, निरयावलि—8. कप्पिया, 9. कप्पवडंसिया, 10. पुप्फिया, 11. पुप्फ-चूलिया, 12. वह्निदसा। चार मूल तथा चार छेद के जानकारद्ध करण-सत्तरी, चरण-सत्तरी के धारणहार, समकित रूप प्रकाश के करणहार, मिथ्यात्वरूप अंधकार के मेटनहार, धर्म को दिपाने वाले, डिगते प्राणी को धर्म में स्थिर करने

वाले, इत्यादि अनेक गुणों सहित ऐसे श्री उपाध्याय जी महाराज को मेरी भाव-वन्दना-नमस्कार हो।

हे उपाध्याय जी महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय-आशातना हुई हो तो बारम्बार 1008 बार तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करता हूं। हे उपाध्याय जी महाराज! आपका इस भव में पर-भव में शरण हो जो।।4।।

साधु-वन्दना

आदरी संयमभार, करणी करे अपार।
समिति गुपतिधार, विकथा निवारी है।।
जयणा करे छ काय, सावज्ज न बोले वाय।
बुझाय कषाय लाय, किरिया-भण्डारी है।।
ज्ञान भणे आठों याम, लेवे भगवन्त नाम।
धरम को करे काम, ममता कूं मारी है।।
कहत है तिलोकरिख, कर्मों का टाले विख।
ऐसे मुनिराज ताको वन्दना हमारी है।।5।।

नमो लोए सव्व-साहूणं-पांचवें पद, अढ़ाई द्वीप, पन्द्रह क्षेत्र रूप लोक के विषय साधु जी महाराज[1]! जघन्य दो हजार करोड़, उत्कृष्टा नव हजार करोड़ जयवंता विचरे, पांच महाव्रत पालें, पांच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टालें, भाव-सच्चे, करण-सच्चे, जोग-सच्चे, क्षमावन्त, वैराग्यवन्त, मन-समाधारणया, वय-समाधारणया, काय-समाधारणया, नाण-सम्पन्ना, दंसण-सम्पन्ना, चरित्त-सम्पन्ना, वेदनीय-समा-अहियासणया, मरणान्तिक कष्ट सहें, ऐसे सत्तावीस गुणों करके विराजमान, बावन अनाचार टालें, बियालीस दोष टाल के आहार लेवें, पांच मांडलिक दोष टाल के आहार

1. यहां अपने-अपने गुरु जी महाराज का नाम बोलना चाहिए।

करें, बाईस परीषह जीतें, सत्रह प्रकार संयम पालें, बारह भेद तप के करणहार, छह काया के पीहर, छह काया के ग्वाल, छह काया के प्रतिपाल, बुलाये आवे नहीं, नेतिये जीमे नहीं, भ्रमर-भिक्षा के लेनहार, वस्त्र, पात्र, आहार, स्थानक निर्दोष भोगवें, भगवान् की आज्ञा में विचरें, इत्यादि अनेक गुणों से विराजमान उन महापुरुषों को मेरी भाव-वन्दना-नमस्कार हो जो।

ऐसे गुरु महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय आशातना की हो तो बारम्बार 1008 बार तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना करता हूं। हे स्वामी नाथ! आपका इस भव, पर-भव में सदाकाल शरण हो जो।।5।।

गुरु-महिमा

जैसे कपड़ा को थान, दरजी वेतत आण।
खण्ड-खण्ड करे जाण, देत सो सुधारी है।।
काठ के ज्यूं सूत्रधार, हेम को कसे सुनार।
माटी के ज्यूं कुम्भकार, पात्र करे त्यारी है।।
धरती को किरसान, लोहे को लुहार जाण।
शिलावट शिला आण, घाट घड़े भारी है।।
कहत हैं त्रिलोक ऋषि, सुधारे ज्यूं गुरु शिष्य।
गुरु उपकारी नित, लीजे बलिहारी है।।6।।

गुरु मित्र, गुरु मात, गुरु सगा, गुरु तात।
गुरु भूप, गुरु भ्रात, गुरु हितकारी है।।
गुरु रवि, गुरु चन्द्र, गुरु पति गुरु इन्द्र।
गुरुदेव देत आनन्द गुरु पद भारी है।।
गुरु देत ज्ञान ध्यान, गुरु देत दान-मान।
गुरु देत मोक्ष स्थान, सदा उपकारी है।।

कहत हैं त्रिलोक ऋषि, भली-भली देवें सीख।
पल-पल गुरु जी को वन्दना हमारी है।।7।।

पद की वन्दना के पश्चात निम्नलिखित पाठ पढ़ें।

सामूहिक वन्दना

अनंत चौबीसी ते नमो, सिद्ध अनंता कोड़।
केवल-ज्ञानी स्थविर सभी, वन्दौं बे कर जोड़।।1।।
दो कोडी केवल-धरा, विहरमान जिन बीस,
सहस्त्र युगल कोड़ी नमो, साधु वंदौं निसदीस।।2।।

साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकायें, चार गति, चौबीस दंडक, चौरासी लाख जीव-योनि साथ मैं खमाउं बार-बार तथा म्हारे जीवे कोई जीव नी विराधना करी हो, कराई हो, करतां प्रति अनुमोद्या हो और एक-एक जीव के साथ अठारह लाख चौबीस हजार एक सौ बीस[1] प्रकारे मिच्छा मि दुक्कडं।[2]

---

1. जीवतत्त्व के 563 भेदों को अभिहया, वत्तिया, लेसिया आदि दस के साथ गुणा करने से 5630 भेद होते हैं। फिर इनको राग और द्वेष के साथ गुणा करने से 11260 भेद बनते हैं। फिर इन्हीं को मन, वचन और काय के साथ गुणा करने से 33780 भेद बनते हैं। फिर इनको करना, कराना अनुमोदन रूप तीन करणों के साथ गुणाकार करने से 101340 भेद होते हैं। इनको पुनः तीन काल के साथ गुणाकार करने से 304020 भेद होते हैं। फिर इन्हीं को अर्हन्, सिद्ध, देव, गुरु और आत्मा इस प्रकार छः से गुणाकार करने से 1824120 तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
2. कुछ संप्रदायों में इस पाठ के बाद निम्नलिखित दो गाथायें अधिक पढ़ी जाती हैं–

आयरिय-उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुलगणे अ।
जे मे केई कसाया, सव्वं तिविहेण खामेमि।।

अथवा

सात लाख पृथिवीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेजस्काय, सात लाख वायुकाय, दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दो लाख बेन्द्रिय, दो लाख तेन्द्रिय, दो लाख चतुरिन्द्रिय, चार लाख देव, चार लाख नारकी, चार लाख निर्यञ्च पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य, एवं चौरासी लाख जीव-योनिक में से यदि मैंने कोई जीव हनन किया हो, अन्य को मारने का उपदेश दिया हो, व हनन कर्त्ताओं की अनुमोदना की हो, वे सब मन, वचन, काय करके 18 लाख, 24 हजार, 1 सौ, बीस प्रकारे तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ॥
एवमहं आलोइय निंदिय, गरहिय, दुगुंच्छियं सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो वंदामि जिणे चउवीस॥

माला

जप के लिए माला उत्तम साधन है। परन्तु आजकल माला के संबंध में विवेक नहीं रखा जाता है, अतः अभीष्ट सिद्धि नहीं हो पाती है। माला दाहिने हाथ में रखनी चाहिए। अंगूठे और अंगूठे से जो तीसरी अंगुली मध्यमा है, इन दोनों से माला फेरना ठीक है। दूसरी अंगुली अर्थात् तर्जनी से भूल कर भी माला न फेरें। माला फेरते समय हाथ को हृदय के पास स्पर्श करते हुए रखना चाहिए। माला में जो सुमेरु है, उसे लांघना ठीक नहीं है। यदि दूसरी माला फेरनी हो, तो वापस माला बदल कर फेरनी चाहिए।

सव्वस्ससमण-संघस्स, भगवओअंजलिंकरिअसीसे।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि॥

कर-माला आवर्त्त

आवर्त्त से जप करना माला की अपेक्षा श्रेष्ठ है। प्राचीन काल में कर-माला से जप किया जाता था, क्योंकि यह मन की एकाग्रता में अधिक सहायक हो सकता है।

कर-माला के आवर्त्त छह हैं–1. साधारण आवर्त्त, 2. शंखावर्त्त; 3. नव-पद आवर्त्त, 4. ह्रीं आवर्त्त, 5. नंदावर्त्त और 6. ॐ आवर्त्त।

उदाहरणार्थ प्रथम साधारण आवर्त्त का परिचय करा देते हैं, उसी के अनुसार दूसरे आवर्त्तों का भी चित्रों से परिचय किया जा सकता है। दाहिने हाथ की कनिष्ठा अंगुली के नीचे के पौरवे से जपना प्रारंभ करें। इस प्रकार क्रम से कनिष्ठा के तीनों पौरवे, चौथा अनामिका के ऊपर का, पांचवां, मध्यमा के ऊपर का, छठा तर्जनी के ऊपर का, सातवां तर्जनी के मध्य का, आठवां तर्जनी के नीचे का, नौवां मध्यमा के नीचे का, दशवां अनामिका के नीचे का, ग्यारहवां अनामिका के मध्य का और बारहवां मध्यमा के अध्य का - इस प्रकार बारह जप हुए। अस्तु, नौ बार गिन लेने से एक माला पूरी हो जाती है। आवर्त्त के चित्र साथ में संलग्न हैं।

आवर्त्तों के चित्र

○○○

पटनावर्त्त

पटनावर्त्त में पांच पदों का जप किया जाता है। नवकार मंत्र के प्रथम पद **'नमो अरिहंताणं'** का ब्रह्मरंध्र में, दूसरे पद का ललाट में, तीसरे पद का कंठ में, चौथे पद का हृदय में और पांचवें पद का नाभिकमल में, इस प्रकार पंचपरमेष्ठी का ध्यान करें।

पटनावर्त्त का दूसरा प्रकार यह है कि प्रथम पद ब्रह्मरंध्र में, दूसरा ललाट में, तीसरा चक्षु में, चौथा श्रवण में और पांचवां मुख में स्थापित करके ध्यान करें।

सिद्धावर्त्त

सिद्धावर्त्त में वर्तमान काल के चौबीस तीर्थंकर, जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनका ध्यान किया जाता है। दोनों हाथों को मुख के सामने खुले रख कर दोनों हाथों की आयुष्य रेखा को बराबर मिलावें, जो सिद्धशिला की आकृति के समान भासित होने लगे। इसके बाद दोनों हाथों की आठों अंगुलियों के चौबीस पोरवों पर चित्र के अनुसार (चित्र साथ में है) चौबीस तीर्थंकरों का ध्यान करें। जप करते समय प्रत्येक तीर्थंकर का जप इस प्रकार करें – पहले अंक पर **'ॐ ह्रीं श्रीं ऋषभदेवाय नमः।'** दूसरे अंक पर **'ॐ ह्रीं श्रीं अजितनाथाय नमः'**। तीसरे अंक पर **'ॐ ह्रीं श्रीं संभवनाथाय नमः'** इत्यादि गुरुगम से समझ लेना चाहिए।

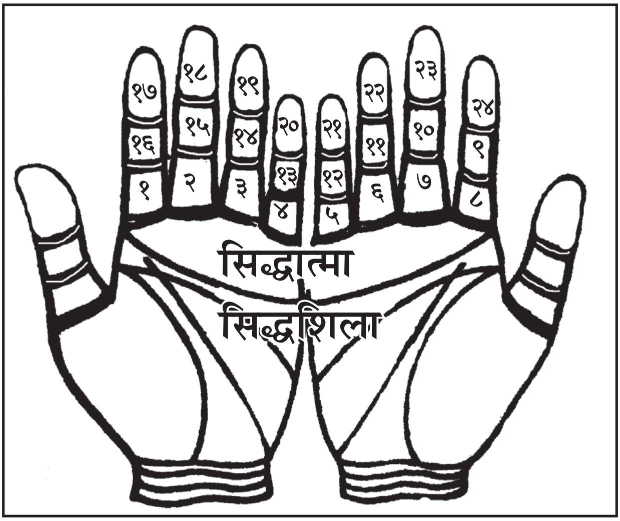

○○○

क्षमा याचना

जैन धर्म में क्षमा-याचना का बहुत बड़ा महत्व है। क्षमा-याचना करने से जन्म-जन्म के संचित पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं। आत्मा निर्मल बन जाती है और पाप कर्मों का फल भोगना नहीं पड़ता। अतः प्रत्येक साधक को क्षमा-याचना अवश्य करनी चाहिये। क्षमा-याचना के पश्चात् किसी को अपना शत्रु नहीं मानना चाहिए। किसी से अनबन रही हो तो उसे दूर करके उससे बोल-चाल प्रारम्भ कर मैत्री स्थापित करनी चाहिए। यह क्षमा-प्रार्थना का भाव है।

ooo

आनुपूर्वी-जप

यह आत्म-उपासना का एक विशिष्ट, वैज्ञानिक मार्ग है। सामान्यतया देखा गया है कि उपासक-वर्ग माला के माध्यम से मन्त्र-जप करता है, परन्तु उस माला-जप में यह होता है कि उपासक का मन कहीं और तथा माला कहीं और होती है। दोनों में तारतम्य नहीं रहता। बिना तारतम्य के विशेष फलोत्पत्ति भी नहीं होती। परन्तु आनुपूर्वी-जप की यह अद्भुत विशेषता है कि इसको जपते हुए साधक का मन इसी में केन्द्रित रहता है। मन कहीं इधर-उधर नहीं जाता। फलतः साधक को विशेष आध्यात्मिक लाभ होता है।

आनुपूर्वी पढ़ने की विधि

आनुपूर्वियां 20 हैं। प्रत्येक आनुपूर्वी में 5×6 = 30 कोष्ठक हैं। पांच-पांच कोष्ठक वाली छः-छः पंक्तियां हैं। आनुपूर्वियां बायें से दायें

पढ़ी जाती हैं। इन कोष्ठकों में 1 से 5 तक के अंक हैं। उन्हें पढ़ने की विधि यह है –

1 के स्थान पर **नमो अरिहंताणं** पढ़ें।

2 के स्थान पर **नमो सिद्धाणं** पढ़ें।

3 के स्थान पर **नमो आयरियाणं** पढ़ें।

4 के स्थान पर **नमो उवज्झायाणं** पढ़ें।

5 के स्थान पर **नमो लोए सव्वसाहूणं** पढ़ें।

फल : समस्त आनुपूर्वी पर एकाग्रचित्त से नमोक्कार मन्त्र पढ़ने से 6 मास के तप का आध्यात्मिक फल प्राप्त होता है। पांच सौ सागर जितने समय में जो पाप भोगा जाता है, उसे श्रद्धापूर्वक आनुपूर्वी का एक बार पाठ करने से साधक नष्ट कर देता है। अतः निःश्रेयस कामी साधक को नित्य प्रातः आनुपूर्वी पाठ अवश्य करना चाहिये। मुखवस्त्रिका धारण कर आनुपूर्वी पाठ करें।

विशेष–आनुपूर्वी केवल तप विधि ही नहीं है। इसमें बहुत रहस्य भी छिपा है। आनुपूर्वी के ये बीस कोष्ठक अपने आपमें पृथक्-पृथक् यन्त्र भी हैं। प्रत्येक यंत्र की अपनी महिमा है। श्रुति अनुसार इन कोष्ठकों में एक कोष्ठक ऐसा है जिसको जपने से रोग दूर होते हैं। एक कोष्ठक ऐसा है जिसको जपने से अभिचार कृत मूठ/घाल जैसी शक्तियां दूर भाग जाती हैं। और बिना किसी इच्छा के जपने वाला महान् आध्यात्मिक फल को प्राप्त करता है। विशेष विधि गुरु द्वारा जानी जा सकती है।

आनुपूर्वी-1

1	2	3	4	5
2	1	3	4	5
1	3	2	4	5
3	1	2	4	5
2	3	1	4	5
3	2	1	4	5

आनुपूर्वी-2

1	2	4	3	5
2	1	4	3	5
1	4	2	3	5
4	1	2	3	5
2	4	1	3	5
4	2	1	3	5

आनुपूर्वी-3

1	3	4	2	5
3	1	4	2	5
1	4	3	2	5
4	1	3	2	5
3	4	1	2	5
4	3	1	2	5

आनुपूर्वी-4

2	3	4	1	5
3	2	4	1	5
2	4	3	1	5
4	2	3	1	5
3	4	2	1	5
4	3	2	1	5

आनुपूर्वी–5

1	2	3	5	4
2	1	3	5	4
1	3	2	5	4
3	1	2	5	4
2	3	1	5	4
3	2	1	5	4

आनुपूर्वी–6

1	2	5	3	4
2	1	5	3	4
1	5	2	3	4
5	1	2	3	4
2	5	1	3	4
5	2	1	3	4

आनुपूर्वी–7

1	3	5	2	4
3	1	5	2	4
1	5	3	2	4
5	1	3	2	4
3	5	1	2	4
5	3	1	2	4

आनुपूर्वी–8

2	3	5	1	4
3	2	5	1	4
2	5	3	1	4
5	2	3	1	4
3	5	2	1	4
5	3	2	1	4

आनुपूर्वी–9

1	2	4	5	3
2	1	4	5	3
1	4	2	5	3
4	1	2	5	3
2	4	1	5	3
4	2	1	5	3

आनुपूर्वी–10

1	2	5	4	3
2	1	5	4	3
1	5	2	4	3
5	1	2	4	3
2	5	1	4	3
5	2	1	4	3

आनुपूर्वी-11

1	4	5	2	3
4	1	5	2	3
1	5	4	2	3
5	1	4	2	3
4	5	1	2	3
5	4	1	2	3

आनुपूर्वी-12

2	4	5	1	3
4	2	5	1	3
2	5	4	1	3
5	2	4	1	3
4	5	2	1	3
5	4	2	1	3

आनुपूर्वी–13

1	3	4	5	2
3	1	4	5	2
1	4	3	5	2
4	1	3	5	2
3	4	1	5	2
4	3	1	5	2

आनुपूर्वी–14

1	3	5	4	2
3	1	5	4	2
1	5	3	4	2
5	1	3	4	2
3	5	1	4	2
5	3	1	4	2

आनुपूर्वी–15

1	4	5	3	2
4	1	5	3	2
1	5	4	3	2
5	1	4	3	2
4	5	1	3	2
5	4	1	3	2

आनुपूर्वी–16

3	4	5	1	2
4	3	5	1	2
3	5	4	1	2
5	3	4	1	2
4	5	3	1	2
5	4	3	1	2

आनुपूर्वी–17

2	3	4	5	1
3	2	4	5	1
2	4	3	5	1
4	2	3	5	1
3	4	2	5	1
4	3	2	5	1

आनुपूर्वी–18

2	3	5	4	1
3	2	5	4	1
2	5	3	4	1
5	2	3	4	1
3	5	2	4	1
5	3	2	4	1

आनुपूर्वी–19

2	4	5	3	1
4	2	5	3	1
2	5	4	3	1
5	2	4	3	1
4	5	2	3	1
5	4	2	3	1

आनुपूर्वी–20

3	4	5	2	1
4	3	5	2	1
3	5	4	2	1
5	3	4	2	1
4	5	3	2	1
5	4	3	2	1

शान्ति पाठ

1	2	3	4	5
3	4	5	1	2
5	1	2	3	4
2	3	4	5	1
4	5	1	2	3

पढ़ने की विधि–शान्ति पाठ आनुपूर्वी की तरह ही पढ़ा जाता है। इसका जाप कम-से-कम 21 बार प्रतिदिन करना चाहिए। इस जाप को करते समय स्वच्छ वस्त्र मुख पर लगाकर पढ़ने का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

ooo

अंतिम संलेखना-संथारा समाधि-मरण

देव दुर्लभ मानव-भव को सफल एवं भविष्य को समुज्ज्वल बनाने के लिए प्रभु महावीर ने फरमाया कि हे भव्यो! आत्मार्थी साधको! तुम अपने जीवन में आसेवित दुष्कर्मों, संचित दुर्भावों, भव-वर्धक-कलुषित-कषायों, वैषयिक-तृष्णादि की सम्यक्तया आलोचना कर प्रायश्चित्त ले, स्वात्मा को निर्मल व विशुद्ध बना लो तथा शुद्ध धर्म के चिन्तन, श्रवण और आराधना में लग जाओ। इससे तुम्हारा वर्तमान भव सुधरने के साथ-साथ भविष्य सुखद् व आनन्दित बन सकेगा।

इस जीवन पर मृत्यु का आक्रमण किसी भी समय हो सकता है। मृत्यु कभी भी किसी का इन्तजार नहीं करती। कई लोग रात्रि में विश्राम हेतु आराम से सोते हैं। वे सोते के सोते रह जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में उनको संभलने एवं जीवन को सुधारने का अवसर ही नहीं मिल पाता है। इस अवस्था से बचने के लिए भव्यात्माओं को सोने से पहले 'सागारी संथारा' करके सोना चाहिए। इस सावधानी से दुःख देने, उद्विग्न बनाने, संताप पहुंचाने वाले अनावश्यक पाप कर्मों से अपना पिण्ड छुड़ाने वाले बन जायेंगे। अतः रात्रि में संथारा लेकर ही सोना चाहिए।

आरंभ कषाय अल्प हो, महाव्रत हो स्वीकार।
अंत समय आलोचना, तीन मनोरथ सार॥

सागारी संलेखना विधि : सम्यक्त्व-धारण

अरिहन्तो मह देवो, जावज्जीवाए सुसाहुणो गुरुणो।
जिण पण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं॥1॥

चार शरण स्वीकार

1. अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि 2. सिद्धे सरणं पव्वज्जामि 3. साहू सरणं पव्वज्जामि 4. केवली पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

क्षमापना-पाठ

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्व भूएसु, वेरं मज्झं ण केणई।।

आलोचना-पाठ

एवं मए आलोइय, णिंदिय गरहिय दुगंछिय सम्मं।
तिविहेणं पडिक्कंतो, वंदामि जिण चउवीसं।।

इसके बाद पूर्व दिशा अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके श्री सीमन्धर स्वामी को और धर्मगुरु धर्माचार्य जी म.सा. को हाथ जोड़ वंदन-नमस्कार कर यह पाठ बोल संथारा ग्रहण करें।

आहार शरीर उपधि पच्चक्खूं पाप अट्ठार।
मरण होवे तो वोसिरे-3 जीऊं तो आगार।।

अथवा- **भक्खंति उज्झंति मारंति वा, को वि उवस्सग्गेणं मम।**
आउ अंतो भवेज्ज तहा सरीर संबंध, मोह ममत्तं।
अट्ठारस्स पाव-ट्ठाणाणि, चउव्विहं पि आहारं वोसिरामि।
सुख समाहिएणं णिद्दा वइक्कंता तओ पारइस्सामि।।

इस प्रकार प्रत्याख्यान करके दो 'णमोत्थुणं' देकर, नमस्कार मंत्र का स्मरण करते हुए सोवें। जागने पर पहले पूर्वोक्त विधि से 'चार लोगस्स' का कायोत्सर्ग करे फिर 'नवकार मंत्र', 'ध्यान विशुद्धि का पाठ', ध्यान में आर्त्तध्यान, रौद्र ध्यान ध्याया हो, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान न ध्याया

हो, मन-वचन-काया के योग चलित हुए हों तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं। फिर–

प्रत्याख्यान पारने का पाठ

सागारिय अणसणस्स पच्चक्खाणं सम्मं काएणं, ण फासियं, ण पालिअं, ण सोहियं, ण तिरियं, ण किट्टियं, ण आराहियं आणाए अणुपालियं ण भवइ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।।

यह विधि सागारी संथारे को धारने व पारने की है।

जल, अग्नि, शस्त्र, सर्पादि का अथवा देव संबंधी उपसर्ग आ जाए या हार्ट अटैक जैसी व्याधि का सहसा आक्रमण हो, जीवित रहने की आशा न दिखे तो वैसे समय में चारों प्रकार के आहार, शरीर, कुटुम्ब एवं वैभव की मोह-ममता को वोसिराता हूं। अट्ठारह ही पाप-स्थानों का त्याग करता हूं। इससे यदि मुक्त हो जाऊं तो पूर्व ग्रहण किए व्रत-नियम त्याग-प्रत्याख्यान के अतिरिक्त मेरे सब आगार हैं।

संथारा धारण करने वाले को बड़ी साधु वन्दना, तीन मनोरथ और चार शरणादि सुनाते रहना, बारह भावना, मेरी भावना, आत्म-शुद्धि आलोचना तथा संसार की असारता जाने एवं प्रभु-भक्ति में स्थिरता बढ़ाने वाले भजन स्तवनादि सुनाना चाहिए।

सारं दंसणं णाणं, सारं तव णियम संजम सीलं।
सारं जिणवरं धम्मं, सारं संलेहणा पण्डिय मरणं।।

अणगार-संलेखना

(साधु-साध्वी जी का संथारा)

देव, मनुष्य या तिर्यंच संबंधी प्राणान्तकारी उपसर्ग आने, दुर्भिक्ष पड़ने, शुद्ध खाद्यान्न आदि के न मिलने से, असाध्य रोग का सहसा आक्रमण होने या निमित्त ज्ञान से अल्पायु जानकर धर्म रक्षा हेतु अपने शरीर का परित्याग करने, वासना-कामना, तृष्णा और कषाय की ज्वाला को शांत करने/बुझाने का प्रयास करना संलेखना है।

संलेखना लेने वाले आत्मार्थी भव्य साधकों को जीवन में ग्रहण किए गये सम्यक्त्व, त्याग-प्रत्याख्यान व्रत-नियम आदि में अस्थिरता, प्रमाद, विवशता और बौद्धिक-विभ्रमता से जो कोई दोष सेवन किए हों, उन दोषों को सूक्ष्मतापूर्वक देखकर तथा स्मरण करके दूर करने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि दोष रूप शल्य भव-भवान्तर में तो दु:खदायी बनते ही हैं, वर्तमान जीवन को भी सुधारने में बाधक होते हैं। अत: समाधि भाव की कामना रखने वाले भव्यों को सर्वप्रथम उन दोष रूप शल्यों को निकाल अपने अन्त:करण को पवित्र बनाना चाहिए।

भव-भवान्तर को सुधारने हेतु दोषों की विशुद्धि चाहने वाला भव्य साधक यह जाने एवं देखे कि कौनसा दोष स्वार्थ-मोह-ममता-माया के कारण अपने लिए लगा और कौनसा दोष दूसरों के कारण जीवन में लगा। फिर उन दोषों की आलोचना संघ नायक, शासनपति, धीर गंभीर आचार्य भगवन् के पास करें। उनका संयोग न हो तो धीर गंभीर उपाध्याय या साधु अथवा साध्वी जी के पास आलोचना करें। इनका भी अवसर न हो तो गुणधारी धीर गंभीर योग्य श्रावक-श्राविका के पास करें। इतना साहस आलोचना का न बने तो शांत एकान्त स्थान में जाकर पूर्व या उत्तर दिशा सम्मुख खड़ा हो अपने धर्मगुरु धर्माचार्य जी को वंदन-नमस्कार एवं श्री

सीमंधर स्वामी जी को वन्दन-नमस्कार कर, हाथ जोड़ अपने दोषों को प्रकट करें और उनकी साक्षी से पश्चात्ताप पूर्वक यथायोग्य प्रायश्चित ले स्वात्मा की शुद्धि करें। यदि प्रायश्चित्त न्यून हो तो मिच्छामि दुक्कडं और अधिक हो तो निर्जरा हेतु समझें।

संलेखना : समाधि-मरण विधि

पाप-दोषों की आलोचना कर, प्रयाश्चित्त ले, शुद्ध अन्तःकरण बना, निशल्य होकर **'अह भंते अपच्छिम मारणान्तिय'** पौषधशालादि संथारा लेने योग्य स्थान पर आवे, चित्त समाधि योग्य स्थान-शिलापट्ट आदि को यतना पूर्वक पूंजे। कचरे को उठा निर्जीव स्थान पर परठे, फिर लघुनीत आदि परठने योग्य जन्तुओं से रहित निरवद्य स्थान को देखे, देखकर अपने स्थान पर आवे और पूंजने-देखने हेतु आने-जाने में जो दोष लगा है उसका प्रतिक्रमण करे, तिक्खुत्तो के पाठ से गुरु वन्दन कर **'णमोकार मंत्र', 'इच्छाकारेण', 'तस्स उत्तरी'** को बोलकर, कायोत्सर्ग **'इच्छाकारेणं'** का करे। फिर **'णमो अरिहंताणं'**, बोलकर कायोत्सर्ग पूर्ण होने पर पारे, फिर **'कायोत्सर्ग विशुद्धि'** का पाठ बोलकर **'लोगस्स'** बोले। फिर इस प्रकार कहे कि पृथ्वी कायादि किसी भी काया की विराधना रूप दोष लगा हो तो **'मिच्छामि दुक्कडं'**।

फिर धान्य कणों से रहित पराल-घास-कतरन या शिला-पट्टादि पर साढ़े तीन हाथ प्रमाण लम्बा और सवा हाथ चौड़ा आसन बिछा, उसे सफेद वस्त्र से ढंक दे। पूर्व या उत्तर दिशा में मुख रखते हुए पर्यंकादि आसन से उस पर बैठे, शक्ति न हो तो सोये-सोये ही दोनों हाथ जोड़कर जोड़े हुए हाथों को दाहिनी ओर से बायीं ओर उतारता हुआ तीन बार घुमावे। फिर उन जुड़े हुए हाथों को मस्तक पर स्थापित कर **'णमोत्थुणं**

अरिहंताणं जाव संपत्ताणं' कह कर सिद्ध भगवान को, दूसरा **'णमोत्थुणं अरिहंताणं जाव संपाविउ कामाणं'** बोले।

इस प्रकार वन्दन-नमस्कार कर पूर्व में धारण किये हुए सम्यक्त्व और व्रतों में आज इस समय तक जानते, अजानते, विवशता से स्ववश-परवश जो कोई दोष लगा हो पुनः उनकी विचारणा करके उनसे निवृत्त होवे। उनकी आत्मसाक्षी से निंदा और गुरुसाक्षी से गर्हा करे।

इस प्रकार शल्यों को सर्वथा त्यागकर-भविष्य के लिये प्रत्याख्यान करे कि **'सव्वं पाणइवायं जाव मिच्छा दंसण सल्लं, ...** मैं सर्वथा प्रकार से प्राणातिपात-मृषावाद आदि अट्ठारह ही पाप-स्थानों का तीन करण और तीन योग से त्याग करता हूं। उसके बाद अनुकूलतानुसार पहले तीन प्रकार के आहार का त्याग करे, **'पाणं'** को छोड़े या चारों ही प्रकार के आहार का त्याग करे तो तिविहंपि चउविहंपि आहारं पच्चक्खामि फिर **'जं पि य इमं शरीरं इट्ठं ... अणवकंखमाणे विहरामि'** इत्यादि पाठ बोलते हुए शारीरिक ममत्व का भी सर्वथा त्याग कर अपने आत्मिक स्वरूप एवं गुणों में स्थित बने।

ooo

बड़ी संलेखना-पाठ

अह भंते! अपच्छिम मारणान्तिय संलेहणा झूसणा आराहणा पोषह सालं पमज्जे, पमज्जिय, उच्चार पासवण भूमिं पडिलेहे, पडिलेहिय, गमणा-गमणे पडिक्कमे, पडिक्कमिय, दब्भाइयं संथारं संथरे, संथारिय, दब्भाइय संथारं दुरूहे, दुरूहिय, पुरत्थिए उत्तरे वा दिसी भाए पलियंके आसणे अच्छेज्ज, अच्छेज्जियं करयल संपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु 'णमोत्थुणं अरिहंताणं भगवन्ताणं

जाव संपत्ताणं' ऐसे अनन्त सिद्ध भगवान को नमस्कार करके **'णमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपाविउ कामाणं'** जयवंते वर्तमान काले महाविदेह क्षेत्र में विचरते हुए तीर्थंकर भगवान को नमस्कार करके, अपने धर्मगुरु धर्माचार्य जी महाराज को नमस्कार करता हूं। साधु प्रमुख चारों तीर्थ को खमाकर, सर्व जीवराशि को खमाकर, पहले जो व्रत आदरे हैं, उनमें जो अतिचार-दोष लगे हों, वे सर्व आलोच के, पडिक्कम के, निन्द के, निशल्य होकर के, **'सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि, सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि, सव्वं अदिण्णादाणं पच्चक्खामि, सव्वं मेहुणं पच्चक्खामि, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि, सव्वं कोहं, माणं, लोहं, राग-दोसं, कलहं, अब्भक्खाणं, पेसुण्णं, पर परिवायं, रइमरइं, माया-मोसं, मिच्छादंसण सल्लं, सव्वं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं ण करेमि, ण कारवेमि, करंतंपि अण्णं ण समणुजाणामि मणसा वयसा कायसा॥'**

ऐसे अट्ठारह पाप स्थान पच्चक्ख कर **'सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहंपि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए'** ऐसे चारों आहार पच्चक्ख कर **'जं पि य इमं शरीरं इट्ठं, कंतं, पियं, मणुण्णं, मणामं, धिज्जं, विसासियं, संमयं, अणुमयं, बहुमयं भण्डकरण्डग समाणं, रयण-करण्डग-भूयं मा णं सीयं, मा णं उण्हं, मा णं खुहा, मा णं पिवासा, मा णं वाला, मा णं चोरा, मा णं दंसमसगा, मा णं वाइयं, पित्तियं, कप्फियं, संभीमं, सण्णिवाइयं, विविहा रोगायंका, परीसहा, उवसग्गा, फासा फुसन्तु, एवंपि य णं चरमेहिं उस्सास-णिस्सासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु'** ऐसे शरीर को वोसिरा कर **'कालं अणवकंखमाणे विहरामि'** ऐसी मेरी श्रद्धा परूपणा तो है फरसना करूं तब शुद्ध होऊं। ऐसे **'अपच्छिम मारणंतिय संलेहणा झूसणा आराहणाए पंच अइयारा जाणियव्वा ण समायरियव्वा तंजहा ते आलोउं-इहलोगा संसप्पओगे,**

परलोगासंसप्पओगे, जीविया संसप्पओगे, मरणा संसप्पओगे, कामभोगा संसप्पओगे जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

संथारे का विधि-विधान

सर्वप्रथम बन सके तो तीन बार वंदना करे। तदनन्तर नवकार का पाठ पढ़े। फिर इच्छाकारेणं, तस्स उत्तरीकरणेणं बोले। उसके बाद दो लोगस्स का ध्यान करे। फिर ध्यान पारने का पाठ पढ़े। तदनन्तर लोगस्स बोले, उसके बाद दो णमोत्थुणं बोलकर बड़ी संलेखना का पाठ पढ़े। इस प्रकार संथारे की संक्षिप्त विधि होती है। तदनन्तर बन सके तो दशवैकालिक के चार अध्ययन सुनावे।

इसके बाद वृहदालोयणा आदि धार्मिक गीत-स्वाध्याय आदि सुनावे।

जिसके संथारा है उसके मुंह पर मुखवस्त्रिका हो, पंखा, कूलर आदि का उपयोग न हो। दो टाइम प्रतिलेखन हो। संथारे वाले की सेवा करने वाला संवर करके सेवा करे। साधु की तरह सारी क्रियाएं करवाई जायें।

ooo

वाणी

सोच समझकर बोलो वाणी, कहीं न धोखा खाओ।
जैसा शब्द कहोगे मुख से, वैसा ही फल पाओ।।
गोली से बोली बुरी, तीखा आरा जान।
अन्दर जख्म बढ़ता रहे, कर देती घमासान।।

ooo

तृतीय विभाग : प्राकृत

स्तुति – स्तवन –
स्तोत्र आदि

श्री मंगल सूत्र

चत्तारि मंगलं

अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा

अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि

अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि,
साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।।

—श्री आवश्यक सूत्र

○○○

श्री नमस्कार सूत्र

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं,
नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्व साहूणं।
एसो पंच नमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

—भगवती सूत्र

○○○

श्री चतुर्विंशति-स्तव-सूत्र

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थयरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली॥1॥

उसभ-मजियं च वंदे, सम्भवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥2॥

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल-सिज्जंस-वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥3॥

कुंथुं अरं च मल्लिं वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥4॥

एवंमए अभित्थुआ, विहूय-रयमला पहीण जरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥5॥

कित्तिय-वंदिय-महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरोग्ग-बोहि लाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु॥6॥

चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागर-वर-गम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसन्तु॥7॥

—आवश्यक सूत्र

○○○

सिद्ध-अर्हन्त-वन्दना

चत्तारि अट्ठ दस दो अ, वंदिया जिणवरा चउवीसं।
परमट्ठ निट्ठियट्ठा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥1॥

जे य अइया सिद्धा, जे य भविस्संतिऽणागए काले।
संपइ अ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि॥2॥

सिद्धाणं बुद्धाणं पारगयाणं परंपर गयाणं।
लोगग्गमुवगयाणं नमो सया सव्व सिद्धाणं॥3॥

जो देवाणं वि देवो, जं देवा पंजली नमंसंति।
तं देवदेव - महिअं सिरसा वंदे महावीरं॥4॥

इक्को वि नमुक्कारो जिणवर, वसहस्स वद्धमाणस्स।
संसार सायराओ तारेइ, नरं वा नारीं वा॥5॥

पुक्खरवर दीवड्ढे धायइ खंडे अ जंबूदीवे अ।
भरहेरवय विदेहे धम्माइयरे नमंसामि॥6॥

उज्जित सेल सिहरे, दिक्खा नाणं निसीहिया जस्स।
तं धम्म चक्कवट्टिं अरिट्ठनेमिं नमंसामि॥7॥

जय वीयराय! जगगुरु! होउ ममं तुह पभावओ भयवं।
भव निव्वेओ मग्गाणुसारिआ इट्ठ फल सिद्धी॥8॥

लोग विरुद्धच्चाओ गुरुजण पूआ परत्थकरणं।
सुह गुरुजोगो तव्वयण सेवणा आभवमखंडा॥9॥

तम तिमिर विद्धंसणस्स सुरगण नरिंद महिअस्स।
सीमाहरस्स वंदे, पप्फोडिअ-मोहजालस्स॥10॥

सिद्धाणं नमो किच्चा, संजयाणं च भावओ।
अत्थ धम्म गइं तच्चं, अणुसट्ठिं सुणेह मे॥11॥

ooo

महामंगल

अरिहंता मज्झ मंगलं, अरिहंता मज्झ देवया।
अरिहंते कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।1।।

सिद्धा य मज्झ मंगलं, सिद्धा य मज्झ देवया।
सिद्धे य कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।2।।

आयरिया मज्झ मंगलं, आयरिया मज्झ देवया।
आयरिए कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।3।।

उवज्झाया मज्झ मंगलं, उवज्झाया मज्झ देवया।
उवज्झाए कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।4।।

साहु य मज्झ मंगलं, साहु य मज्झ देवया।
साहु य कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।5।।

एए पंच मज्झ मंगलं, एए पंच मज्झ देवया।
एए पंच कित्तइत्ताणं, वोसिरामि त्ति पावगं।।6।।

○○○

उपसर्गहर स्तोत्र

(आचार्य भद्र स्वामी)

उवसग्ग हरं पासं पासं, वंदामि कम्म-घण मुक्कं।
विसहर विस निन्नासं, मंगल-कल्लाण-आवासं।।1।।

जिनशासन पर होने वाले उपसर्गों को दूर करने वाला पार्श्व नामक देव जिनका चरण-सेवक है, जो कर्म रूपी सघन बादलों से मुक्त हैं, जिनके नाम-स्मरण मात्र से सर्प का भयंकर विष नष्ट हो जाता है और

जो मंगल तथा कल्याण के निवास स्थान हैं, उन भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के चरणों में मैं वंदना करता हूं।

विसहर फुलिंग मंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ।
तस्स गह - रोग मारी, दुट्ठ-जरा जंति उवसामं॥2॥

सर्प के विष को उतारने के लिए भगवान् पार्श्वनाथ का पवित्र नाम ही उत्कृष्ट मंत्र है, अतः जो मनुष्य इस नाममंत्र को सदा अपने कंठ में धारण करता है, उसके दुष्ट ग्रह, भीषण रोग, काल-ज्वर आदि सबके सब उपद्रव पूर्ण रूप से शांत हो जाते हैं।

चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ।
नर-तिरिएसु वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोहग्गं॥3॥

हे प्रभो! आपके नाम-मन्त्र का जप तो बहुत बड़ी चीज है, यहां तो केवल आपको भक्तिपूर्वक किया हुआ नमस्कार ही अमित फल देने वाला है। आपका जो भक्त है, वह कभी भी मनुष्य, तिर्यंच आदि गतियों में दुःख और दुर्भाग्य नहीं पा सकता। वह जहां भी रहेगा, आनन्द में रहेगा।

तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणि-कप्प पायवब्भहिए।
पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं॥4॥

हे प्रभो! चिन्तामणि रत्न और कल्पवृक्ष से भी अधिक महिमाशाली सम्यक्त्व रत्न प्राप्त हो जाने पर साधकों को किसी भी प्रकार का भय नहीं रहता। वे बड़े आनन्द के साथ बिना किसी विघ्न-बाधा के अजर-अमर मोक्ष धाम को प्राप्त कर लेते हैं।

इअ संथुओ महायस! भत्तिब्भर-निब्भरेण हियएण।
ता देव! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास जिणचंद!॥5॥

हे महायशस्वी! श्री पार्श्वनाथ! जिन चन्द्रदेव! इस प्रकार भक्ति-भावना से भरपूर हृदय से मैंने आपकी यह स्तुति की है। अतएव जब तक मोक्ष प्राप्त न हो तब तक भव-भव में मुझे सम्यक्त्व रत्न प्रदान करना।

○○○

श्री उपसर्गहर-स्तोत्र बड़ा

(आचार्य भद्रबाहु स्वामी)

उवसग्गहरं पासं पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं।
विसहर-विसनिन्नासं, मंगल-कल्लाण आवासं॥1॥

विसहर-फुलिंग-मंतं कंठे धारेइ जो सया मणुओ।
तस्स गह-रोग-मारी, दुट्ठजरा जंति उवसामं॥2॥

चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होई।
नरतिरिएसु, वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोहग्गं॥3॥

तुह सम्मत्ते लद्धे, चिंतामणि-कप्पपायवब्भहिए।
पावंति अविग्घेणं जीवा अयरामरं ठाणं॥4॥

ॐ अमरतरु-कामधेणु, चिन्तामणि-कामकुंभमाईए।
सिरि पासनाह-सेवा-गयाण सव्वे वि दासत्तं॥5॥

ॐ ह्रीं श्रीं ऐं ॐ तुह दंसणेण सामिय,
पणासेइ रोग-सोग-दोहग्गं।
कप्पतरुमिव जायइ, ॐ तुह दंसणेण
समफलहेउ स्वाहा॥6॥

ॐ ह्रीं नमिऊण पणवसहियं मायाबीएण धरणनागिंदं।
सिरिकामरायकलियं, पासजिणंदं नमंसामि॥7॥

ॐ ह्रीं श्रीं पास विसहर-विज्जामंतेण झाणं झाएज्जा।
धरण पउमादेवी, ॐ ह्रीं क्ष्मल्व्र्यूं स्वाहा॥8॥

ॐ थुणेमि पासं, ॐ ह्रीं पणमामि परमभत्तीए।
अट्ठक्खर-धरणिंदो, पउमावइ पयडिया कित्ती॥9॥

ॐ नट्ठट्ठ-मयट्ठाणे, पणट्ठकम्मट्ठ-नट्ठसंसारे।
परमट्ठ-निट्ठियट्ठे, अट्ठगुणाधीसरं वंदे॥10॥

इय संथुओ महायस! भत्तिब्भर-निब्भरेण हियएण।
ता देव! दिज्ज बोहिं, भवे भवे पास जिणचंद!॥11॥

○○○

श्री शांतिकर स्तोत्र

(आचार्य श्री मुनि सुन्दर)

संतिकरं संतिजिणं, जग-सरणं जयसिरीइ दायारं।
समरामि भत्तपालग-निव्वाणी गरुड कय-सेवं॥1॥

ॐ स नमो विप्पोसहि - पत्ताणं संति सामि-पायाणं।
झ्रौं स्वाहा - मंतेणं, सव्वासिव-दुरिय-हरणाणं॥2॥

ॐ संति - नमुक्कारो, खेलोसहिमाइ - लद्धिपत्ताणं।
सौं ह्रीं नमो य सव्वोसहिपत्ताणं च देइ सिरिं॥3॥

वाणी तिहुअण सामिणि, सिरि देवी जक्खराय गणिपिडगा।
गह-दिसिपाल सुरिंदा, सया वि रक्खंतु जिणभत्ते॥4॥

रक्खंतु मम रोहिणि, पन्नत्ती वज्जसिंखला य सया।
वज्जंकुसि चक्केसरि, नरदत्ता कालि महाकाली॥5॥

गोरी तह गंधारी, महजाला माणवी य वइरुट्टा।
अच्छुत्ता माणसिया, महामाणसियाओ देवीओ॥6॥

जक्खा गोमुह महजक्ख, तिमुह जक्खेस तुंबरू कुसुमो।
मायंग विजयऽजिअ, बंभो मणुओ सुरकुमारो॥7॥

छम्मुह पयाल किन्नर, गरुडो गन्धव्व तह य जक्खिन्दो।
कूबर वरुणो भिउडी, गोमेहो पास मायंगो॥8॥

देवीओ चक्केसरि, अजिया दुरियारि कालि महाकाली।
अच्चुअ संता जाला, सुतारयाऽसोय सिरिवच्छा॥9॥

चण्डा विजयंकुसि, पन्नइत्ति निव्वाणि अच्चुआ धरणी।
वइरुट्ट दत्त गंधारि, अंब पउमावई सिद्धा॥10॥

इय तित्थ-रक्खण-रया, अन्ने वि सुरासुरी य चउहा वि।
वंतर-जोइणि-पमुहा, कुणंतु रक्खं सया अम्हं॥11॥

एवं सुदिट्ठि-सुरगण, सहिओ संघस्स संति जिणचन्दो।
मज्झ वि करेउ रक्खं, मुणि सुन्दरसूरि-थुअ महिमा॥12॥

इअ संतिनाह सम्मद्-दिट्ठिय, रक्खं सरइ तिकालं जो।
सव्वोवद्दव-रहिओ, स लहइ सुह-संपयं परमं॥13॥

तवगच्छ गयण दिणयर, जुगवर सिरि सोमसुन्दरगुरुणं।
सुपसायलद्ध गणहर, विज्जासिद्धी भणइ सीसो॥14॥

○○○

श्री तिजयपहुत्त स्तोत्र

(आचार्य श्री मानदेव सूरिकृत)

तिजय-पहुत्त पयासय-अट्ठ-महापाडिहेरजुत्ताणं।
समयक्खित्तठियाणं, सरेमि चक्कं जिणंदाणं।।1।।

पणवीसा य असीआ, पनरस पन्नास जिणवर-समूहो।
नासेउ सयल-दुरियं, भवियाणं भत्ति-जुत्ताणं।।2।।

बीसा पणयाला वि य, तीसा पन्नत्तरी जिणवरिंदा।
गह-भूअ-रक्ख-साइणि-घोरुवसग्गं पणासंतु।।3।।

सत्तरि पणतीसा वि य, सट्ठी पंचेव जिणगणो एसो।
वाही-जलजलण-हरि-करि-चोरारि-महाभयं हरउ।।4।।

पणपन्ना य दसेव य, पन्नट्ठी तह य चेव चालीसा।
रक्खंतु मे सरीरं, देवासुर-पणमिया सिद्धा।।5।।

ॐ हर हुं हः स र सुं सः, ह र हुं हः तह य चेव सर सुंसः।
आलिहिय-नाम-गब्भं, चक्कं किर सव्वओभद्दं।।6।।

ॐ रोहिणी पन्नत्ति, वज्जसिंखला तह य वज्जअंकुसिया।
चक्केसरि नरदत्ता, कालि महाकालि तह य गोरी।।7।।

गंधारी महजाला, माणवी वइरुट्ट तह य अच्छुत्ता।
माणसी महामाणसिओ विज्जादेवीओ रक्खंतु।।8।।

पंचदसकम्मभूमिसु, उप्पन्नं सत्तरि जिणाण सयं।
विविह-रयणाइवन्नोव - सोहियं हरउ दुरियाइं।।9।।

चउतीस अइसयजुआ, अट्ठ-महापाडिहेर-कयसोहा।
तित्थयरा गयमोहा, झाए अव्वा पयत्तेणं।।10।।

ॐ वर कणग संख विद्दुम, मरगय घण सन्निहं विगयमोहं।
सत्तरिसयं जिणाणं सव्वामरपूइयं वंदे स्वाहा॥11॥

ॐ भवणवइ-वाणवंतर-जोइसवासी विमाणवासी अ।
जे के वि दुट्ठ-देवा, ते सव्वे उवसमंतु मम स्वाहा॥12॥

चन्दण-कप्पूरेणं, फलए लिहिऊण खालियं पीअं।
एगंतराइ - गह- भूअ - साइणिमुग्गं पणासेइ॥13॥

इय सत्तरिसयजंतं, सम्मं संतं दुवारि पडिलिहियं।
दुरिआरि-विजयवंतं, निब्भन्तं निच्चमच्चेह॥14॥

○○○

श्री सर्वतोभद्र यंत्र

25 ह	80 र	क्षि	15 हुं	50 हः
20 स	45 र	प	30 सुं	75 सः
क्षि	प	ॐ	स्वा	हा
70 ह	35 र	स्वा	60 हुं	5 हः
55 स	10 र	हा	65 सुं	40 सः

○○○

श्री नमिऊण स्तोत्र

(आचार्य श्री मानतुंग कृत)

नमिऊण पणय सुरगण, चूडामणि किरण-रंजिअं मुणिणो।
चलण-जुयलं महाभय, पणासणं संथवं वुच्छं॥1॥

जिनके चरण युगल नमे हुए देव गणों के मस्तक की मणियों की किरणों से शोभायमान हैं और जो महाभयों को नष्ट करने वाले हैं, उन महामुनि तीर्थेश प्रभु पार्श्वनाथ को नमस्कार करके उनकी मैं स्तुति करूंगा।

सडिय कर चरण नह मुह, निव्वुड-नासा विवन्न-लावन्ना।
कुट्ठ महा-रोगानल फुलिंग निद्दड्ढ सव्वंगा॥2॥
ते तुह चलणाराहण सलिलंजलि-सेय वुड्ढि उच्छाहा।
वणदव-दड्ढा गिरि, पायव्व पत्ता पुणो लच्छिं॥3॥

जिनके हाथ, पांव, नख और मुख सड़े हुए हैं, बैठी हुई नासिका के कारण जिनका सौंदर्य नष्ट हो गया है तथा जिनके शरीर के सब अंग-प्रत्यंग कुष्ठ महारोग की ज्वालाओं से जल रहे हैं वे आपके चरणों की सुसेवा, शुश्रूषा और जलांजलि के अभिसिंचन से जैसे दावानल से जले पर्वतीय वृक्ष बरसात होने से हरे-भरे होकर शोभा पाते हैं वैसे ही निरामय हो जाने से उत्साह एवं उमंग लिए नवजीवन पाते हैं, शोभित होते हैं।

दुव्वाय-खुभिय जलनिहि, उब्भड-कल्लोल-भीसणारावे।
संभंत भय विसंठुल-निज्जामय मुक्क वावारे॥4॥
अविदलिय-जाणवत्ता, खणेण पावंति इच्छियं कूलं।
पास जिण चलण जुयलं, निच्चं चिअ जे नमंति नरा॥5॥

जिस समय प्रबल तूफान के कारण सागर क्षुब्ध हो उठता है, जल की प्रचण्ड तरंगों से भीषण आवाज होने से दिग्विमूढ भयाकुल बना हुआ कर्णधार भी अपना काम छोड़ देता है। उस स्थिति में भी भगवान् पार्श्वनाथ के चरणों में नित्य नमन करने वाले मनुष्य शीघ्र ही सुरक्षित किनारे को प्राप्त करते हैं।

खर-पवणद्धुय वण दव, जालावलि-मिलिय सयल दुम गहणे।
डज्झन्त-मुद्धमय बहु भीसण-रव भीसणंमि वणे॥6॥

जग गुरुणो कम जुयलं, निव्वाविय सयल तिहुअणाभोअं।
जे समरंति मणुआ, न कुणइ जलणो भयं तेसिं॥7॥

जब दावाग्नि प्रचण्ड हवा के कारण फैलती हुई सघन वृक्षों के निविड़ तक पहुंच जाती है, उस समय भद्रिक हिरणी आदि पशु-पक्षियों के करुण क्रन्दन से सारा जंगल भयावह हो उठता है। वह भयानक दावानल न उन भक्त मनुष्यों को भयभीत कर सकता है, न उन्हें क्षति पहुंचा सकता है जो सर्व लोक के द्रष्टा जगद्गुरु त्रिलोकी नाथ श्री पार्श्व प्रभु के चरण-युगल में स्थिर होकर उन्हें स्मरण करते हैं।

विलसंत भोग भीसण फुरिआरुण नयण तरल-जीहालं।
उग्ग भुयंगं नव-जलय सच्छहं भीसणायारं॥8॥

मन्नंति कीड सरिसं, दूर परिच्छूढ विसम विसवेगा।
तुह नामक्खर फुड सिद्ध मंत गुरुआ नरा लोए॥9॥

हे भगवन्! आपके नामाक्षर रूपी मंत्र का अविराम उच्चारण करने वाला मनुष्य इस संसार में चमकीले शरीर, अत्यधिक लाल नेत्र, लपलपाती जीभ, घने काले, विकाराल आकार वाले भयंकर विषधर को क्षुद्र-कीट सम मानकर दूर फैंक देता है।

अडवीसु भिल्ल तक्कर, पुलिंद सद्दूल सद्द भीमासु
भय विहुर वुन्न कायर, उल्लूरिय पहिय सत्थासु॥10॥

अविलुत्त विहव सारा तुह नाह! पणाम मत्त वावारा।
ववगय विग्घा सिग्घं पत्ता हिय इच्छियं ठाणं॥11॥

जो वन भील, तस्कर, सिंह और बाघ के शब्दों से भयावह हो उठता है, जहां मुसाफिर सार्थवाह घबराए, परेशान, कायर, साहस-शक्ति-हीन बना लूट लिए जाते हैं, ऐसे भयावह जंगल में जो आपको नमस्कार करने में संलग्न रहते हैं वे निर्विघ्नता पूर्वक अपने जान-माल का रक्षण करते हुए सुरक्षित स्थान को प्राप्ति कर लेते हैं।

पज्जलियानल नयणं, दूर वियारिय मुहं महाकायं।
नह-कुलिसघाय विअलिय गइंद कुंभत्थला भोअं॥12॥

पणय ससंभम पत्थिव, नह मणि माणिक्क पडिअ पडिमस्स।
तुह वयण पहरण धरा, सीहं कुद्धं पि ण गणंति॥13॥

जिसकी आंखें रक्ताभ हैं, जिसने दूर से ही मुंह फाड़ रखा है, जो नाखून रूप वज्र के प्रहार से महाकाय गजेन्द्र के कुंभस्थल को चीरने वाले कोपायमान सिंह को आपके श्री चरणों में समादर पूर्वक झुका और मणि-माणिक के समान आपके जीवनाकाश से बरसते हुए वचनों के अस्त्र को धारण करने वाला नरेन्द्र कुछ नहीं गिनता है।

ससि धवल दंतमुसलं, दीह करुल्लाल वुड्ढि उच्छाहं।
महुपिंग नयण जुयलं, ससलिल नव जलहरारावं॥14॥

भीमं महागइंदं, अच्चासन्नंपि ते न वि गणंति।
जे तुम्ह चलण जुयलं, मुणिवइ! तुंगं समल्लीणा॥15॥

हे मुनीश्वर! पार्श्वनाथ! जो आपके उन्नत पाद पद्‌मों में सम्यक्तया लीन हैं, वे चन्द्र जैसे श्वेत मुसलवत् दांत वाले, जिसकी लम्बी सूंड संचार से उत्साह संवर्धित है, मधु की तरह जिसकी आंखें पीली हैं, जल सहित मेघ की तरह जिसकी गड़गड़ाहट है ऐसे भयोत्पादक विशालकाय गजेन्द्र के संनिकट आने पर भी उसे कुछ नहीं समझते हैं।

समरम्मि तिक्ख खग्गाभिघाय पव्विद्ध उद्धुयकबंधे।
कुंतविणि भिन्न-करि-कलह मुक्क सिक्कार पउरम्मि।।16।।

निज्जिय-दप्पुद्धु-ररिउ नरिंद निवहा भडा जसं धवलं।
पावंति पाव पसमिण! पासजिण! तुहप्पभावेण।।17।।

जहां तीक्ष्ण तलवारों के वार के प्रहार से सिर से अलग हो धड़ नाचने लगते हैं, भालों से विदीर्ण हाथियों की प्रचुर चिंग्घाड़ों से व्याप्त खूंखार युद्ध में भी शूरवीर सुभट अभिमान से उन्मत्त बने गर्वीले शत्रुओं को परास्त करके हे पाप नाशक पार्श्व जिनेश! आपके प्रभाव से नरेन्द्र के समान यश: कीर्ति को प्राप्त करते हैं।

रोग जल जलण विसहर, चोरारि मइंद गय रण भयाइं।
पास जिण नाम संकित्तणेण पसमन्ति सव्वाइं।।18।।

एवं महा-भयहरं, पास जिणंदस्स संथवमुआरं।
भविय जणाणंदयरं कल्लाण परंपर निहाणं।।19।।

भगवान् पार्श्वनाथ! आपके नाम संकीर्तन, गुणानुकीर्तन से व्याधि, जल, अग्नि, विषधर, चोर, शत्रु, सिंह, हस्ति और युद्ध आदि के सब भय नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार भगवान् पार्श्वनाथ का स्तोत्र महाभयों का विनाशक, भक्ति प्रधान भव्यजनों के लिए आनन्द करने वाला तथा कल्याणकारी परम्परा के निर्वाह का अक्षय कोष है।

रायभय-जक्ख-रक्खस, कुसुमिण-दुस्सउण-रिक्ख पीडासु।
संझासु दोसु पंथे, उवसग्गे तह य रयणीसु।।20।।

जो पढइ जो अ निसुणइ, ताणं कइणो य माणतुंगस्स।
पासो पावं पसमेउ, सयल, भुवण-च्चिअ-च्चलणो।।21।।

नरेन्द्र, यक्ष, राक्षस, बुरे स्वप्न, अपशकुन, ग्रह-नक्षत्रों की पीडाओं के समय दोनों संध्या काल, मार्ग चलते, उपसर्ग आने पर और रात्रि के समय में जो मनुष्य इस स्तोत्र को पढ़ता है और जो सुनता है, उनके तथा स्तोत्र कर्त्ता कवि मानतुंग के पाप कर्मों/पाप वासना के कुत्सित संस्कारों को वे भगवान् श्री पार्श्वनाथ प्रशान्त करें, जिनके चरण-कमल सम्पूर्ण जगत से वंदित-पूजित हैं।

उवसग्गं ते कमठा-सुरम्मि झाणाओ जो ण संचलिओ।
सुर-नर-किन्नर जुवइहिं, संथुओ जयउ पासजिणो।।22।।

कमठ नामक दैत्य के उपसर्ग देने पर भी ध्यान से चलायमान नहीं हुए, देव, मनुष्य और किन्नर युवतियों द्वारा जिनकी स्तुति की गयी है, वे पार्श्व जिनेन्द्र जयवन्त हों।

एयस्स मज्झयारे, अट्ठारस्स अक्खरेहिं जो मंतो।
जो जाणइ सो झायइ, परम पयत्थं फुडं पासं।।23।।

इस स्तोत्र के मध्य में **"नमिउण पास विसहर वसह जिण फुलिंग"** आए हुए इन अठारह अक्षरों का जो (चिन्तामणि नामक गुप्त) मंत्र है, उसे गुरुगम से विधि सहित जो जानता है वह परम पद को प्राप्त हुए पार्श्व प्रभु को भव्य रूप से ध्याता है।

पासह समरणं जो कुणइ, संतुट्ठ हियएण।
अट्ठुत्तर-सय-वाहि भयं, नासइ तस्स दूरेण।।24।।

जो मनुष्य संतुष्ट हृदय से पार्श्वनाथ प्रभु का स्मरण करता है, उसके एक सौ आठ व्याधियां एवं भय दूर से ही नष्ट हो जाते हैं।

०००

श्री नवपद स्तुति

उप्पण सन्नाण महोदयाणं, सप्पाडिहेरासण-संठियाणं।
सद्देसणाणंदिय-सज्जणाणं, नमो नमो होउ सया जिणाणं॥1॥

सिद्धाण माणंद रमालयाणं, नमो नमोऽनंत चउक्कयाणं।
सूरीण दूरी कय कुग्गहाणं, नमो नमो सूर समप्पहाणं॥2॥

सुत्तत्थ-वित्थारण-तप्पराणं, नमो नमो वायग-कुंजराणं।
साहूण संसाहिय-संजमाणं, नमो नमो सुद्ध दया दमाणं॥3॥

जिणुत्ततत्ते रुइ लक्खणस्स, नमो-नमो निम्मल दंसणस्स।
अन्नाण-संमोह-तमो हरस्स, नमो-नमो नाण दिवायरस्स॥4॥

आराहियाखंडिय सक्कियस्स, नमो-नमो संजम-वीरियस्स।
कम्मद्‌दुमोम्मूलण कुंजरस्स, नमो-नमो तिव्व तवो भरस्स॥5॥

इय नव पय सिद्धं, लद्धिविज्जा समिद्धं,
पयडिय सर वग्गं, ह्रीं तिरेहा-समग्गं।
दिसवइ-सुरसारं, खोणि-पीढावयारं,
तिजय-विजयचक्कं, सिद्धचक्क नमामि॥6॥

०००

श्री आदिदेव स्तवन

(आचार्य श्री देवेन्द्र)

सिरि रिसह नाह तुह पय नह कंतीओ जयंतु तिजयस्स।
जंतीओ वज्ज पंजर भाव भावारि भीयस्स॥1॥

तुह कम कमलं विमलं दट्ठुं दुराउ देव पइ दिवसं।
धन्ना कलिमल-मुक्का रायमरालुव्व धावंति॥2॥

असरिस भव-दुह-दंदोलि घोलियाण जियाण जय नाह।
तं चिय इक्को सरणं सीयत्ताणं व दिणनाहो॥3॥

तिहुयण पहु! अमयं पिव सम्मं, तुह पवयणे परिणयंमि।
अजरामर भावं खलु लहंति, लहु लहुयं कम्माणो॥4॥

देव! वर नाण-दंसण-दुहावि, तुह दंसणेण देहीणं।
नीरेणं चीवराणं, खणेण खयमेइ मालिन्नं॥5॥

तुह समरणेण सामिय! किलिट्ठ कम्मोवि सिज्झए जीवो।
किं न हु जायइ कणगं, लोहं पि रसस्स फरिसेणं॥6॥

पहु! तुह गुण थुणणेणं, विसुद्ध चित्ताणं भविय सत्ताणं।
घण नीरेण व जंबू फलाइं, विगलंति पावाइं॥7॥

दंसण-पवणे नयणे भालं, नालं हवइ तुह नमणे।
ता पच्चक्खी भावं लहु, मह तिजईस! वियरेसु॥8॥

इय संथुओसि देविंदविन्द वंदिय! जुगाइ जिणचंद!
मह देसु निप्पकंपं, भवे-भवे नियपए भत्तिं॥9॥

○○○

श्री महावीर-स्तोत्र

(आचार्य श्री अभयदेव)

जइज्जा समणो भयवं, महावीरे जिणुत्तमे।
लोगनाहे सयंबुद्धे, लोगंतिय विबोहिए॥1॥

वच्छरं दिण्ण दाणोहे, संपूरिय जणासए।
नाणत्तय समाउत्ते, पुत्ते सिद्धत्थ राइणो॥2॥

चिच्चा रज्ज च रट्ठं च, पुरं अंतेउरं तहा।
निक्खमित्ता अगाराओ, पव्वइए अणगारियं॥3॥

परीसहाण नो भीए, भेरवाण खमाखमे।
पंचहा समिए गुत्ते, बंभयारी अकिंचणे॥4॥

निमम्मे निरहंकारे, अकोहे माण वज्जिए।
अमाए लोभ विम्मुको, पंसते छिन्न बंधणे॥5॥

पुक्खरं व अलेवे य, संखो इव निरंजणे।
जीवे वा अप्पडिग्घाए, गयणं व निरासए॥6॥

वाए वा अपडिबद्धे, कुम्मो वा गुत्तइंदिए।
विप्प मुक्को विहंगुव्व, खग्गि सिंगव्व एगगे॥7॥

भारंडे वाऽपमत्ते य, वसहे वा जाय थामए।
कुंजरो इव सोंडीरे, सीहो वा दुद्धरिस्सए॥8॥

सागरो इव गंभीरे, चन्दो व सोम लेसए।
सूरो वा दित्त तेउल्ले, हेमं वा जाय रूवए॥9॥

सव्वं सहे धरित्ति व्व, सायरिंदु व्व सच्छहे।
सुट्ठु हुय हुआस व्व, जलमाणे य तेयसा॥10॥

वासी-चंदण कप्पे य, समाणे लेट्ठु कंचणे।
समे पूयाव माणेसु समे मुक्खे भवे तहा॥11॥

नाणेणं दंसणेणं य, चरित्तेण मणुत्तरे।
आलएणं विहारेणं, मद्दवेण ऽज्जवेण य॥12॥

लाघवेणं य खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे।
संजमेणं तवेणं य, संवरेण-मणुत्तरे॥13॥

अणेग-गुण गणाइण्णे, धम्म सुक्काण झायए।
घाइ क्खएण संजाए, अणंतवर केवली॥14॥

वीयराए य निग्गंथे, सव्वण्णू सव्व दंसणे।
देविंद-दाणविन्देहिं, निव्वत्तिय-महामहे॥15॥

सव्वभासाणु गाए य, भासाए सव्वसंसए।
जुगवं सव्व जीवाणं, छिंदिउं भिंत गोयरे॥16॥

हिए सुहे य निस्सेस-कारए सव्व पाणिणं।
महव्वयाणि पंचे व, पणवित्ता सभावणे॥17॥

संसार सायरे बुड्ड-जंतु-संताण तारए।
जाणव्व देसियं तित्थं, संपत्ते पंचमिं गईं॥18॥

से सिवे अयले निच्चे, अरुए अयरामरे।
कम्मप्पभवं च विम्मुक्के, जए वीरे जए जिणे॥19॥

से जिणे वद्धमाणे य, महावीरे महायसे।
असंख दुक्ख-खिण्णाणं, अम्हाणं देउ निव्वुइं॥20॥

इय परमपमोआ संथुओ वीरनाहो,
परम पसमदाणा देउ तुल्लत्तणं मे।

असम सुह दुहेसुं सग्ग सिद्धी भवेसुं,
कणय-कय वरेसुं सत्तु मित्तेसु वावि॥21॥

पयडीव सइ पहाणं, सीसेहिं जिणेसराण सुगुरुणं।
वीरजिण थवं एयं, पढउ कयं अभय सूरीहिं॥22॥

ooo

वीरत्थुई

(गणधर श्री सुधर्मा स्वामी कृत)

पुच्छिंसु णं समणा माहणा य, आगारिणो य परतित्थिया य।
से केइ णेगंतहियं धम्ममाहु, अणेलिसं साहु! समिक्खयाए॥1॥

कहं च नाणं कहं दंसणं से, सीलं कहं नाय-सुतस्स आसी।
जाणासि णं भिक्खू! जहातहेणं, अहासुतं बूहि जहाणिसंतं॥2॥

खेयन्नए से कुसले महेसी, अणंतनाणी य अणंतदंसी।
जसंसिणो चक्खुपहे-ठियस्स, जाणाहि धम्मं च धिइं च पेहि॥3॥

उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु, तसा य जे थावर जे य पाणा।
से णिच्च-णिच्चेहिं समिक्ख पन्ने, दीवे व धम्मं-समियं उदाहु॥4॥

से सव्वदंसी अभिभूयनाणी, निराम-गंधे धिइमं ठियप्पा।
अणुत्तरे सव्वजगंसि विज्जं, गंथा अतीते अभए अणाऊ॥5॥

से भूति-पण्णे अणिकेयचारी, ओहंतरे धीरे अणंत-चक्खू।
अणुत्तरं तप्पइ सूरिए वा, वइरोयणिंदे व तमं पगासे॥6॥

अणुत्तरं धम्ममिणं जिणाणं, नेया मुणी कासव आसुपन्ने।
इंदे व देवाण महाणुभावे, सहस्सणेत्ता दिवि णं विसिट्ठे॥7॥

से पन्नया अक्खय-सागरे वा, महोदही वा वि अणंत-पारे।
अणाइले वा अकसाइ मुक्के, सक्के व देवाहिवाई जुईमं॥8॥

से वीरएणं पडिपुण्ण-वीरिए, सुदंसणे वा नग-सव्व-सेट्ठे।
सुरालए वासि-मुदागरे से, विरायए णेग-गुणोववेए॥9॥

सयं सहस्साण उ जोयणाणं, तिकंडगे पंडग-वेजयंते।
से जोयणे णव-णवई सहस्से, उद्धुस्सिते हेट्ठ सहस्समेगं॥10॥

पुट्ठे नभे चिट्ठइ भूमि-वट्ठिए, जं सूरिया अणुपरिवट्टयन्ति।
से हेमवन्ने बहुनन्दणे य, जंसि रतिं वेदयंति महिंदा॥11॥

से पव्वए सद्द-महप्पगासे, विरायति कंचणमट्ठवण्णे।
अणुत्तरे गिरिसु य पव्व-दुग्गे, गिरीवरे से जलिए व भोमे॥12॥

महीए मज्झम्मि ठिए णगिंदे, पन्नायते सूरिय-सुद्ध-लेसे।
एवं सिरीए उ स भूरि-वण्णे, मणोरमे जोयइ अच्चिमाली॥13॥

सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स, पवुच्चइ महतो पव्वयस्स।
एतोवमे समणे नायपुत्ते, जाई-जसो-दंसण-नाण-सीले॥14॥

गिरिवरे वा निसहाययाणं, रुयये व सेट्ठे वलयाययाणं।
तओवमे से जग-भूइ-पन्ने, मुणीण मज्झे तमुदाहु पन्ने॥15॥

अणुत्तरं धम्ममुईरइत्ता, अणुत्तरं झाणवरं झियाई।
सुसुक्कसुक्कं, अपगंड-सुक्कं, संखिंदु-एगंतवदात-सुक्कं॥16॥

अणुत्तरग्गं परमं महेसी, असेसकम्मं स विसोहइत्ता।
सिद्धिं गते साइमणंतपत्ते, नाणेण सीलेण य दंसणेणं॥17॥

रुक्खेसु णाए जह सामली वा, जंसि रतिं वेदयंति सुवन्ना।
वणेसु वा नन्दणमाहु सेट्ठं, नाणेण सीलेण य भूतिपन्ने॥18॥

थणियं व सद्दाण अणुत्तरे उ, चन्दो व ताराण महाणुभावे।
गंधेसु वा चन्दणमाहु सेट्ठं, एवं मुणीणं अपडिन्नमाहु॥19॥

जहा सयंभू उदहीण सेट्ठे, नागेसु वा धरणिंदमाहु सेट्ठं।
खोओदए वा रसवेजयंते, तवोवहाणे मुणिवेजयन्ते॥20॥

हत्थीसु एरावणमाहु णाए, सीहो मिगाणं सलिलाण गंगा।
पक्खीसु वा गरुले वेणुदेवे, निव्वाणवादीणिह नायपुत्ते॥21॥

जोहेसु णाए जह वीससेणे, पुप्फेसु वा जह अरविन्दमाहु।
खत्तीण सेट्ठे जह दंत-वक्के, इसीण सेट्ठे तह वद्धमाणे॥22॥

दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं, सच्चेसु वा अणवज्जं वयंति।
तवेसु वा उत्तम बंभचेरं, लोगुत्तमे समणे नायपुत्ते॥23॥

ठिईण सेट्ठा लवसत्तमा वा, सभा सुहम्मा व सभाण सेट्ठा।
निव्वाणसेट्ठा जह सव्वधम्मा, न नायपुत्ता परमत्थि नाणी॥24॥

पुढोवमे धुणइ विगय-गेही, न सण्णिहिं कुव्वइ आसुपन्ने।
तरिउं समुद्दं व महाभवोघं, अभयंकरे वीर अणन्तचक्खू॥25॥

कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थदोसा।
एयाणि वंता अरहा महेसी, न कुव्वइ पाव न कारवेइ॥26॥

किरियाकिरियं वेणइयाण वायं, अण्णाणियाणं पडियच्च ठाणं।
से सव्व-वायं इइ वेदइत्ता, उवट्ठिए संजमदीह-रायं॥27॥

से वारिया इत्थी सराइभत्ते, उवहाणवं दुक्खखयट्ठयाए।
लोगं विदित्ता आरं परं च, सव्वं पभू वारिय सव्व-वारं॥28॥

सोच्चा य धम्मं अरिहन्त-भासियं, समाहितं अट्ठपदोवसुद्धं।
तं सद्दहाणा य जणा अणाऊ, इंदेव देवाहिव आगमिस्संति॥29॥

–श्री सूत्रकृतांग सूत्र

नमि-पव्वज्जा

चइऊण देवलोगाओ, उववन्नो माणुसम्मि लोगम्मि।
उवसन्त-मोहणिज्जो, सरई पोराणियं जाइं॥1॥

जाइं सरितु भयवं, सयंसंबुद्धो अणुत्तरे धम्मे।
पुत्तं ठवेत्तु रज्जे, अभिणिक्खमई नमी राया॥2॥

से देवलोगसरिसे, अन्तेउर-वरगओ वरे भोए।
भुंजित्तु नमी राया, बुद्धो भोगे परिच्चयई॥3॥

मिहिलं सपुर-जणवयं, बलमोरोहं च परियणं सव्वं।
चिच्चा अभिनिक्खन्तो, एगन्त-महिड्ढिओ भयवं॥4॥

कोलाहलग-संभूयं आसी मिहिलाए पव्वयन्तम्मि।
तइया रायरिसिम्मि, नमिम्मि अभिणिक्खमन्तम्मि॥5॥

अब्भुट्ठियं रायरिसिं, पव्वज्जा-ठाण-मुत्तमं।
सक्को माहण-रूवेण, इमं वयणमब्बवी॥6॥

किण्णु भो! अज्ज मिहिलाए, कोलाहलग-संकुला।
सुव्वन्ति दारुणा सद्दा, पासाएसु गिहेसु य॥7॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी॥8॥

मिहिलाए चेइए वच्छे, सीयच्छाए मणोरमे।
पत्त-पुप्फ-फलोवेए, बहूणं बहु-गुणे सया॥9॥

वाएण हीरमाणम्मि, चेइयम्मि मणोरमे।
दुहिया असरणा अत्ता, एए कन्दन्ति भो खगा॥10॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी॥11॥

एस अग्गी य वाऊ य, एयं डज्झई मन्दिरं।
भयवं अन्तेउरं तेणं, कीस णं नावपेक्खह॥12॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी॥13॥

सुहं वसामो जीवामो, जेसिं मो नत्थि किंचणं।
मिहिलाए डज्झमाणीए, न मे डज्झइ किंचणं॥14॥

चत्त-पुत्तकलत्तस्स, निव्वावारस्स भिक्खुणो।
पियं न विज्जई किंचि, अप्पियं पि न विज्जई॥15॥

बहुं खु मुणिणो भद्दं, अणगारस्स भिक्खुणो।
सव्वओ विप्पमुक्कस्स, एगन्तमणुपस्सओ॥16॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दो इणमब्बवी॥17॥

पागारं कारइत्ताणं, गोपुरट्टालगाणि य।
उस्सूलग-सयग्घीओ, तओ गच्छसि खत्तिया॥18॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दं इणमब्बवी॥19॥

सद्धं नगरं किच्चा, तव-संवर मग्गलं।
खन्ति निउण-पागारं, तिगुत्तं दुप्पधंसयं॥20॥

धणुं परक्कमं किच्चा, जीवं च इरियं सया।
धिइं च केयणं किच्चा, सच्चेण पलिमन्थए॥21॥

तव-नारायजुत्तेण, भित्तूणं कम्म-कंचुयं।
मुणी विगय-संगामो, भवाओ परिमुच्चए॥22॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी॥23॥

पासाए कारइत्ताणं, वद्धमाण-गिहाणि य।
बालग्ग-पोइयाओ य, तओ तच्छसि खत्तिया॥24॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी॥25॥

संसयं खलु सो कुणई, जो मग्गे कुणई घरं।
जत्थेव गन्तुमिच्छेज्जा, तत्थ कुव्वेज्ज सासयं॥26॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी॥27॥

आमोसे लोमहारे य, गंठिभेए य तक्करे।
नगरस्स खेमं काऊणं, तओ गच्छसि खत्तिया॥28॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी॥29॥

असइं तु मणुस्सेहिं, मिच्छा दंडो पजुंजई।
अकारिणोऽत्थ बज्झन्ति, मुच्चई कारओ जणो॥30॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी॥31॥

जे केइ पत्थिवा तुज्झं, नानमन्ति नराहिवा।
वसे ते ठावइत्ताणं, तओ गच्छसि खत्तिया॥32॥

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी।।33।।

जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ।।34।।

अप्पाणमेव जुज्झाहि, किं ते जुज्झेण बज्झओ।
अप्पणा-मेव-अप्पाणं, जइत्ता सुहमेहए।।35।।

पंचिंदियाणि कोहं, माणं मायं तहेव लोहं च।
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वं अप्पे जिए जियं।।36।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी।।37।।

जइत्ता विउले जन्ने, भोइत्ता समण-माहणे।
दच्चा भोच्चा य जिट्ठा य, तओ गच्छसि खत्तिया।।38।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी।।39।।

जो सहस्सं सहस्साणं, मासे मासे गवं दए।
तस्स वि संजमो सेओ, अदिन्तस्सऽवि किंचणं।।40।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी।।41।।

घोरासमं चइत्ताणं, अन्नं पत्थेसि आसमं।
इहेव पोसहरओ, भवाहि मणुयाहिवा।।42।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी।।43।।

मासे मासे तु जो बालो, कुसग्गेणं तु भुंजए।
न सो सुयक्खाय-धम्मस्स, कलं अग्घइ सोलसिं।।44।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी।।45।।

हिरण्णं सुवण्णं मणिमुत्तं, कंसं दूसं च वाहणं।
कोसं वड्ढावइत्ताणं, तओ गच्छसि खत्तिया।।46।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी।।47।।

सुवण्णरुप्पस्स उ पव्वया भवे,
सिया हु केलाससमा असंखया।
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि,
इच्छा हु आगाससमा अणन्तिया।।48।।

पुढवी साली जवा चेव, हिरण्णं पसुभिस्सह।
पडिपुण्णं नालमेगस्स, इइ विज्जा तवं चरे।।49।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमिं रायरिसिं, देविन्दो इणमब्बवी।।50।।

अच्छेरग-मब्भुदए, भोए चयसि पत्थिवा।
असन्ते कामे पत्थेसि, संकप्पेण विहम्मसि।।51।।

एयमट्ठं निसामित्ता, हेउ-कारण-चोइओ।
तओ नमी रायरिसी, देविन्दं इणमब्बवी।।52।।

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा।
कामे य पत्थेमाणा, अकामा जंति दोग्गइं।।53।।

अहे वयन्ति कोहेणं, माणेणं अहमा गई।
माया गई-पडिग्घाओ, लोभाओ दुहओ भयं।।54।।

अवउज्झिऊण माहण-रूवं, विउव्विऊण इन्दत्तं।
वन्दइ अभित्थुणन्तो, इमाहिं महुराहिं वग्गूहिं।।55।।

अहो ते निज्जिओ कोहो, अहो माणो पराजिओ।
अहो निरक्किया माया, अहो लोभो वसीकओ।।56।।

अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मद्दवं।
अहो ते उत्तमा खन्ती, अहो ते मुत्ति उत्तमा।।57।।

इहं सि उत्तमो भन्ते! पच्छा होहिसि उत्तमो।
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धिं गच्छसि नीरओ।।58।।

एवं अभित्थुणन्तो, रायरिसिं उत्तमाए सद्धाए।
पयाहिणं करेन्तो, पुणो पुणो वन्दई सक्को।।59।।

तो वन्दिऊण पाए, चक्कं-कुस-लक्खणे मुणिवरस्स।
आगासेणुप्पइओ, ललिय-चवल कुंडल-तिरीडी।।60।।

नमी नमेइ अप्पाणं, सक्खं सक्केण चोइओ।
चइऊण गेहं च वेदेही, सामण्णे पज्जुवट्ठिओ।।61।।

एवं करेन्ति संबुद्धा, पंडिया पवियक्खणा।
विणियट्टन्ति भोगेसु, जहा से नमी रायरिसी।।62।।

–श्री उत्तराध्ययन सूत्र

ooo

दशवैकालिक सूत्र के दो अध्ययन

(प्रथम अध्ययन)

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो॥1॥

जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रसं।
न य पुप्फं किलामेइ, सो य पीणेइ अप्पयं॥2॥

एमेए समणा मुत्ता, जे लोए संति साहुणो।
विहंगमा व पुप्फेसु, दाण-भत्तेसणे रया॥3॥

वयं च वित्तिं लब्भामो, न य कोई उवहम्मइ।
अहागडेसु रीयंते, पुप्फेसु भमरा जहा॥4॥

महुगारसमा बुद्धा, जे भवंति अणिस्सिया।
नाणापिण्डरया दन्ता तेण वुच्चन्ति साहुणो॥5॥

–त्ति बेमि

(द्वितीय अध्ययन)

कहं न कुज्जा सामण्णं, जो कामे न निवारए।
पए पए विसीयंतो, संकप्पस्स वसं गओ॥1॥

वत्थ-गंधमलंकारं, इत्थीओ सयणाणि य।
अच्छन्दा जे न भुंजन्ति, न से चाइ त्ति वुच्चइ॥2॥

जे य कन्ते पिए भोए, लद्धे वि पिट्ठीकुव्वइ।
साहीणे चयइ भोए, से हु चाइ त्ति वुच्चइ॥3॥

समाइ पेहाइ परिव्वयंतो, सिया मणो निस्सरइ बहिद्धा।
न सा महं नो वि अहं पि तीसे, इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं।।4।।

आयावयाही चय सोगमल्लं, कामे कमाही कमियं खु दुक्खं।
छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागं, एवं सुही होहिसि संपराए।।5।।

पक्खंदे जलियं जोइं, धूमकेउं दुरासयं।
नेच्छंति वंतयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणे।।6।।

धिरत्थु तेऽजसोकामी, जो तं जीविय-कारणा।
वंतं इच्छसि आवेउं, सेयं ते मरणं भवे।।7।।

अहं च भोगरायस्स, तं चऽसि अंधगवण्हिणो।
मा कुले गंधणा होमो, संजमं निहुओ चर।।8।।

जइ तं काहिसि भावं, जा जा दिच्छसि नारिओ।
वायाविद्धो व्व हडो, अट्ठिअप्पा भविस्ससि।।9।।

तीसे सो वयणं सोच्चा, संजयाए सुभासियं।
अंकुसेण जहा नागो, धम्मे संपडिवाइओ।।10।।

एवं करेंति संबुद्धा, पंडिया पवियक्खणा।
विणियट्टंति भोगेसु, जहा से पुरिसुत्तमो।।11।।

–त्ति बेमि।

०००

श्री नान्दी-मंगल सूत्र

जयइ जगजीव-जोणि-वियाणओ, जगगुरु जगाणंदो।
जग-नाहो जग-बन्धू, जयइ जगप्पियामहो भयवं॥1॥

जयइ सुयाणं पभवो, तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ।
जयइ गुरु लोगाणं, जयइ महप्पा महावीरो॥2॥

भद्दं सव्व-जगुज्जोयगस्स, भद्दं जिणस्स वीरस्स।
भद्दं सुरासुरनमंसियस्स, भद्दं धुय-कम्मरयस्स॥3॥

गुण-भवण-गहण! सुयरयण-भरिय-दंसण-विसुद्ध-रत्थागा।
संघ-नगर! भद्दं ते, अखण्ड-चारित्त-पागारा॥4॥

संजम-तव-तुंबारयस्स, नमो सम्मत्त-पारियल्लस्स।
अप्पडिचक्कस्स जओ, होउ सया संघ-चक्कस्स॥5॥

भद्दं सीलपडागूसियस्स, तव-नियम-तुरय-जुत्तस्स।
संघ-रहस्स भगवतो, सज्झाय-सुनंदि-घोसस्स॥6॥

कम्मरय-जलोह-विणिग्गयस्स, सुयरयण-दीहनालस्स।
पंच-महव्वय-थिर-कण्णियस्स, गुण-केसरालस्स॥7॥

सावगजणमहुयर-परिवुडस्स, जिण-सूर-तेय-बुद्धस्स।
संघ-पउमस्स भद्दं, समण-गण-सहस्सपत्तस्स॥8॥

तव-संजम-मय लंछण! अकिरिय-राहु-मुहदुद्धरिसनिच्चं।
जय संघचंद! निम्मल-सम्मत्त-विसुद्ध-जोण्हागा॥9॥

परतित्थिय-गहपहनासगस्स, तव-तेयदित्तलेसस्स।
नाणुज्जोयस्स जए, भद्दं दमसंघ-सूरस्स॥10॥

भद्दं धिइवेलापरिगयस्स, सज्झाय-जोग-मगरस्स।
अक्खोहस्स भगवओ, संघ-समुद्दस्स रुंदस्स॥11॥

गुणरयणुज्जलकडयं, सीलसुगन्धितवमंडिउद्देसं।
सुय-बारसंग-सिहरं, संघ-महामन्दरं वन्दे॥12॥

निव्वुइपह-सासणयं, जयइ सया सव्वभावदेसणयं।
कुसमय-मय-नासणयं, जिणिंदवर-वीर-सासणयं॥13॥
—नन्दी सूत्र

○○○

श्री गौतम स्वामी-वर्णन

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई नामं अणगारे गोयम-गोत्तेणं सत्तुस्सेहे, समचउरंससंठाणसंठिए, वज्जरिसहनारायसंघयणे, कणगपुलग-निघसपम्हगोरे, उग्गतवे, दित्ततवे, तत्ततवे, घोरतवे, महातवे, उराले, घोरगुणे, घोरतवस्सी, घोरबंभचेरवासी, उच्छूढ-सरीरे, संखित्तवि-उलतेउलेस्से, छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ॥

इस पाठ को 27 बार नित्य पढ़ना चाहिये। यह भगवती सूत्र का पाठ है। इसमें गौतम स्वामी की स्तुति की गयी है। शास्त्र पाठ होने से यह कर्म-निर्जरा का हेतु है तथा बहुत महिमापूर्ण है। इसका पाठ करने वाला दु:ख-दारिद्र्य से मुक्त होकर सुख-समृद्धियों को प्राप्त करता है।

○○○

सुभाषित

चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महिड्ढिओ।
संती संतिकरे लोए, पत्तो गइ मणुत्तरं।।1।।

देव - दाणव - गंधव्वा, जक्ख - रक्खस्स - किन्नरा।
बंभयारिं नमंसंति, दुक्करं जे करंति ते।।2।।

जिण वयणे अणुरत्ता, जिण वयणं जे करेंति भावेणं।
अमला असंकिलिट्ठा, ते हुंति परित्त-संसारी।।3।।

एगे जिए जिया पंच, पंच जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ताणं सव्वसत्तूं जिणामहं।।4।।

रागो य दोसोबिय कम्मबीयं, कम्मं च मोहप्पभवं वयंति।
कम्मं च जाई मरणस्स मूलं, दुक्खं च जाईमरणं वयंति।।5।।

दुक्खं हयं जस्स न होइ मोहो, मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा।
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो, लोहो हओ जस्स न किंचणाइं।।6।।

नाणेण जाणई भावे, दंसणेण य सद्दहे।
चरित्तेण निगिण्हाई, तवेण परिसुज्झई।।7।।

सागारी अनशन के समय

संकोइयसंडासा उवट्टंते य कायपडिलेहा।
दवाइ - उवओग - उस्सास - निरुंभणाए।।8।।

जइ मे हुज्ज पमाओ, इमस्स देहस्सिमाइ रयणीए।
आहारमुवहि - देहं सव्वं तिविहेण वोसिरियं।।9।।

पाणाइवायमलिक्कं चोरिं मेहुणं दविणमुच्छं।
कोहं माणं मायं लोहं पिज्जं तहा दोसं।।10।।

कलहमभक्खाणं पेसुन्नं रइ - अरइसमाउत्तं।
परपरिवायं मायामोसं मिच्छत्तसल्लं च॥11॥

वोसिरिसु इमाइं मोक्खमग्गसंसग्गविग्घभूयाइं।
दुग्गइनिबंधणाइं अट्ठारसपावठाणाइं ॥12॥

एगोऽहं, नत्थि मे कोइ, नाहमन्नस्स कस्सई।
एवमदींणमणसां अप्पाणमणुसासइ॥13॥

एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ।
सेसा मे बहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा॥14॥

संजोगमूला जीवेण पत्ता दुक्ख - परंपरा।
तम्हा संजोगसंबंध सव्वं तिविहेण वोसिरियं॥15॥

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिय - सुपट्ठिओ ॥16॥

अप्पा नई वेयरणी अप्पा मे कूडसामली।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नंदणं वणं॥17॥

सारं दंसणनाणं, सारं तव नियम खंजन सीलं।
सारं जिणवरधम्मं सारं संलेहणा - मरणं॥18॥

मज्जं विसय-कसाया, निद्दा विगहा य पंचमी भणिया।
एए पंच पमाया, जीवा पाडंति संसारे॥19॥

क्षमापना पाठ

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणइ॥20॥

एवमहं आलोइय, निंदिय-गरहिय-दुंगुच्छिय सव्वं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिण चउवीसं॥21॥

आयरिय-उवज्झाए सीसे साहम्मिए कुले गणे य।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि।।22।।

सव्वस्स समणसंघस्स भगवओ अंजलिं करिय सीसे।
सव्वं खमावइत्ता खमामि सव्वस्स अहयंपि।।23।।

सव्वस्स जीवरासिस्स भावओ धम्मनिहियनियचित्तो ।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि ।।24।।

धर्ममंगल स्तुति

धम्मो मंगलमुक्किठं, अहिंसा संजमो तवो ।
देवावि तं नमंसंति जस्स धम्मे सया मणो।।25।।

जाइ-जरा-मरण-सोगपणासणस्स,
कल्लाण-पुक्खलविसालसुहावहस्स।
को देव - दाणव - नरिंदगणच्चिअस्स,
धम्मस्स सारमुवलब्भ करे पमायं।।26।।

सिद्धे भो! पयओ णमो जिणमए नंदी सआ संजमे।
देवं-नाग-सुव्वण-किन्नर-गणस्सब्भूअभावच्चिए।।27।।

लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं तेलुक्कमच्चासुरं ।
धम्मो वड्ढइ सासओ, विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढउ।।28।।

लब्भंति विमला भोए, लब्भंति सुरसंपया ।
लब्भंति पुत्त - मित्तं च, एगो धम्मो न लब्भई।।29।।

○○○

मंगल पाठ

(श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी)

अरहंत नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥1॥
अरहंत नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढ़मं हवइ मंगलं॥2॥
सिद्धाणं नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥3॥
सिद्धाणं नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, बीयं हवइ मंगलं॥4॥
आयरिय-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥5॥
आयरिय-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, तइयं हवइ मंगलं॥6॥
उवज्झाय-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥7॥
उवज्झाय-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, चउत्थं हवइ मंगलं॥8॥
साहूणं नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो वोहि-लाभाए॥9॥
साहूणं नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पंचमं हवइ मंगलं॥10॥
एसो पंच-नमोक्कारो, जीवं मोयइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहि-लाभाए॥11॥
एसो पंच-नमोक्कारो, सव्व-पाव-प्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥12॥

—आवश्यक-निर्युक्ति

चतुर्थ विभाग : संस्कृत

स्तुति – स्तवन – स्तोत्र आदि

मंगल-सूत्र

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिताः, सिद्धाश्च सिद्धि स्थिताः।
आचार्या जिन शासनोन्नति कराः, पूज्या उपाध्यायकाः॥
श्रीसिद्धान्त सुपाठका मुनिवरा, रत्न त्रयाराधकाः।
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु नो मंगलम्॥1॥

अर्हन्तो ज्ञान-भाजः सुरवर-महिताः, सिद्धि-सौधस्थ-सिद्धाः।
पंचाचार प्रवीणाः प्रगुण गणधराः, पाठकाश्चागमानाम्।
लोके लोकेश-वन्द्याः सकल-यतिवराः, साधु धर्माभिलीनाः।
पंचाऽप्येते सदाऽप्ता विदधतु कुशलं, विघ्न-नाशं विधाय॥2॥

वीरः सर्वसुरा सुरेन्द्र-महितो, वीरं बुधाः संश्रिताः।
वीरेणाभि हतः स्वकर्म-निचयो, वीराय नित्यं नमः॥
वीरात् तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्य धीरं तपो।
वीरे श्री-धृति-कीर्ति-कान्ति निचयो, हे वीर! भद्रं दिश॥3॥

संसार दावानल दाह-नीरं, सम्मोह धूली हरणे समीरम्।
मायारसादारण सार-सीरं, नमामि वीरं गिरिसार-धीरम्॥4॥

भावावनाम - सुर - दानव मानवेन,
चूला - विलोल-कमलावलि-मालितानि।
सम्पूरिताभिनत - लोक - समीहितानि,
कामं नमामि जिनराज - पदानि तानि॥5॥

बोदागाधं सुपदपदवीनीरपूराभिरामं,
जीवा - हिंसाऽविरललहरीसंगमागाहदेहं।
चूलावेलं गुरुगममणीसंकुलं दूरपारं,
सारं वीरागमजलनिधिं सादरं साधु सेवे॥6॥

आमूल लोलधूली पहुलपरिमलालीढलोलाललिमाला-
झंकारारावसारामलदलकमलागार भूमीनिवासे !
छाया संभार सारे ! वरकमलकरे ! तारहाराभिरामे !
वाणीसंदोहदेहे! भवविरहवरं देहिमे देवि ! सारम्॥7॥

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित - बुद्धिबोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रय - शंकरत्वात् ।
धाताऽसि धीर ! शिवमार्ग - विधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि॥8॥

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षितितलामल - भूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय॥9॥

त्वं नाथ ! दुःखिजन - वत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्य - पुण्य - वसते ! वशिनां वरेण्य !
भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय,
दुःखांकुरोद्दलन - तत्परतां विधेहि॥10॥

देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताखिलवस्तु - सार !
संसारतारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ !
त्रायस्व देव ! करुणाह्रद ! मां पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद - व्यसनाम्बु - राशेः॥11॥

तज्जयति परं ज्योतिः, समं समस्तैरनन्त - पर्यायैः
दर्पणतल इव सकला, प्रतिफलति पदार्थ-मालिका यत्र॥12॥

मोक्ष - मार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्म - भूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्व - तत्त्वानां, नन्दे तद् - गुण - लब्धये॥13॥

दिक्-कालाद्यनवच्छिन्नाऽनन्त - चिन्मात्र मूर्तये ।
स्वानुभूत्येक - मानाय, नमः शान्ताय तेज से॥14॥

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः॥15॥

नमः समय - साराय, स्वानुभूत्या चकासते।
चित्स्वभावाय भावाय, सर्वभावान्तर - च्छिदे॥16॥

अनन्त - धर्मणस्तत्त्वं, पश्यन्ती प्रत्यागात्मनः।
अनेकान्तमयी मूर्तिर्, नित्यमेव प्रकाशताम्॥17॥

एकेनाकर्षन्ती, श्लथयन्ती वस्तुतत्त्वमितरेण।
अन्तेन जयति जैनी, नीतिर्मन्थाननेत्रमिव गोपी॥18॥

नमः श्रीवर्द्धमानाय, निर्द्धूत - कालिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्विद्या दर्पणायते॥19॥

यत्र तत्र समये यथा तथा, योऽसि सोऽस्यभिधया यया तया।
बीतदोषकलुषः स चेद् भवान्, एक एव भगवन्नमोऽस्तु ते॥20॥

भवबीजांकुर - जनना, रागाद्याः क्षयमुपागता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा, हरो जिनो वा नमस्तस्मै॥21॥

तव पादौ मम हृदये, ममहृदयं तवपदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्, यावन् निर्वाण - सम्प्राप्ति ॥22॥

ब्राह्मी चन्दन बालिका भगवती, राजीमती द्रौपदी।
कौशल्या च मृगावती च सुलसा, सीता सुभद्रा शिवा॥
कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता, चूला प्रभावत्यपि।
पद्मावत्यपि सुन्दरी दिन मुखे, कुर्वन्तु नो मंगलम्॥23॥

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः, संगतिः सर्वदाऽऽर्यैः।
सत्साधूनां गुण-गण- कथा, दोष - वादे च मौनम्॥
सर्वस्याऽपि प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे।
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे, यावदेतेऽपवर्गः॥24

शिवमस्तु सर्वजगतः, परहित-निरता भवन्तु भूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु नाशंः सर्वत्र सुखीभवतु लोकः॥25॥

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग् भवेत॥26॥

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलम् गौतमः प्रभुः।
मंगलं स्थूलिभद्राद्याः, जैन धर्मोऽस्तु मंगलम्॥27॥

सर्व मंगल मांगल्यं, सर्व कल्याण कारणम्।
प्रधानं सर्व धर्माणां, जैनं जयतु शासनम्॥28॥

उपसर्गाः क्षयं यान्ति, छिद्यन्ते विघ्न वल्लयः।
मनः प्रसन्नतामेति, पूज्य मग्ने जिनेश्वरे॥29॥

ooo

श्री चतुर्विंशति-जिन-स्तोत्र

आदौ नेमिजिनं नौमि, संभवं सुविधिं तथा।
धर्मनाथं महादेवं, शान्तिं शान्तिकरं सदा॥1॥

अनन्तं सुव्रतं भक्त्या, नमिनाथं जिनोत्तमम्।
अजितं जितकन्दर्पं, चन्द्रं चन्द्रसमप्रभम्॥2॥

आदिनाथं तथा देवं, सुपार्श्वं विमलं जिनम्।
मल्लिनाथं गुणोपेतं, धनुषां पञ्चविंशतिम्॥3॥

अरनाथं महावीरं, सुमतिं च जगद्-गुरुम्।
श्रीपद्मप्रभनामानं, वासुपूज्यं सुरैर्नतम्।।4।।

शीतलं शीतलं लोके, श्रेयांसं श्रेयसे सदा।
कुन्थुनाथं च वामेयं, श्री अभिनन्दनं जिनम्।।5।।

जिनानां नामभिर्बद्धः, पञ्चषष्ठि-समुद्भवः।
यन्त्रोऽयं राजते यत्र, तत्र सौख्यं निरन्तरम्।।6।।

यस्मिन् गृहे महाभक्त्या, यन्त्रोऽयं पूज्यते बुधैः।
भूत-प्रेत-पिशाचादे-र्भयं तत्र न विद्यते।।7।।

सकल-गुणनिधानं यन्त्रमेनं विशुद्धं।
हृदय-कमलकोषे धीमतां ध्येयरूपम्।।8।।

जयतिलकगुरु - श्रीसूरिराजस्य शिष्यो।
वदति सुखनिदानं मोक्षलक्ष्मी-निवासम्।।9।।

○○○

श्री ऋषभदेव स्तोत्र

आदिजिनं वन्दे गुणसदनं, सदनन्तामल-बोधं रे।
बोधकता-गुणविस्तृतकीर्तिं, कीर्तित-पथमविरोधं रे-आदि.।।1।।

रोधरहित-विस्फुरदुपयोगं, योगं दधतमभंगं रे!
भंगं नय-व्रज-पेशलवाचं, वाचंयम-सुख-संगं रे-आदि.।।2।।

संगतपद-शुचिवचनतरंगं, रंगं जगति ददानं रे!
दानं-सुरद्रुम-मंजुलहृदयं, हृदयंगम-गुण-भानं रे-आदि.।।3।।

भानन्दित - सुर - नर - पुन्नागं, नागर - मानस-हंसं रे।
हंसगतिं पंचम - गतिवासं, वासव-विहिताशंसं रे-आदि.।।4।।

शंसन्तं नयवचनमनवमं, नव-मंगल-दातारं रे।
तारस्वरमघ - घनपवमानं, मान - सुभट - जेतारं रे - आदि.॥5॥

इत्थं स्तुतः प्रथमतीर्थपतिः प्रमोदात्,
श्रीमद्-यशोविजय-वाचकपुंगवेन।
श्री पुण्डरीक-गिरिराज-विराजमानो,
मानोन्मुखानि वितनोतु सतां सुखानि॥6॥

○○○

श्री ऋषभ जिन स्तवन

(आचार्य समन्तभद्र)

स्वयम्भुवा भूत-हितेन भूतले, समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा।
विराजितं येन विधुन्वता तमः, क्षपा करेणेव गुणोत्करैः करैः॥1॥

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषुः, शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः।
प्रबुद्ध तत्त्वः पुनरद्भुतोदयो, ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः॥2॥

विहाय यः सागर वारि वाससं, वधूमि-वेमां वसुधा वधूं सतीम्।
मुमुक्षुरिक्ष्वाकु-कुलादिरात्मवान्, प्रभु प्रवव्राज सहिष्णु-रच्युतः॥3॥

स्वदोष-मूलं स्व-समाधि तेजसा, निनाय यो निर्दय-भस्मसात् क्रियाम्।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा, बभूव च ब्रह्म-पदाऽमृतेश्वरः॥4॥

स विश्व चक्षुर्वृषभोऽर्चितः सतां, समग्र-विद्यात्म-वपुर् निरञ्जनः।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो, जिनोऽजित क्षुल्लक वादिशासनः॥5॥

○○○

सर्वजिनस्तोत्र

(आचार्य कनकप्रभ)

जयति जंगम-कल्पमहीरुहो, जयति दु:खमहार्णवतारकः।
जयदि विश्वसनातनदीपको, जयति भूतल-शीतरुचिर्जिनः।।1।।

जयति कोपदवानल-नीरदो, जयति मान-महीरुह-कुंजरः।
जयति कूटकुडंगि-हिमागमो, जयति लोभमहोदधि-मन्दरः।।2।।

विजयते जगदेकविलोचनो, विजयते निरुपाधिक-बान्धवः।
विजयते भवरोग-चिकित्सको, विजयते शिव-पत्तन-पण्डितः।।3।।

जयति मारविकार-निशाकर, प्रसर-संवरणैकदिवाकरः।
जयति संसृतिकाननसम्भ्रम - भ्रमण-खिन्नजनैकसुधासरः।।4।।

विषयपंकिलमोहजलोल्लसद् बहुलराग-तरंग-भराकुले।
विजयते विपुले भवपल्वले, कमलमेकमहो जिन-पुंगवः।।5।।

ooo

श्री नेमिजिन-स्तवनम्

(पूर्वाचार्य)

श्री उज्जयन्त-शैलेश - तुंग-शृंगविभूषण!
श्रीमन्नेमि-जिनाधीश ! जय श्रीकल-मन्दिर !।।1।।

दृष्टः पुण्येन येन त्वं, दुर्लभोऽपि मया भवे।
दर्शनन स्वकीयेन, तत्पुषाण ममाधुना।।2।।

कन्दर्प-मत्त-मातंग घातसिंहोपमाय ते।
नमोऽस्तु जगदानन्द कारिणेऽघनिवारिणे।।3।।

त्वं माता त्वं पिता देव ! त्वं त्राता जगदीश मे।
भवाम्भोधौ पतन्तं मां, पाहि-पाहि कृपानिधे !।।4।।
सृतं देवतया देव ! सृतं मानुषिकैः सुखैः।।
श्रीनेमे ! सततं मेऽस्तु, सुलभं तव दर्शनम्।।5।।

ooo

श्री चिन्तामणि-पार्श्वनाथ-स्तोत्र

किं कर्पूरमयं सुधारसमयं किं चन्द्ररोचिर्मयं?
किं लावण्यमयं महामणिमयं कारुण्यकेलीमयम्?
विश्वानन्दमयं महोदयमयं शोभामयं चिन्मयं?
शुक्लध्यानमयं वपुर्जिनपतेर्-भूयाद् भवालम्बनम्।।1।।

पातालं कलयन् धरां धवलयन्नाकाशमापूरयन्,
दिक्चक्रं क्रमयन् सुरासुरनरश्रेणिं च विस्मापयन्।
ब्रह्माण्डं सुखयन् जलानि जलधेः फेनच्छलाल्लोलयन्,
श्री चिन्तामणि-पार्श्वसंभवयशो-हंसश्चिरं राजते।।2।।

पुण्यानां विपणिस्तमोदिनमणिः कामेभ-कुम्भे सृणिः,
मोक्षे निस्सरणिः सुरद्रुकरिणी-ज्योतिष्-प्रकाशारणिः।
दाने देवमणिर्नतोत्तमजनश्रेणिः कृपा-सारणिः,
विश्वानन्दसुधाघृणिर्भवभिदे श्रीपार्श्वचिन्तामणिः।।3।।

श्रीचिन्तामणिपार्श्व-विश्वजनतासंजीवनस्त्वं मया,
दृष्टस्तात! ततः श्रियः समभवन्नाशक्रमाचक्रिणम्।
मुक्तिः क्रीडति हस्तयोर्बहुविधं सिद्धं मनोवांछितं,
दुर्दैवं दुरितं च दुर्दिनभयं कष्टं प्रनष्टं मम।।4।।

यस्य प्रौढतमप्रतापतपनः प्रोद्दामधामा जगज्,
जङ्घालः कलिकालकेलिदलनो मोहान्धविध्वंसकः।
नित्योद्द्योतपदं समस्तकमलाकेलिगृहं राजते,
स श्रीपार्श्वजिनो जने हितकरश्चिन्तामणिः पातु माम्॥5॥

विश्वव्यापितमो हिनस्ति तरणिर्बालोऽपि कल्पाङ्कुरो,
दारिद्र्याणि गजावलीं हरिशिशुः काष्ठानि वह्नेर्कणः।
पीयूषस्य लवोऽपि रोगनिवहं यद्वत्तथा ते विभो,
मूर्तिः स्फूर्तिमती सती त्रिजगती-कष्टानि हर्तुं क्षमा॥6॥

श्रीचिन्तामणिमन्त्रमोंकृतियुतं ह्रींकारसाराश्रितं,
श्रीमर्हं नमिऊणपासकलितं त्रैलोक्य-वश्यावहम्।
द्वेधाभूतविषापहं विषहरं श्रेयः प्रभावाश्रयं,
सोल्लासं वसहांकितं जिनफुलिंगानन्ददं देहिनाम्॥7॥

ह्रीं-श्रींकारवरं नमोऽक्षरपरं ध्यायन्ति ये योगिनो,
हृत्पद्मे विनिवेश्य पार्श्वमधिपं चिन्तामणिसंज्ञकम्।
भाले वामभुजे च नाभिकरयो-र्भूयो भुजे दक्षिणे,
पश्चादष्टदलेषु ते शिवपदं द्वित्रैर्भवैर्-यान्त्यहो॥8॥

नो रोगा नैव शोका, न कलह-कलना नारि-मारि-प्रचारा,
नैवाधिर्नासमाधिर् न च दरि-दुरिते, दुष्ट-दारिद्र्ता नो।
नो शाकिन्यो ग्रहा नो, न हरि-करिगणा, व्याल-वैतालजालाः,
जायन्ते पार्श्वचिन्तामणिनतिवशतः प्राणिनां भक्तिभाजाम्॥9॥

गीर्वाणद्रुमधेनु कुम्भमणयस्तस्यांगणे-रिङ्गिणो,
देवा-दानव-मानवाः सविनयं तस्मै हित-ध्यायिनः।
लक्ष्मीस्तस्य वशाऽवशेव गुणिनां ब्रह्माण्ड-संस्थायिनी,
श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथमनिशं संस्तौति यो ध्यायति॥10॥

इति जिनपति-पार्श्वः पार्श्वपार्श्वाख्ययक्षः,
प्रदलितदुरितौघः प्रीणित-प्राणिसार्थः।
त्रिभुवन - जनवांछादान - चिन्तामणिकः,
शिवपद-तरुबीजं बोधिबीजं ददातु॥11॥

○○○

श्री पार्श्वनाथ-स्तोत्र

ॐ नमः पार्श्वनाथाय, विश्व - चिन्तामणीयते।
ह्रीं धरणेन्द्र वैरोट्या - पद्मादेवी - युतायते॥1॥

शान्ति-तुष्टि-महापुष्टि-धृतिकीर्तिविधायिने।
ॐ ह्रीं द्विड्-व्याल-वेताल-सर्वाधिव्याधिनाशिने॥2॥

जया-जिताख्या-विजयाख्याऽपराजितयान्वितः।
दिशां-पालैर्ग्रहैर्यक्षै-र्विद्यादेवीभिरन्वितः॥3॥

ॐ असिआउसाय नमस्तत्र त्रैलोक्यनाथताम्।
चतुःषष्टि - सुरेन्द्रास्ते, भासन्ते छत्र - चामरैः॥4॥

श्रीशंखेश्वरमण्डनपार्श्वजिन! प्रणतकल्पतरुकल्प!
चूरय दुष्टव्रातं, पूरय मे वाञ्छितं नाथ!॥5॥

○○○

श्री महावीराष्टक-स्तोत्र

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावा-श्चिदचितः,
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः।
जगत् साक्षी मार्ग प्रकटन परो भानुरिव यो,
महावीर स्वामी नयन पथ गामी भवतु मे॥1॥

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द रहितं,
जनान् कोपापायं प्रकटयति वाऽभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला,
महावीर स्वामी नयन पथ गामी भवतु मे॥2॥

नमन्ना केन्द्राली-मुकुट - मणिभा - जाल-जटिलं,
लसत् पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनु - भृताम्।
भव ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीर स्वामी नयन पथ गामी भवतु मे॥3॥

यदर्चा-भावेन प्रमुदित मना दर्दुर इह,
क्षणादासीत स्वर्गी गुण-गण-समृद्धः सुख-निधिः।
लभन्ते सद् भक्ता शिव-सुख-समाजं किमु तदा?
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे॥4॥

कनत्-स्वर्णा-भासोऽप्यपगत-तनुर् ज्ञान निवहो,
विचित्रात्माऽप्येको नृपति वर - सिद्धार्थ-तनयः।
अजन्माऽपि श्रीमान् विगत भव रागोऽद्भुत गतिर्,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे॥5॥

यदीया वाग्-गंगा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर् जगति जनतां या स्नपयति।

इदानी-मप्येषां बुधजन-मरालैः परिचिता,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।6।।

अनिर्वारोद्रेकस् त्रिभुवनजयी काम - सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निज बलाद्येन विजितः।
स्फुरन् नित्यानन्द - प्रशम पद राज्याय स जिनः,
महावीर स्वामी नयन - पथ - गामी भवतु मे।।7।।

महा मोहातंक - प्रशमन पराऽऽकस्मिक् - भिषग्,
निरापेक्षो बन्धुर् विदित महिमा मंगल-करः।
शरण्यः साधूनां भव भय भृतामुत्तम गुणो,
महावीर स्वामी नयन - पथ - गामी भवतु मे।।8।।

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतम्।
यः पठेच्छृणु याच्चापि, स याति परमां गतिम्।।9।।

ooo

श्री महावीर-स्तोत्र

(उपाध्याय अमर मुनि)

सकल-शक्र-समाज-सुपूजितं,
सकल-संयति-संतति-संस्तुतम्।
विमल-शील-विभूषण-भूषितं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।1।।

कलिल-कानन-भंजन-कुंजरं,
शिव-सरोरुह-संचयशंवरम्।
कुगति-पंकजिनी-रजनी-करं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।2।।

कुमति-वादि- दिवान्ध-दिवाकरं,
कुटिल-काम-कुरंग-वनेश्वरम्।
सुखद्-शान्त-सुधारस-सागरं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।3।।

रुचिर-राज्यसुखं भविना कृते,
द्रुततरं परिहृत्य च येन सा।
भगवता यतिता सुतता धृता,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।4।।

अधम-यज्ञभवं पशु-हिंसनं,
निज-सुदेशनया विनिवारितम्।
क्षितितलेऽत्र दया सुविसारिता,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।5।।

सरल-सत्य पथे सुमनोहरे,
विचलिता जनता विनियोजिता।
खल-दलं सकलं सरलीकृतम्,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।6।।

अहह ! शूद्र-जनानिह भारते,
व्यदलयन् खलु जात्यभिमानिनः।
विघटिता कुल-जाति-मदान्धता,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।7।।

विकच-पंकज-पत्रविलोचनं,
सकल-साधक-वृन्द-विनन्दनम्।
सघन-विघ्न-घनाघन-भंजनं,
भजत तं प्रथितं त्रिशला-सुतम्।।8।।

वर्षे संयमि-सामजांक-कु-मिते श्रीवैक्रमीये शुभे,
चैत्रे शुक्लदले त्रयोदश-दिने श्री वीरजन्मोत्सवे।
पृथ्वीचन्द्र-गुरु-क्रमांबुजयुगं संध्यायता धीमता,
वीरस्तोत्रमिदं वरं विरचितं देवेन्दुना साधुना॥9॥

○○○

श्री भक्तामर स्तोत्र

(आचार्य श्री मानतुंग)

भक्तामर-प्रणत-मौलिमणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित-पाप-तमोवितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा -
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥1॥

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धि-पटुभिः सुरलोक-नाथैः।
स्तोत्रैर् - जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥2॥

बुद्ध्या विनाऽपि विबुधार्चितपादपीठ!
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्-विगत-त्रपोऽहम्।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥3॥

वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र! शशांककान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत्त-नक्रचक्रम्,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्॥4॥

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश!
कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः।
प्रीत्याऽऽत्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम्॥5॥

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिकानिकरैकहेतुः॥6॥

त्वत्संस्तवेन भवसंतति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात् क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्त-लोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंधकारम्॥7॥

मत्वेति नाथ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु,
मुक्ताफल-द्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः॥8॥

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्त-दोषम्,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि॥9॥

नात्यद्भुतं भुवनभूषण! भूतनाथ!
भूतैर्-गुणैर्-भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति॥10॥

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वा पयः शशिकरद्युति-दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधेरशितुं क इच्छेत्॥11॥

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत!
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं नहि रूपमस्ति॥12॥

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,
निःशेष-निर्जित-जगत्-त्रितयोपमानम्।
बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद् वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम्॥13॥

सम्पूर्णमण्डल-शशाङ्ककलाकलाप-
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति।
ये संश्रितास्-त्रिजगदीश्वर नाथमेकं,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम्॥14॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभिर्
नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम्।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रि शिखरं चलितं कदाचित्॥15॥

निर्धूमवर्तिर् पवर्जित-तैलपूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ! जगत्प्रकाशः॥16॥

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगस्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति।
नाम्भोधरोदर - निरुद्धमहाप्रभावः,
सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र! लोके॥17॥

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारम्,
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति,
विद्योतयज्जगदपूर्वशशांक बिम्बम्॥18॥

किं शर्वरीषु शशिनाऽह्नि विवस्वता वा?
युष्मन्मुखेन्दु - दलितेषु तमस्सु नाथ!
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभार-नम्रैः॥19॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि॥20॥

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ! भवान्तरेऽपि॥21॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम्॥22॥

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस –
मादित्यवर्णममलं तमसः परस्तात्।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्यमुनीन्द्र! पन्थाः।।23।।

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनन्त-मनंगकेतुम्।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं,
ज्ञान-स्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः।।24।।

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित! बुद्धि बोधात्-
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्।
धाताऽसि धीर! शिवमार्गविधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि।।25।।

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय।।26।।

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्,
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश।
दोषैरुपात्त-विविधाश्रय-जातगर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि।।27।।

उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख-
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त तमो-वितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति।।28।।

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानम्,
तुंगोदयाद्रि-शिरसीव सहस्त्ररश्मेः।।29।।

कुन्दावदात-चलचामर-चारुशोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम्।
उद्यच्छशांक-शुचिनिर्झर-वारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम्।।30।।

छत्रत्रयं तव विभाति शशांककान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर-प्रतापम्।
मुक्ताफल-प्रकरजाल-विवृद्धशोभं,
प्रख्यापयत्-त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्।।31।।

गम्भीर-ताररवपूरित-दिग्विभागस्-
त्रैलोक्यलोक-शुभसंगमभूतिदक्षः।
सद्धर्मराजजयघोषण-घोषकः सन्-
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी।।32।।

मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टिरुद्धा।
गन्धोदबिन्दु-शुभमन्द-मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा।।33।।

शुम्भत्प्रभावलय-भूरिविभा विभोस्ते,
लोकत्रय-द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती।
प्रोद्यद्-दिवाकर-निरन्तरभूरिसंख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपिसोमसौम्याम्।।34।।

स्वर्गापवर्गगममार्ग विमार्गणेष्टः,

सद्धर्मतत्त्वकथनैक - पटुस्त्रिलोक्याः।

दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व -

भाषास्वभाव - परिणामगुणैः प्रयोज्यः।।35।।

उन्निद्रहेम-नवपंकजपुञ्जकान्ति,

पर्युल्लसन्नख मयूख शिखाभिरामौ।

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र! धत्तः,

पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति।।36।।

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र!

धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य।

यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,

तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि।।37।।

श्च्योतन्-मदाविल-विलोल-कपोलमूल-

मत्तभ्रमद्-भ्रमरनाद-विवृद्धकोपम्।

ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम्,

दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम्।।38।।

भिन्नेभ-कुंभ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-

मुक्ताफल-प्रकर-भूषित-भूमिभागः।

बद्धक्रमः क्रमगतः हरिणाधिपोऽपि,

नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते।।39।।

कल्पान्तकाल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं,

दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगम्।

विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं,

त्वन्नाम-कीर्तनजलं शमयत्यशेषम्।।40।।

रक्तेक्षणं समदकोकिल-कण्ठनीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशंकस्-
त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः।।41।।

वल्गत्तुरंग-गजगर्जित-भीमनाद-
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्।
उद्यद्दिवाकरमयूख-शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्त्तनात् तम इवाशु भिदामुपैति।।42।।

कुन्ताग्रभिन्नगज-शोणितवारिवाह-
वेगावतार-तरणातुरयोध-भीमे।
युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्-
त्वत्पाद-पंकजवनाश्रयिणो लभन्ते।।43।।

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र-
पाठीन - पीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ।
रंगत्तरंग-शिखरस्थित-यानपात्रास्,
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति।।44।।

उद्भूतभीषणजलोदर-भारभुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः।
त्वत्पाद-पंकज-रजोऽमृतदिग्धदेहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः।।45।।

आपाद-कण्ठमुरु शृंखल-वेष्टितांगा,
गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघाः।
त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति।।46।।

मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम्।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते।।47।।

स्तोत्रस्त्रजं तव जिनेन्द्र! गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कंठगतामजस्त्रं,
तं मानतुंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः।।48।।

ooo

श्री कल्याण-मंदिर-स्तोत्र

(आचार्य श्री सिद्धसेन दिवाकर)

कल्याण-मन्दिरमुदारमवद्य-भेदि,
भीताभयप्रदमनिन्दितमंघ्रि-पद्मम्।
संसार - सागर - निमज्जदशेष-जन्तु-
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य।।1।।

यस्य स्वयं सुर - गुरुर्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर् न विभुर् विधातुम्।
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मय - धूमकेतोस्-
तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये।।2।।

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथमधीश भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक शिशुर्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल धर्मरश्मेः?।।3।।

मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत।
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्,
मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः?।।4।।

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य - गुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः?।।5।।

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश!
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः?
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयं,
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि।।6।।

आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन! संस्तवस्ते,
नामाऽपि पाति भवतो भवतो-जगन्ति।
तीव्रातपोपहत-पन्थ-जनान् निदाघे,
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि।।7।।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो! शिथिलीभवन्ति,
जन्तो-क्षणेन निविडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजंगममया इव मध्यभाग–
मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य।।8।।

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र!
रौद्रैरुपद्रव-शतैस् त्वयि वीक्षितेऽपि।
गोस्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः।।9।।

त्वं तारको जिन! कथं भविनां त एव
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः॥10॥

यस्मिन् हर-प्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः,
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन?॥11॥

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणपि प्रपन्नास्,
त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः?।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त! महतां यदि वा प्रभावः॥12॥

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्मचौराः?
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी?॥13॥

त्वां योगिनो जिन! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज-कोषदेशे।
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभवि पदं ननु कर्णिकायाः॥14॥

ध्यानाज्जिनेश! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति।
तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः॥15॥

अन्तः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्?
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि,
यद् विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः॥16॥

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं,
किं नाम नो विषविकारमपाकरोति?॥17॥

त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो! हरिहरादिधिया प्रपन्नाः।
किं काचकामलिभिरीश! सितोऽपि शंखो,
नो गृह्यते विविध-वर्णविपर्ययेण?॥18॥

धर्मोपदेशसमये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः?॥19॥

चित्रं विभो! कथमवाङ् मुखवृन्तमेव,
विष्वक् पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः?
त्वद्-गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश!
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि॥20॥

स्थाने गंभीरहृदयोदधि-संभवायाः,
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वा यतः परमसम्मदसंगभाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाऽप्यजरामरत्वम्॥21॥

स्वामिन्! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः।
येऽस्मै नहिं विदधते मुनि-पुंगवाय,
ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्ध-भावाः।।22।।

श्यामं गंभीर -गिरमुज्ज्वलहेमरत्न-
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्-
चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम्।।23।।

उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन,
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर् बभूव!
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग!
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि?।।24।।

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृत्तिपुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव! जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते।।25।।

उद्द्योतितेषु भवता भवुनेषु नाथ!
ताराविन्तो विधुरयं विहिताधिकारः।
मुक्ताकलाप-कलितोल्लसितातपत्र-
व्याजात् त्रिधा धृततनुर्ध्रुवमभ्युपेतः।।26।।

स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसामिव-सञ्चयेन।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन,
साल-त्रयेण भगवन्नभितो विभासि।।27।।

दिव्यस्त्रजो जिन! नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव॥28॥

त्वं नाथ! जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि,
यत् तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठलग्नान्।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो! यदसि कर्मविपाकशून्यः॥29॥

विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्वं,
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश!
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतुः॥30॥

प्राग्भार-संभृत-नभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायाऽपि तैस्तव न नाथ! हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा॥31॥

यद्-गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्र-भीमं,
भ्रश्यत्-तडिन्मुसलमांसल-घोरधारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन! दुस्तरवारिकृत्यम्॥32॥

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्यमुण्ड–
प्रालम्बभृद्-भयद-वक्त्र-विनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत् प्रतिभवं भव दुःखहेतुः॥33॥

धन्यास्त एव भुवनाधिप! ये त्रिसन्ध्य-
माराधयन्ति विधिवद्-विधुतान्यकृत्याः।
भक्त्योल्लसत्-पुलक-पक्ष्मल-देहदेशाः,
पादद्वयं तव विभो! भुवि जन्मभाजः।।34।।

अस्मिन्नपार-भववारिनिधौ मुनीश!
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे,
किं वा विपद्-विषधरी सविधं समेति?।।35।।

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव!
मन्ये मया महितमीहितदान-दक्षम्।
तेनेह जन्मनि मुनीश! पराभवानां,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम्।।36।।

नूनं न मोह-तिमिरावृत-लोचनेन,
पूर्वं विभो! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्-प्रबन्ध - गतयः कथमन्यथैते।।37।।

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव! दुःखपात्रं,
यस्मात्-क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः।।38।।

त्वं नाथ! दुःखिजन-वत्सल! हे शरण्य!
कारुण्य-पुण्यवसते! वशिनां वरेण्य!
भक्त्या नते मयि महेश! दयां विधाय,
दुःखांकुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि।।39।।

निस्संख्यसारशरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादितरिपु-प्रथितावदातम्।
त्वपाद-पंकजमपि प्रणिधानवन्ध्यो,
वध्योऽस्मि चेद् भुवन-पावन! हा! हतोऽस्मि।।40।।

देवेन्द्रवन्द्य! विदिताखिलवस्तुसार!
संसार-तारक! विभो भुवनाधिनाथ!
त्रायस्व देव! करुणाह्रद! मां पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बुराशेः।।41।।

यद्यस्ति-नाथ! भवदंघ्रि-सरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-संचितायाः।
तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य! भूयाः,
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि।।42।।

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र!
सान्द्रोल्लसत्पुलककंचुकितांगभागाः।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुजबद्धलक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो! रचयन्ति भव्याः।।43।।

जननयन-कुमुदचन्द्र! प्रभास्वराः स्वर्ग-सम्पदो भुक्त्वा।
ते विगलित-मलनिचया, अचिरान्-मोक्षं प्रपद्यन्ते।।44।।

०००

श्री वर्द्धमान भक्तामर-स्तोत्रम्

भक्तामरप्रवरमौलिकमणिव्रजेषु,
ज्योतिः प्रभूतसलिलेषु सरोवरेषु।
चेतोऽलिमंजु विकसत्कमलायमानं,
श्रीवर्द्धमानचरणं शरणं व्रजामि॥1॥

आनन्द नन्दन वनं सवनं सुखानां,
सद्भावनं शिवपदस्य परं निदानम्।
संसारपारकरणं करणं गुणानां,
नाथ ! त्वदीयचरण-शरणं प्रपद्ये॥2॥

सिदौषधं सकलसिद्धिपदं समृद्धं,
शुद्धं विशुद्धसुखदं च गुणैः समिद्धम्।
ज्ञानप्रदं शरणदं विगताघवृन्दं,
ध्यानास्पदं शिवपदं शिवदं प्रणौमि॥3॥

बालो विवेकविकलो निजवालभावा,
दाकाशमानमपि कर्तुमिव प्रवृत्तः।
ज्ञानाद्यनन्तगुणवर्णनकर्तुकामः,
कामं भवामि करुणाकर ! ते पुरस्तात्॥4॥

स्पर्शो मणिर्नयति चेन्निजसन्निधानात्,
लोहं हिरण्यपदवीमिति नात्र चित्रम्।
किन्तु त्वदीयमनुचिन्तनमेव दूरात्,
साम्यं तनोति तव सिद्धिपदे स्थितस्य॥5॥

कुन्देन्दुहाररमणीयगुणान् जिनेन्द्र !
वक्तुं न पारयति कोऽपि कदापि लोके।
कः स्यात् समस्तभुवनस्थितजीवराशे,
रेकैकजीवगणनाकरणे समर्थः ?॥6॥

शक्त्या विनाऽपि मुनिनाथ ! भवद्गुणानां
गाने समुद्यतमतिर्नहि लज्जतोऽस्मि।
मार्गेण येन करुडस्य गतिः प्रसिद्धा,
तेनैव किं न विहगस्य शिशुः प्रयाति ?॥7॥

त्वद्वाक्सुधासुरुचिरेव विभो ! बलान्मां,
वक्तुं प्रवर्त्तयति नाथ ! भवद्गुणानाम्।
यद् वर्द्धते जलनिधिस्तरलैस्तरंगैस,
तत्रास्ति चन्द्रकिरणोदय एव हेतुः॥8॥

अज्ञानमोहनिकरं भगवन् ! हृदिस्थं,
हर्तुं प्रभु प्रवचनं भवदीयमेव।
गाढस्थिरं चिरतरं तिमिरं दरीस्थं,
हर्तुं प्रभुः सुरुचिरा रुचिरेव नान्यत्॥9॥

वाक्यं प्रमाणनयरीतिगुणैर्विहीनै,
निर्भूषणं यदपि वोधिद ! मामकीनम्।
स्यादेव देवनरलोकहिताय युष्मत्,
संगाद् यथा भवति शुक्तिगतोदबिन्दुः॥10॥

आस्तां तव स्तुतिकथा मनसोऽप्यगम्या,
नामापि ते त्वयि परं कुरुतेऽनुरागम्।
जम्बीरमस्तु खलु दूरतरेऽपि देव !
नामापि तस्य कुरुते रसनां रसालाम्॥11॥

नानामणिप्रचुरकांचनरत्नरम्यम्,
स्वीयं प्रयच्छति पदं जनकः सुताय।
त्वद्ध्यानमेव जिनदेव ! पदं त्वदीयं,
भव्याय नित्यसुखदं प्रकटीकरोति॥12॥

ज्ञानाद्यनन्तगुणगौरवपूर्ण-सिन्धुं,
वन्धुं भवन्तमपहाय परं क इच्छेत्?
प्राज्यं प्रलभ्य भुवनत्रितयस्य राज्यं,
कः कामयेत किल किंकरतामबुद्धिः॥13॥

त्वद्गात्रतां परिणताः परमाणवोऽपि,
सर्वोत्तमा निरुपमाः सुषमा भवन्ति।
लब्ध्वा शरण्य ! शरणं चरणं जनास्ते,
सिद्धा भवेयुरिते नाथ ! किमत्र चित्रम्॥14॥

कश्चण्डकौशिकसमं भवसिन्धुपारं,
नेता सुदर्शनसमं च जगत्त्रयेऽपि।
हे नाथ ! तत् कथय ते चरणाम्बुजस्य,
येनोपमा गुणलवेन घटेत लोके॥15॥

लोकोत्तरं सकलमंगलमोदकन्दं,
स्यन्दं वचोऽमृतरसस्य जगत्यमन्दम्।
स्वर्गापवर्गसुखदं भवदास्यचन्द्र,
दृष्ट्वा मुदं भजति भव्यचकोरवृन्दम्॥16॥

भ्रान्त्याऽपि भद्रमुदितं भवदीयनाम्,
सिद्धेर्विधायि भगवन्! सुकृतानि सूते।
अज्ञानतोपि पतितं सितखण्डखण्डं,
धत्ते मुखे मधुरिमाणमखण्डमेव॥17॥

योो मस्तकं नमयते जिन ! तेंऽघ्रिपद्मे,
सर्वसद्धिनिचयः श्रयते तमेव।
तीर्थंकरः शुभकरः प्रविभूय सोऽयं,
स्थानं प्रयाति परमं ध्रुवनित्यशुद्धम्॥18॥

पृच्छामि नावमधुना मुनिनाथ ! नित्यं,
प्राप्ता त्वया तरणतारणता हि कस्मात्।
सा नोत्तरं वितनुते त्वमपि प्रयातस्,
तद् ब्रूहि कोऽस्ति परितोषकरस्तृतीयः॥19॥

पीयूषमत्र निजजीवनसारहेतुं,
पीत्वाऽऽप्नुवन्ति मनुजास्तनुमात्रर क्षाम्।
स्याद्वादसुन्दररुचं भवतस्तु वाचं,
पीत्वा प्रयान्ति सुतरामजरामरत्वम्॥20॥

चक्री यथा विपुलचक्रबलादखण्डं,
भूमण्डलं प्रभुतया समलंकरोति।
रत्नत्रयेण मुनिनाथ ! तथा पृथिव्यां,
जैनेन्द्र-शासनपरान् भविनो विधत्से॥21॥

कालस्य मानमखिलं शशिभास्कराभ्यां,
पक्षद्वयेन गगने गमनं खगानाम्।
तद्वद् भवानपि भवाद् भगवन् जनानां,
ज्ञानक्रियोभयवशादिह मुक्तिमाह॥22॥

ज्ञानादिकं हृदिगतं विषमं विषाक्तम्,
संसारकानन परिभ्रमणैकहेतुम्।
मिथ्यात्वदोषमखिलं मलिनस्वरूपम्,
क्षिप्रं प्रणाशयति ते विमलः प्रभावः॥23॥

प्रामादिका विषयमोहवशं गता ये,
कर्त्तव्यमार्गविमुखाः कुमतिप्रसक्ताः।
अज्ञानिनो विषयघूर्णितमानसाश्च,
सन्मार्गमानयति तान् भवतः प्रभावः।।24।।

कल्पद्रुमानिव गुणांस्तव चन्द्रशुभ्रान्,
चिन्तामणीनिव समीहितकामपूर्णान्।
ज्ञानादिकान् जनमनः परितोषहेतून्,
संस्मृत्य को न परितोषमुपैति भव्यः।।25।।

चिन्तामणिः सुरतरुर्निधयस्तथैव,
तेभ्यः सुखं क्षणिकनश्वरमाप्नुवन्ति।
त्वत्सेविनो भविजना ध्रुवनित्यसौख्यं,
तस्मादितोऽप्यधिकतां समुपैषि नाथ!।।26।।

ध्वान्तन याति निकटे रविमण्डलस्य,
चिन्तामणेश्च सविधे खलु दुःखलेशः।
रागादिदोषनिचया भगवंस्तथैव,
नो यान्ति किंचिदपि देव ! भवत्समीपे।।27।।

शीतांशुमण्डल जलामृतफेनपुंजै,
प्रोत्फुल्लितेप्सितसुपुष्पविशालकुंजम्।।
धर्मं निरुप्य परमं खलु दुःखभंजं,
नित्यं विकासयसिभव्यद ! भव्यकंजम्।।28।।

दूरस्थितोऽपि सितरश्मिरलं स्वकीयैः,
शुभ्रैर्विकासिकिरणैः सुविकासभावम्।
अन्तर्गतं वितनुते किल कैरवाणां,
तद्वज्जिनेन्द्र! गुणराशिरयं जनानाम्।।29।।

शीतांशुरश्मिनिक प्रसरानुषंगाद,
यच्चन्द्रकान्तमणयः परितो द्रवन्ति।
तद्वत्त्वदीयमहिमश्रवणेन भव्याः,
शान्ताः प्रवृद्धकरुणा द्रविता भवन्ति।।30।।

दुःखप्रधानशिववर्जितहीयमाने,
काले सदा विषयजालमहाकराले।
भव्या भवत्प्रवचनं शिवदं जिनेन्द्र,
पीत्वाऽऽत्मशान्तिमुपयान्ति नितान्तशुद्धाम्।।31।।

षट्कायनाथ ! मुनिनाथ ! गुणाधिनाथ !
देवाधिनाथ! भविनाथ! शुभैकनाथ!
अस्मान् प्रवोधय जिनाधिप ! दूरतोऽपि,
किं नो स्मितानि कुरुते कुमुदानि चन्द्रः।।32।।

वृक्षोऽपि शोकरहितो भवदाश्रयेण,
जातस्ततः स यदशोक इति प्रसिद्धः।
भव्याः पुनर्जिन ! भवच्चरणाश्रयेण,
किं नामकर्मरहिता न भवन्त्यशोकाः।।33।।

सिंहासने मणिमये परिभासमानं,
नाथं निरीक्ष्य किल सन्दिहते विधिज्ञाः।
इन्दुः किमेष ? नहि यत् स कलंकरंकुः,
किं वा रविर्न स तु चण्डतरप्रकाशः!।।34।।

पुंजस्त्विषामितिपुरा निरणायिपश्चाद्,
व्यक्ताकृतिस्तनुधरोऽयमिति प्रबुद्धैः।
भव्यैः पुमानिति पुनः प्रशमस्वभावः,
कारुण्यराशिरिति वीरजिनः क्रमेण।।35।।

देवैरचित्तकुसुमप्रकरस्य वृष्ट्या,
दिङ्मण्डलं सुरभितं भवतोऽतिशेषात्।
स्यद्वादचारुरचनावचनावलीनां,
वृष्ट्या भवन्ति भविनः प्रशमे निमग्नाः॥36॥

लोकोत्तरा सकलजीववचोविलास,
पीयूषवत्परिणता भवदीय-भाषा।
सर्वद्धिसिद्धगुणवृद्धिविधानदक्षा,
साक्षात्तनोति कुशलं सकलं सुलक्षा॥37॥

गोक्षीर-नीर-शशि-कुन्द-तुषार-हार,
शुक्लैर्वियद्विलसितैः शुभचामरौघैः।
ध्यान सितं तव विभो ! विनिवेद्यते यत्,
सर्वज्ञता तदनु कर्मसमूलनाशः॥38॥

आखण्डलैरवनिमण्डलमागतैस्तैर्,
भामण्डलं तव नुतै मुनिमण्डलैश्च।
मोहान्धकारपरिहारंकरं जिनेन्द्रे !
तुल्यं कथं भवति तद् रविमण्डलेन॥39॥

यत्कर्मवृन्दसुभटं विकटं विजेता,
लोकत्रय-प्रभुरसावतिशेषधारी।
तस्माज्जिनेन्द्रसरणिं शरणीकुरुध्वं,
भव्या! इति ध्वनति खे किल दुन्दुभिस्ते॥40॥

अत्युज्ज्वलं विजितशारदचन्द्रबिम्बं,
सम्मोदकं सकलमंगलमंजुकन्दम्।
छत्रत्रयं तव निवेदयते जिनेन्द्र !
रत्नत्रयं प्रभुपदं शिवदं ददाति॥41॥

यत्र त्वदीयपदपंकजसन्निधानं,
सन्धानभूमिरसमाऽपि समा समन्तात्।
सर्वर्त्तवश्च सुखदा विलसन्ति लोका,
मन्ये नु कल्पतरुरेव भवत्पदाब्जम्।।42।।

दिव्यो ध्वनिर्गुणगणश्च यशोऽपि दिव्य,
दिव्याऽपि भवसमता प्रभुताऽपि दिव्या।
तस्माद् विभो ! क्व तुलना भुवनत्रयेऽपि,
ज्योतिर्गणाः किमिह भानुसमा विभान्ति।।43।।

दिव्यं प्रभावमवलोक्य सुरादयस्ते,
पीयूषसारवचनानि निशम्य सम्यक्।
आनन्दवारिधित रंगनिमग्नचित्तास्,
त्वद्वर्णनाक्षमताया प्रणमन्ति भावात्।।44।।

तुभ्यं नमः सकलमंगलकारकाय,
तुभ्यं नमः सकलनिर्वृतिदायकाय।
तुभ्यं नमः सकलकर्मविनाशकाय,
तुभ्यं नमः सकलतत्त्वनिरूपकाय।।45।।

तुभ्यं नमः सकलजीवदयापराय,
तुभ्यं नमः शिवदशासनभास्कराय।
तुभ्यं नमः सकललोकशुभंकराय,
तुभ्यं नमः सततमस्तु जिनेश्वराय।।46।।

रक्षः पिशाचनिकरैरदयोपसृष्टं,
दुर्वृत्त दुष्ट खलसृष्टविसृष्टमुष्टम्।
दारिद्र्यदुःखदजालविशालकष्टं,
नष्टं भवत्यखिलमाशु भवत्प्रभावात्।।47।।

चौरारि-सिंह-गज-पन्नग-दुष्ट-दाव,
हिंस्त्रप्रचार-खलबन्धनदुर्ग-भूमौ।
सर्वं भयं भयकरं प्रणिहन्ति नाथ !
त्वद् ध्यानमात्रमखिलं भुनत्रयेऽस्मिन्।।48।।

सिंहोरग-प्रखरसूकर- हिंस्त्रजालैर्,
व्यप्ताऽटवी विकटलुण्टक-कण्टनालैः।
सर्वर्तु-पुष्प-फल-पल्लवशोभमाना,
सानन्दनं भवति ते स्मरणाज्जिनेन्द्र!।।49।।

घोरातिघोरविकटे सुभटेऽतिकष्टे,
भ्रष्टे बले विविधदुःखशतैर्विशिष्टे।
शस्त्राहतिप्रविचलद्रुधिरप्रवृद्धे,
युद्धे तनोति तव-नाम विशुद्धशान्तिम्।।50।।

सर्वर्द्धि-सिद्धिदमिदं परमं पवित्रं,
स्तोत्रं च यः पठति वीरजिनेश्वरस्य।
चिन्तामणिः सुरतरुः सकलार्थसिद्धिः,
संसेवितुम् तमनुकूलयितुम् समेति।।51।।

श्रीवर्द्धमान-शुभनामगुणानुबद्धां,
शुद्धां विशुद्धगुणपुष्पसुकीर्तिगन्धाम्।
यो घासिलालरचितां स्तुतिमंजुमालां,
कण्ठे विभर्ति खलु तं समुपैति लक्ष्मीः।।52।।

ooo

श्री परमात्म-द्वात्रिंशिका

(आचार्य अमितगति)

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थ्यभावं विपरीत-वृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव!॥1॥

शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्त दोषम्।
जिनेन्द्र! कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममाऽस्तु शक्तिः॥2॥

दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा।
निराकृताशेष ममत्वबुद्धेः, समं मनो मेऽस्तु सदाऽपि नाथ॥3॥

मुनीश! लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निखाताविव बिम्बिताविव।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमो धुनानौ हृदि दीपकाविव॥4॥

एकेन्द्रियाद्या यदि देव! देहिनः, प्रमादतः संचरता यतस्ततः।
क्षता विभिन्ना मलिता[1] निपीडिता, ममाऽस्तुमिथ्या दुरनुष्ठितं तदा॥5॥

विमुक्तिमार्ग - प्रतिकूल - वर्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया।
चारित्र - शुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं विभो!॥6॥

विनिन्दनालोचन - गर्हणैरहं, मनोवचःकाय - कषायनिर्मितम्।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं, भिषग् विषं मंत्रगुणैरिवाखिलम्॥7॥

अतिक्रमं[2] यं यमपि व्यतिक्रमं, जिनातिचारं स्वचरित्र - कर्मणः।
व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये॥8॥

क्षतिं मनःशुद्धि - विधेरतिक्रमं व्यतिक्रमं शीलवृतेर्विलंघनम्।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम्॥9॥

---

1. 'मलता' पाठ भी है
2. 'यं विमतेर्व्यतिक्रम' पाठ भी है

यदर्थमात्रा - पद - वाक्यहीनं, मया प्रमादाद् यदि किंचनोक्तम्।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवल-बोधलब्धिम्॥10॥

बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि!॥11॥

यः स्मर्यते सर्व - मुनीन्द्र-वृन्दैर्, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः।
यो गीयते वेद - पुराण शास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥12॥

यो दर्शन - ज्ञान - सुखस्वभावः, समस्त संसार - विकार - बाह्यः।
समाधिगम्यः परमात्म - संज्ञः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥13॥

निषूदते यो भवदुःखजालं, निरीक्षते यो जगदन्तरालम्।
योऽन्तर्गतो योगि - निरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥14॥

विमुक्तिमार्ग - प्रतिपादको यो, य जन्म-मृत्युव्यसनाद् व्यतीतः।
त्रिलोकलोकी सकलोऽकलंकः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥15॥

क्रोडीकृताशेष - शरीरि -वर्गा, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः।
निरीन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥16॥

यो व्यापको विश्वजनीन - वृत्तिः, सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममाऽस्ताम्॥17॥

न स्पृश्यते कर्मकलंकदोषैर्, यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः।
निरंजनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥18॥

विभासते यत्र मरीचिमालि - न्याविद्यमाने भुवनावभासि।
स्वात्मस्थितं बोधमय - प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥19॥

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम्।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥20॥

येन क्षता मन्मथ - मान - मूर्छा - विषाद - निद्रा - भय - शोक - चिन्ताः।
क्षय्योऽनलेनेव तरु- प्रपंचस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये॥21॥

न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी, विधानतो नो फलको विनिर्मितः।
यतो निरस्ताक्ष - कषायविद्विषः, सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः।।22।।

न संस्तरो भद्र! समाधि-साधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम्।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम्।।23।।

न सन्ति बाह्या मम केचनार्था, भवामि तेषां न कदाचनाऽहम्।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र! मुक्त्यै।।24।।

आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानस्, त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र, स्थितिऽपि साधुर्लभते समाधिम्।।25।।

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः।।26।।

यस्यास्ति नैक्यं वपुषाऽपि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र - मित्रैः?
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतो हि तिष्ठन्ति शरीर-मध्ये।।27।।

संयोगतो दु:खमनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी।
ततस्त्रिधाऽसौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृति मात्मनीनाम्।।28।।

सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं, संसार-कान्तार - निपातहेतुम्।
विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे।।29।।

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा।।30।।

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्याऽपि ददाति किंचन।
विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुंच शेमुषीम्।।31।।

यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः, सर्वविविक्तौ भृशमनवद्यः।
शाश्वदधीतो मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभववरं ते।।32।।

ooo

श्री परमानन्द-पंचविंशतिका

परमानन्द - संयुक्तं, निर्विकारं निरामयम्।
ध्यान हीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम्॥1॥

अनन्त सुख सम्पन्नं, ज्ञानामृत पयोधरम्।
अनन्त वीर्य सम्पन्नं, दर्शनं परमात्मनः॥2॥

निर्विकारं निराधारं, सर्वसंग विवर्जितम्।
परमानन्द - संपन्नं, शुद्ध चैतन्य - लक्षणम्॥3॥

उत्तमाऽध्यात्म चिन्ता च, मोह चिन्ता च मध्यमा।
अधमा काम चिन्ता च, परचिन्ताऽधमाधमा॥4॥

निर्विकल्प समुत्पन्नं, ज्ञानमेव सुधारसम्।
विवेक-मंजलिं कृत्वा, तं पिबन्ति तपस्विनः॥5॥

सदानंदमयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः।
स सेवते निजात्मानं, परमानन्द-कारणम्॥6॥

नलिन्यां च यथा नीरं, भिन्नं तिष्ठति सर्वदा।
अयमात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति सर्वदा॥7॥

द्रव्य कर्म-विनिर्मुक्तं, भावकर्म - विवर्जितम्।
नोकर्म-रहितं विद्धि, निश्चयेन चिदात्मनम्॥8॥

अनन्त ब्रह्मणो रूपं, निज देहे व्यवस्थितम्।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम्॥9॥

तद् ध्यानं क्रियते भव्यैर्, येन कर्म विलीयते।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्-चमत्कार लक्षणम्॥10॥

चिदानंद मयं शुद्धं, निराकारं निरामयम्।
अनंत सुख सम्पन्नं, सर्वसंग विवर्जितम्॥11॥

लोकमात्र प्रमाणो हि, निश्चये न हि संशयः।
व्यवहारे देह मात्रं, कथयन्ति मुनीश्वराः॥12॥

यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षणं गत विभ्रमः।
स्वस्थ चित्तं स्थिरीभूतं, निर्विकल्पं समाधिना॥13॥

स एव परमं ब्रह्म, स एव जिन पुंगवः।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः॥14॥

स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मकम्॥15॥

स एव सर्व कल्याणं, स एव सुख भाजनम्।
स एव शुद्ध चिद्रूपं, स एव परमं शिवम्॥16॥

स एव ज्ञानरूपो हि, स एवात्मा न चाऽपरः।
स एव परमा शान्तिः, स एव भव तारकः॥17॥

स एव परमानन्दः, स एव सुखदायकः।
स एव घन-चैतन्यं, स एव गुण-सागरः॥18॥

परमाह्लाद संपन्नं, राग - द्वेष विवर्जितम्।
सोऽहं तु देह मध्यस्थो, यो जानाति स पण्डितः॥19॥

आकार - रहितं शुद्धं, स्व स्वरूपे व्यवस्थितम्।
सिद्धमष्ट गुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनम्॥20॥

तत्समं तु निजात्मानं, यो जानाति स पण्डितः।
सहजानंद - चैतन्यं, प्रकाशयति महीयसे॥21॥

पाषाणेषु यथा हेमं, दुग्ध मध्ये यथा घृतम्।
तिल मध्ये यथा तैलं, देह-मध्ये तथा शिवः॥22॥

काष्ठ मध्ये यथा वह्निः, शक्ति रूपेण तिष्ठति।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः।।23।।

आनन्द रूपं परमात्म तत्त्वं, समस्त-संकल्प विकल्प मुक्तम्।
स्वभाव लीना निवसन्ति नित्यं, जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम्।।24।।

ये धर्मशीला मुनयः प्रधानास्, ते दुःखहीना नियतं भवन्ति।
संप्राप्य शीघ्रं परमात्म तत्त्वं, व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेक मध्ये।।25।।

○○○

श्री जिन-पंजर स्तोत्र

(आचार्य श्री कमलप्रभ)

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं अर्हद्भ्यो नमो नमः।
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं सिद्धेभ्यो नमो नमः।
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं आचार्येभ्यो नमो नमः।
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं उपाध्यायेभ्यो नमो नमः।
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं गौतमस्वामिप्रमुखसर्वसाधुभ्यो नमो नमः।।1।।

एष पंचनमस्कारः, सर्व-पाप-क्षयंकरः।
मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं भवति मंगलम्।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीं जये विजये, अर्हं परमात्मने नमः।
कमलप्रभ-सूरीन्द्रो, भाषते जिनपंजरम्।।3।।

एकभक्तोपवासेन, त्रिकालं यः पठेदिदम्।
मनोभिलषितं सर्वं, फलं स लभते ध्रुवम्।।4।।

भू-शय्या ब्रह्मचर्येण, क्रोध-लोभ-विवर्जितः।
देवताग्रे पवित्रात्मा, षण्मासै - र्लभते फलम्।।5।।

अर्हन्तं स्थापयेन्मूर्ध्नि, सिद्धं चक्षु - र्ललाटके।
आचार्यं श्रोत्रयोर्मध्ये, उपाध्यायं तु नासिके॥6॥

साधुवृन्दं मुखस्याग्रे, मनःशुद्धिं विधाय च।
सूर्य-चन्द्र-निरोधेन, सुधीः सर्वार्थ-सिद्धये॥7॥

दक्षिणे मदन - द्वेषी, वामपार्श्वे स्थितो जिनः।
अंग - सन्धिषु सर्वज्ञः, परमेष्ठी शिवंकरः॥8॥

पूर्वाशां च जिनो रक्षेद्, आग्नेयीं विजितेन्द्रियः।
दक्षिणाशां परं ब्रह्म, नैर्ऋतीं च त्रिकालवित्॥9॥

पश्चिमाशां जगन्नाथो, वायव्यां परमेश्वरः।
उत्तरां तीर्थकृत् सर्वामीशानेऽपि निरञ्जनः॥10॥

पातालं भगवानर्हन्नाकाशं पुरुषोत्तमः।
रोहिणी-प्रमुखा देव्यो, रक्षन्तु सकलं कुलम्॥11॥

ऋषभो मस्तकं रक्षेद्, अजितोऽपि विलोचने।
सम्भवः कर्णयुगलेऽभिनन्दनस्तु नासिके॥12॥

ओष्ठौ श्रीसुमती रक्षेद्, दन्तान् पद्मप्रभो विभुः।
जिह्वां सुपार्श्वदेवोऽयं तालु चन्द्रप्रभाऽभिधः॥13॥

कण्ठं श्री सुविधी रक्षेद्, हृदयं जिनशीतलः।
श्रेयांसो बाहु-युगलं, वासुपूज्यः कर-द्वयम्॥14॥

अगुंलीर्विमलो रक्षेद्, अनन्तोऽसौ नखानपि।
श्रीधर्मोऽप्युदरास्थीनि, श्रीशान्ति र्नाभिमण्डलम्॥15॥

श्रीकुन्थुर्गुह्यकं रक्षेद् अरो लोम-कटी-तटम्।
मल्लिरुरुपृष्ठमंशं, पिण्डिकां मुनिसुव्रतः॥16॥

पादांगुली - र्नमी रक्षेत् श्रीनेमिश्चरणद्वयम्।
श्री पार्श्वनाथः सर्वांगं वर्धमानं चिदात्मकम्।।17।।

पृथ्वी-जल-तेजस्क-वाय्वाकाशमयं जगत्।
रक्षेदशेषपापेभ्यो, वीतरागो निरंजनः।।18।।

राजद्वारे श्मशाने च, संग्रामे शत्रु-संकटे।
व्याघ्र-चौराग्नि-सर्पादि-भूत-प्रेत-भयाश्रिते।।19।।

अकाले मरणे प्राप्ते, दारिद्र्यापत्समाश्रिते।
अपुत्रत्वे महादुःखे, मूर्खत्वे रोग - पीड़िते।।20।।

डाकिनी-शाकिनी-ग्रस्ते, महाग्रह-गणार्दिते।
नद्युत्तारे अध्ववैषम्ये, व्यसने चापदि स्मरेत्।।21।।

प्रातरेव समुत्थाय यः स्मरेज्जिनपञ्जरम्।
तस्य किंचिद् भयं नास्ति, लभते सुखसम्पदः।।22।।

जिनपंजरनामेदं, यः स्मरेदनुवासरम्।
कमलप्रभसूरीन्द्र-श्रियं स लभते नरः।।23।।

प्रातः समुत्थाय पठेत् कृतज्ञो, यः स्तोत्रमेतज्जिन-पंजरस्य।
आसादयेत् सः कमल-प्रभाख्यो, लक्ष्मीं मनोवाञ्छितपूरणाय।।24।।

श्री रुद्रपल्लीय-वरेण्य-गच्छे, देवप्रभाचार्य-पदाब्ज-हंसः।
वादीन्द्र चूडामणिरेष जैनो, जीयादसौ श्रीकमल-प्रभाख्यः।।25।।

यह अभेद्य कवच स्तोत्र है। रक्षा के लिए इस स्तोत्र का और कोई मुकाबला नहीं है। यह प्रमाणित, अनुभूत एवं सदा फलदायी स्तोत्र है। इससे पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण, ऊपर-नीचे चारों तरफ से सर्वथा सुरक्षा होती है। दिशाओं का क्रम क्लोकवाइज होने से यह बहुत जल्दी फल देता है। क्षेत्र शुद्धि, दिशा शुद्धि और काल शुद्धि का अचूक उपाय इसमें गर्भित है।

चौबीस तीर्थंकरों की मस्तिष्क से पैर तक प्राण-प्रतिष्ठा कर दैहिक परमाणु और आत्म-प्रदेशों में निर्मलता का प्रारंभ होता है। वायुमण्डल विशुद्ध होता है। दूषण एवं दुरितों का नाश होता है।

विधि–कार्तिक कृष्णा तेरस, चौदस और अमावस्या के दिन तेला करके स्तोत्र का 250 बार पाठ करके इसे सिद्ध किया जाता है। प्रतिदिन तीन बार पाठ करने से सुरक्षा होती है। विशेष परिस्थिति में जाप करने हेतु एकाशना करके तीन बार पाठ करना चाहिए। किन्हीं बाह्य उपद्रवों के शमन करते समय साधक स्वयं अपने लिये पहले स्वयं पर कवच स्तोत्र द्वारा तीर्थंकर प्रतिष्ठा अवश्य करनी चाहिए और बाद में ही अन्य पर प्रयोग करें!

○○○

श्री वज्रपंजर-स्तोत्र

परमेष्ठिनमस्कारं, सारं नवपदात्कम्।
आत्मरक्षाकरं वज्र-पञ्जराभं स्मराम्यहम्॥1॥

ॐ नमो अरिहंताणं, शिरस्कं शिरसि स्थितम्।
ॐ नमो सव्वसिद्धाणं, मुखे मुखपटं वरम्॥2॥

ॐ नमो आयरियाणं, अंगरक्षाऽतिशायिनी।
ॐ नमो उवज्झायाणं, आयुधं हस्तयो-र्दृढम्॥3॥

ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, मोचके पादयोः शुभे।
एसो पंच-नमोक्कारो, शिला वज्रमयी तले॥4॥

सव्वपाव-प्पणासणो, वप्रो वज्रमयो बहिः।
मंगलाणं च सव्वेसिं, खादिराङ्गारखातिका॥5॥

स्वाहान्तं च पदं ज्ञेयं, पढमं हवइ मंगलं।
वप्रोपरि वज्रमयं, पिधानं देहरक्षणे॥6॥

महाप्रभावा रक्षेयं, क्षुद्रोपद्रव-नाशिनी।
परमेष्ठि - पदोद्भूता, कथिता पूर्वसूरिभिः॥7॥

यश्चैवं कुरुते रक्षां, परमेष्ठि - पदैः सदा।
तस्य न स्याद् भयं व्याधिराधिश्चापि कदाचन॥8॥

OOO

नमस्कार स्तवन

नम्रामरेश्वर-किरीट-निविष्टशोण-
रत्नप्रभा-पटलपाटलिताङ्घ्रिपीठाः।
तीर्थेश्वराः शिवपुरी-पथसार्थवाहा,
निःशेषवस्तुपरमार्थविदो जयन्ति॥1॥

लोकाग्रभागभवना भवभीति-मुक्ता,
ज्ञानावलोकित-समस्त-पदार्थसार्थाः।
स्वाभाविकस्थिरविशिष्टसुखैः समृद्धाः,
सिद्धा विलीनघनकर्ममला . जयन्ति॥2॥

आचारपंचकसमाचरण-प्रवीणाः,
सर्वज्ञ-शासन-धुरैकधुरंधरा ये।
ते सूरयो दमितदुर्दमवादिवृन्दा,
विश्वोपकार-करणप्रवणा जयन्ति॥3॥

सूत्रं यतीनति-पटु-फुट-युक्तियुक्त
युक्तिप्रमाण-नयभंगगमैर्गभीरम्।

ये पाठयन्ति वरसूरिपदस्य योग्यास्,
ते वाचकाश्चतुरचारु-गिरो जयन्ति॥4॥

सिद्धांगनासुखसमागम-बद्धवाञ्छाः,
संसार-सागर-समुत्तरणैक-चित्ताः।
ज्ञानादिभूषण-विभूषित-देहभागा,
रागादिघातरतयो यतयो जयन्ति॥॥5॥

○○○

श्री गौतम स्वामी स्तोत्र

(आचार्य जिनप्रभ)

ॐ नमस्त्रिजगन्नेतुर् - वीरस्याग्रिमसूनवे।
समग्रलब्धिमाणिक्य - रोहणायेन्द्रभूतये॥1॥

पादाम्भोजं भगवतो गौतमस्य नमस्यताम्।
वशीभवन्ति त्रैलोक्यसम्पदो विगतापदः॥2॥

तव सिद्धस्य बुद्धस्य पादाम्भोजरजः कणः।
पिपर्ति कल्पशाखीव कामितानि तनूमताम्॥3॥

श्रीगौतमाक्षीणमहानसस्य तव कीर्तनात्।
सुवर्णपुष्पां पृथिवीमुच्चिनोति नरश्चिरम्॥4॥

अतिशेषेतरां धाम्ना भगवन्! भास्करीं श्रियम्।
अतिसौम्यतया चान्द्रीमहो ते भीमकान्तता॥5॥

विजित्य संसारमायाबीजं मोहमहीपतिम्।
नरः स्यान्मुक्तिराजश्रीनायकस्त्वत्प्रसादतः॥6॥

द्वादशांगीविधौ वेधाः श्रीन्द्रादिसुरसेवितः।
अगण्यपुण्यनैपुण्यं तेषां साक्षात्कृतोऽसि यैः॥7॥

नमः स्वाहापतिज्योतिस्तिरस्कारितनुत्विषे।
श्री गौतमगुरो! तुभ्यं वागीशाय महात्मने॥8॥

इति श्री गौतम! स्तोत्रमंत्रं ते स्मरतोऽन्वहम्।
श्री जिनप्रभसूरेस्त्वं! भव सर्वार्थ-सिद्धये॥9॥

ooo

सोलह सती स्तोत्र

आदौ सती सुभद्रा च, पातु पश्चात्तु सुन्दरी।
ततश्चन्दनबाला च, सुलसा च मृगावती॥1॥

राजीमती ततश्चूला, दमयन्ती ततः परम्।
पद्मावती शिवा सीता, ब्राह्मी पुनश्च द्रौपदी॥2॥

कौशल्या च ततः कुन्ती, प्रभावती सती वरा।
सतीनामांक-यन्त्रोऽयं, चतुस्त्रिंशत्समुद्भवः॥3॥

यस्य पार्श्वे सदा यन्त्रो, वर्तते तस्य साम्प्रतम्।
भूरि-निद्रा न चायाति, नायान्ति भूत-प्रेतकाः॥4॥

ध्वजायां नृपतेर्यस्य, यन्त्रोऽयं वर्तते सदा।
तस्य शत्रुभयं नास्ति, संग्रामेऽस्य जयः सदा॥5॥

गृह-द्वारे सदा यस्य, यन्त्रोऽयं ध्रियते वरः।
कार्मणादिक-तन्त्रैश्च, न स्यात् तस्य पराभवः॥6॥

स्तोत्रमेतत् सतीनां सुगुरु-प्रसादात् कृतं मयोद्द्योतमृगाधिपेन।
यः स्तोत्रमेतत् पठति प्रभाते, स प्राप्नुते शं सततं मनुष्यः॥7॥

सोलह सती-यन्त्र

९	१६	२	७
६	३	१३	१२
१५	१०	८	१
४	५	११	१४

०००

श्री रत्नाकर-पंचविंशतिका

(आलोचना)

श्रेयः श्रियां मंगल-केलिसद्म, नरेन्द्र-देवेन्द्र-नताङ्घ्रिपद्म !
सर्वज्ञ ! सर्वातिशय ! प्रधान, चिरं जय ज्ञान-कला-निधान।।1।।

जगत्त्रयाधार ! कृपावतार, दुर्वार-संसार-विकार वैद्य !
श्रीवीतराग ! त्वयि मुग्धभावाद्, विज्ञ ! प्रभो ! विज्ञपयामि किंचित्।।2।।

किं बाललीला कलितो न बालः, पित्रोः पुरो जल्पति निर्विकल्पः?
तथा यथार्थं कथयामि नाथ, निजाशयं सानुशयस्तवाग्रे।।3।।

दत्तं न दानं परिशीलितं च, न शालि शीलं न तपोऽभितप्तम्।
शुभो न भावोऽप्यभवद् भवेऽस्मिन्, विभो ! मया भ्रान्तमहो ! मुधैव।।4।।

दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन-दष्टो, दुष्टेन लोभाख्य-महोरगेण।
ग्रस्तोऽभिमानाजगरेण माया-जालेन बद्धोऽस्मि कथं भजे त्वाम्।।5।।

कृतं मयाऽमुत्र हितं न चेह, लोकेऽपि लोकेश ! सुखं न मेऽभूत।
अस्मादृशां केवलमेव जन्म, जिनेश ! जज्ञे भव-पूरणाय॥6॥

मन्ये मनो यन्न , मनोज्ञवृत्त ! त्वदास्यपीयूष-मयूखलाभात्।
द्रुतं महानन्दरसं कठोर - मस्मादृशां देव ! तदश्मतोऽपि॥7॥

त्वत्तः सुदुष्प्राप्यमिदं मयाप्तं, रत्नत्रयं भूरि-भव-भ्रमेण।
प्रमाद-निद्रावशतो गतं तत्, कस्याग्रतो नायक ! पूत्करोमि ?॥8॥

वैराग्य-रंगः पर-वञ्चनाय, धर्मोपदेशो जन-रञ्जनाय।
वादाय विद्याध्ययनं च मेऽभूत्, कियद् ब्रूवे हास्यकरं स्वमीश !॥9॥

परापवादेन मुखं सदोषं, नेत्रं परस्त्रीजन-वीक्षणेन।
चेतः परापाय-विचिन्तनेन, कृतं भविष्यामि कथं विभोऽहम्॥10॥

विडम्बितं यत् स्मर-घस्मरार्ति, दशावशात् स्वं विषयान्धलेन।
प्रकाशितं तद् भवतो ह्रियैव, सर्वज्ञ ! सर्वं स्वयमेव वेत्सि॥11॥

ध्वस्तोऽन्य-मंत्रैः परमेष्ठि-मंत्रः, कुशास्त्रवाक्यैर् निहतागमोक्तिः।
कर्तुं वृथा कर्म कुदेवसंगा, दवाञ्छि ही नाथ ! मतिभ्रमो मे॥12॥

विमुच्य दृग्लक्ष्यगतं भवन्तं, ध्याता मया मूढधिया हृदन्तः।
कटाक्ष-वक्षोज-गंभीर नाभि, कटीतटीयाः सुदृशां विलासाः॥13॥

लोलेक्षणावक्त्र-निरीक्षणेन, यो मानसे रागलवो विलग्नः।
न शुद्धसिद्धान्त-पयोधि-मध्ये, धौतोऽप्यगात् तारक ! कारणं किम्॥14॥

अंगं न चंगं न गणो गुणानां, न निर्मलः कोऽपि कला-विलासः।
स्फुरत्प्रभा न प्रभुता च काऽपि, तथाऽप्यहंकार-कदर्थितोऽहम्॥15॥

आयुर्गलत्याशु न पापबुद्धिर्, गतं वयो नो विषयाभिलाषः।
यत्नश्च भैषज्य-विधौ न धर्मे स्वामिन् ! महामोह-विडम्बना मे॥16॥

नात्मा न पुण्यं न भवो न पापं, मया विटानां कटुगीरपीयम्।
नाधारि कर्णे त्वयि केवलार्के, परिस्फुटे सत्यपि देव ! धिङ् माम्।।17।।

न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधु-धर्मः।
लब्ध्वाऽपि मानुष्यमिदं समस्तं, कृतं मयाऽरण्य-विलापतुल्यम्।।18।।

चक्रे मयाऽसत्स्वपि कामधेनु कल्पद्रु-चिन्तामणिषु स्पृहार्तिः।
न जैनधर्मे स्फुटशर्मेदऽपि, जिनेश ! मे पश्य विमूढभावम्।।19।।

सद्भोगलीला न च रोगकीला, धनागमो नो निधनागमश्च।
दारा न कारा नरकस्य चित्ते, व्यचिन्ति नित्यं मयकाऽधमेन।।20।।

स्थितं न साधोर् हृदि साधुवृत्तात् परोपकारान्न। यशोऽर्जितं च।
कृतं न तीर्थोद्धरणादि कृत्यं, मय मुधा हारितमेव जन्म।।21।।

वैराग्यरंगो न गुरुदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शान्तिः।
नाऽध्यात्मेलेशो मम कोऽपि देव, तार्यः कथंकारमयं भवाब्धिः ?।।22।।

पूर्वे भवेऽकारि मया न पुण्य - मागामि-जन्मन्यपि नो कारिष्ये।
यदीदृंशोऽहं मम तेन नष्टा, भूतोद्भवद्भावि-भव-त्रयीश !।।23।।

कि वा मुधाऽहं बहुधा सुधाभुक् पूज्य ! त्वदग्रे चरितं स्वकीयम् ?
जल्पामि यस्मात् त्रिजगत्स्वरूप - निरूपकस्तवं कियदेतदत्र ?।।24।।

दीनोद्धार-धुरंधरस्त्वदपरो, नास्ते मदन्यः कृपा–
पात्रं नाऽत्र जने जिनेश्वर ! तथा–ऽप्येतां न याचे श्रियम्।
किंत्वर्हन्निदमेव केवलमहो, सद्बोधि-रत्नं शिवं,
श्री रत्नाकर मंगलैकनिलय ! श्रेयस्करं प्रार्थये।।25।।

○○○

श्री घंटाकर्ण स्तोत्र

ॐ घंटाकर्णो महावीरः सर्वव्याधि-विनाशकः।
विस्फोटकभयं प्राप्ते, रक्ष-रक्ष महाबलः।।1।।

यत्र त्वं तिष्ठसे देव! लिखितोऽक्षर-पंक्तिभिः।
रोगास्तत्र प्रणश्यंति, वातपित्तकफोद्भवाः।।2।।

तत्र राजभयं नास्ति, यांति कर्णे जपात्क्षयम्।
शाकिनी-भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवंति नो।।3।।

नाकाले मरणं तस्य न च सर्पेण दश्यते!
अग्निचौरभयं नास्ति, ॐ ह्रीं श्रीं घंटाकर्ण!
नमोस्तु ते! ॐ नरवीर! ठः ठः ठः स्वाहा!

विधि–श्री घंटाकर्ण स्तोत्र का 21 बार जप करने से राज-भय, चोर-भय, अग्नि और सर्प का भय दूर होता है। सब प्रकार की भूत-प्रेत बाधा भी दूर हो जाती है। अपने शरीर में और घर-परिवार में आनन्द मंगल रहता है।

○○○

त्रिकाल चतुर्विंशति जिन-स्तवन

(आचार्य देवेन्द्र)

अतीतजिनाः

केवलज्ञानिनं निर्वाणिनं सागरमेव च।
महायशोऽभिधं वन्दे भक्त्या विमलनामकम्।।1।।

सर्वानुभूति प्रणुमः श्रीधरं दत्तसंज्ञकम्।
दामोदर सुतेजस्कं स्वामिनं मुनिसुव्रतम्।।2।।

सुमितिं शिवगत्याख्यमस्तघं च तमीश्वरम्।
अनिलं यशोधराह्वं कृतार्घं च नमाम्यहम्।।3।।

जिनेश्वरं शुद्ध मति सेवे शिवकरं तथा।
स्यन्दभं सम्प्रतिं चेत्यतीताः सन्तु श्रिये जिना।।4।।

वर्तमानजिनाः

ऋषभं चाजितं चैव सम्भवं चाभिनन्दनम्।।
सुमतिं पद्मप्रभाख्यं सुपार्श्वं नौम्यहं जिनम्।।5।।

चन्द्रप्रभं च सुविधिं कलये हृदि शीतलम्।
श्रेयांसं वासुपूज्यं च विमलानन्तजिज्जिनौ।।6।।

धर्मनाथं तथा शांतिनाथं कुन्थं तदनन्तरम्।
मिल्लिं मुनिसुव्रताह्वं पूजयामितमां नमिम्।।7।।

नेमिनं पार्श्वनाथं च वर्द्धमानमभिष्टुमः।
इत्यमी वर्तमानास्ते भूयासुर्भूतये जिनाः।।8।।

भाविजिनाः

पद्मनाभं सूरदेवं सुपार्वं च स्वयंप्रभम्।
सर्वानुभूतिमभितो वंदे-देवश्रुताह्वयम्।।9।।

उदयाख्यं च पेढालं पोट्टिलं सितकीर्तिकम्।
सुव्रतं चाममं निष्कषायं हृदि निवेशयम्।।10।।

निःपलासं निर्ममाख्यं चित्रगुप्तं तथा श्रये।
समाधि-संवर-यशोधरान् विजय-मल्लकौ।।11।।

देवं चानन्तवीर्यं च स्तुवे भद्रकरं तथा।
इत्येते भाविनोऽर्हन्तो विघ्नं निघ्नंतु मेऽन्वहम्।।12।।

इत्याद्यभरतक्षेत्रेऽतीताद्या जिनपुंगवाः।
संस्तुत अद्भुतां दद्युः श्रीसंघतिलक-श्रियम्।।13।।

ooo

श्री ग्रह-शान्ति-स्तवन

(आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी)

जगद्गुरुं नमस्कृत्य, श्रुत्वा सद्गुरुभाषितम्।
ग्रहशान्तिं प्रवक्ष्यामि, लोकानां सुख-हेतवे।।1।।

जन्मलग्ने च राशौ च, पीडयन्ति यदा ग्रहाः।
तदा संपूजयेद् धीमान्, खेचरैः सहितान् जिनान्।।2।।

पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्चन्द्रश्चन्द्रप्रभस्य च।
वासुपूज्यस्य भू-पुत्रो, बुधोऽप्यष्टजिनेषु च।।3।।

विमलानन्त-धर्माराः शान्ति कुन्थुर्नमिस्तथा।
वर्धमानस्तथैतेषां, पाद-पद्मे बुधं न्यसेत्।।4।।

ऋषभाजित-सुपार्श्वाश्चाभिनन्दन-शीतलौ।
सुमतिः सम्भवः स्वामी, श्रेयांसश्चैषु गीष्पतिः।।5।।

सुविधेः कथितः शुक्रः, सुव्रतस्य शनैश्चरः।
नमिनाथे भवेद् राहुः, केतुः श्रीमल्लि-पार्श्वयोः।।6।।

जिनानामग्रतः कृत्वा, ग्रहाणां शान्ति-हेतवे।
नमस्कारशतं भक्त्या, जपेदष्टोत्तरै शतम्।।7।।

भद्रबाहुरुवाचैवं, पञ्चमः श्रुतकेवली।
विद्याप्रवादतः पूर्वाद्, ग्रहशान्तिरुदीरिता।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीं ग्रहाश्चन्द्र-सूर्यांगारक-बुध-बृहस्पति-शुक्र-शनैश्चर - राहु - केतु - सहिताः खेटा जिनपतिपुरतोऽव-तिष्ठन्तु, मम धन - धान्य - य-विजय - सुख - सौभाग्यधृति - कीर्ति - तुष्टि - पुष्टि-बुद्धि-लक्ष्मी-धर्मार्थ-कामदाः स्युः स्वाहा!॥9॥

०००

श्री पद्मावती अष्टक स्तोत्र

(पूर्वाचार्य)

श्रीमद् - गीर्वाणचक्रस्फुट - मुकुटतटी - दिव्य- माणिक्यमाला।
ज्योतिर्ज्वालाकरालास्फुरित - मुकुरिका - घृष्ट - पादारविन्दे॥
व्याघ्रोरोल्का-सहस्त्र-ज्वलनदनलशिखा, लोल-पाशांकुशाढ्ये!
ॐ क्रीं ह्रीं मंत्ररूपे! क्षपित-कलिमले, रक्ष मां देवि! पद्मे॥1॥

भित्वा पातालमूलं चलचलचलिते! व्याल-लीला-कराले!
विद्युद्दण्ड - प्रचण्ड - प्रहरणसहिते, सद्भुजैस्तर्जयन्ती॥
दैत्येन्द्रं क्रूरदंष्ट्रा - कटकटघटित - स्पष्ट - भीमाट्टहासे!
मायाजीमूतमाला - कुहरितगगने! रक्ष मां देवि! पद्मे॥2॥

कूजत्कोदण्ड - काण्डोड्डमर - विधुरित - क्रूर - घोरोपसर्गं।
दिव्यं वज्रातपत्रै प्रगुणमणिरणत्-किङ्किणी-क्वाण-रम्यम्॥
भास्वद् वैडूर्य-दण्डं मदनविजयिनो, विभ्रतो पार्श्व-भर्तुः!
सा देवी पद्महस्ता विघटयतु महा-डामरं मामकीनम्॥3॥

भृङ्गी काली कराली परिजनसहिते! चण्डि - चामुण्डि! नित्ये!
क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षणार्द्धं क्षतरिपुनिवहे! ह्रीं महामन्त्रवश्ये!

भ्रां भ्रीं भ्रूं भृङ्ग - सङ्ग भ्रकुटि - पुटतट - त्रासितोद्दामदैत्ये!
स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं स्त्रौं प्रचण्डे! स्तुतिशतमुखरे! रक्ष मां देवि! पद्मे।।4।।

चञ्चत् काञ्ची-कलापे! स्तनतटविलुठत् तारहारावलीके!
प्रोत्फुल्लत्पारिजातद्रुम - कुसुममहा - मञ्जरी - पूज्यपादे!
ह्रां ह्रीं क्लीं ब्लूं समेतै-र्भुवनवशकरी क्षोभिणी द्राविणी त्वं!
आँ इं ओं पद्महस्ते कुरु कुरु घटने रक्ष मां देवि! पद्मे।।5।।

लीला - व्यालोल - नीलोत्पलदलनयने! प्रज्वलद् - वाडवाग्नि-
त्रुट्यज्ज्वालास्फुलिङ्गस्फुरदरुणकणो - दग्र - वज्राग्रहस्ते!
ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं हरन्ती हर हर हर हुं-कारभीमैकनादे!
पद्मे! पद्मासनस्थे! अपनय दुरितं देवि! देवेन्द्रवन्द्ये।।6।।

कोपं वं झं सहंसः कुवलयकलितोद् दामलीला - प्रबन्धे!
ह्रां ह्रीं ह्रूं पक्षबीजैः शशिकरधवले! प्रक्षरत् क्षीरगौरे!
व्याल-व्याबद्धकूटे! प्रबलबलमहाकालकूटं हरन्ती।
हा हा हुंकारनादे! कृतकरमुकुलं रक्ष मां देवि! पद्मे।।7।।

प्रातर्बालार्क - रश्मिच्छुरितघनमहा सान्द्रसिन्दूर - धूली!
सन्ध्यरागारुणाङ्गी त्रिदशवर - वधू - वन्द्य - पादारविन्दे!
चञ्चचण्डासिधारा - प्रहतरिपुकुले! कुण्डलोद्घृष्टगल्ले!
श्रां श्रीं श्रूं श्रौं स्मरन्ती मदगजगमने! रक्ष मां देवि! पद्मे।।8।।

दिव्यं स्तोत्रं पवित्रं पटुतरपठतांभक्ति पूर्वं त्रिसन्ध्यं।
लक्ष्मी - सौभाग्यरूपं दलितकलिमलं मङ्गलं मङ्गलानाम्।।
पूज्यं कल्याणमालां जनयति सततं, पार्श्वनाथ-प्रसादात्।
देवी - पद्मावतीतः प्रहसितवदना - या स्तुता दानवेन्द्रैः।।9।।

ooo

श्री लघुशान्ति-स्तव

शान्तिं शान्तिं निशान्तं, शान्तं शान्ताऽशिवं नमस्कृत्य।
स्तोतुः शान्ति निमित्तं, मंत्रपदैः शान्तये स्तौमि॥1॥

ओमिति निश्चित वचसे, नमो नमो भगवतेऽर्हते पूजाम्।
शान्ति जिनाय जयवते, यशस्विने स्वामिने दमिनाम्॥2॥

सकलाति - शेषक-महासम्पत्ति-समन्विताय शस्याय।
त्रैलोक पूजिताय च नमो, नमः शान्ति देवाय॥3॥

सर्वामर - सुसमूह स्वामिक - सम्पूजिताय निर्जिताय।
भुवनजन पालनोद्यततमाय, सततं नमस्तस्मै॥4॥

सर्व दुरितौघ नाशन कराय, सर्वाऽशिव प्रशमनाय।
दुष्ट ग्रह भूत पिशाच, शाकिनीनां प्रमथनाय॥5॥

यस्येति नाम मंत्र प्रधान-वाक्योपयोग कृत तोषा।
विजया कुरुते जन हित मित च, नुता नमत तं शान्तिम्॥6॥

भवतु नमस्ते भगवति! विजये, सुजये परापरै-रजिते।
अपराजिते! जगत्यां, जयतीति जयावहे! भवति॥7॥

सर्वस्यापि च संघस्य, भद्रकल्याण मंगल प्रददे।
साधूनां च सदा शिव-सुतुष्टि-पुष्टि प्रदे जीयाः॥8॥

भव्यानां कृत सिद्धे! निर्वृत्ति, निर्वाण जननि सत्त्वानाम्।
अभय प्रदान निरते, नमोऽस्तु स्वस्ति प्रदे! तुभ्यम्॥9॥

भक्तानां जन्तूनां शुभावहे, नित्य - मुद्यते देवि।
सम्यग् दृष्टीनां, धृति रति मति बुद्धि प्रदानाय॥10॥

जिन शासन निरतानां, शान्ति नतानां च जगति जनतानाम्।
श्रीसम्पत कीर्ति यशो वर्द्धिनि, जय देवि! विजयस्व॥11॥

सलिलानल - विष-विषधरः, दुष्ट ग्रह-राज-रोग-रण भयतः।
राक्षस रिपु गण मारि-चौरेति - श्वा पदादिभ्यः॥12॥

अथ रक्ष रक्ष सुशिवं, कुरु कुरु शान्तिं च कुरु कुरु सदेति।
तुष्टिं कुरु कुरु पुष्टिं, कुरु कुरु स्वस्ति च कुरु कुरु त्वम्॥13॥

भगवति गुणवति! शिव शान्ति,
तुष्टि पुष्टिः स्वस्तीह कुरु कुरु जनानाम्।
ओमिति नमो नमो ह्राँः ह्रीं–
ह्रूं, ह्रः यः क्षः ह्रीं फुट्फुट् स्वाहा॥14॥

एवं यन् नामाक्षर पुरस्सरं, संस्तुता जया देवी।
कुरुते शान्तिं नमतां, नमो नमः शान्तये तस्मै॥15॥

इति पूर्व सूरि-दर्शित मंत्रपद, विदर्भितः स्तवः शान्तेः।
सलिलादि भय विनाशी, शान्त्यादि करश्च भक्ति मताम्॥16॥

यश्चैनं पठति सदा, श्रृणोति भावयति वा यथायोगम्।
स हि शान्तिपदं यायात्, सूरिः श्री मानदेवश्च॥17॥

ooo

श्री बृहत् शान्ति स्तोत्र

(बड़ा शान्ति पाठ)

(1) ॐ पुण्याहं पुण्याहं प्रीयन्तां प्रीयन्तां, भगवन्तोऽर्हन्तः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः त्रिलोकनाथाः त्रिलोकमहिताः त्रिलोक पूज्याः त्रिलोकेश्वरा त्रिलोकोदद्योतकराः।

अर्थ–ॐ आज का दिन पवित्र है, आज का अवसर मांगलिक है। सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, त्रिलोकी नाथ, त्रिलोक से पूजित, त्रिलोक के पूज्य, त्रिलोक के ईश्वर, त्रिलोक में ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले अरिहंत भगवान् प्रसन्न हों, प्रसन्न हों।

विशेष–ॐकार परमतत्त्व की विशिष्ट संज्ञा-प्रणवबीज है। एक अक्षर के रूप में यह परमतत्त्व का वाचक है और पृथक्-पृथक् करें तो पञ्च-परमेष्ठी का वाचक है।

ॐ ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति पद्मप्रभ सुपार्श्व चन्द्रप्रभ सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपूज्य विमल अनन्त धर्म शान्ति कुन्थु अर मल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व वर्द्धमानान्ता जिनाः शान्ताः शान्तिकरा भवन्तु स्वाहा।

अर्थ–ॐ ऋषभदेव, अजितनाथ, सम्भवनाथ, अभिनन्दन स्वामी, सुमतिनाथ, पद्मप्रभ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य स्वामी, विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत स्वामी, नमिनाथ, अरिष्टनेमि, पार्श्वनाथ और वर्धमान स्वामी अन्तिम जिनवर हैं, ऐसे चौबीस शान्त जिनेश्वर हमें शान्ति प्रदान करने वाले हों। स्वाहा।।

(2) ॐ मुनयो मुनिप्रवरा रिपुविजय दुर्भिक्ष कान्तारेषु दुर्गमार्गेषु रक्षन्तु वो नित्यं स्वाहा।

अर्थ—ॐ शत्रुओं द्वारा किये गये विजय-प्रंसग में, दुष्काल में, गहन-अटवी में (प्रवास प्रसंग में) तथा विकट मार्ग में चलते समय मुनियों में श्रेष्ठ ऐसे मुनि तुम्हारा नित्य रक्षण करें। स्वाहा।

(3) ॐ ह्रीं श्रीं धृति मति कीर्ति कान्ति बुद्धि लक्ष्मी मेधा विद्यासाधन प्रवेशन निवेशनेषु सुगृहीत नामानो जयन्तु ते जिनेन्द्राः।

अर्थ—ॐ श्रीं, ह्रीं, धृति, मति, कीर्ति, कान्ति, बुद्धि, लक्ष्मी और मेधा इन नौ स्वरूप वाली सरस्वती की साधना में, योग के प्रवेश में तथा मंत्र जप के निवेशन में जिनके नामों का आदर-पूर्वक उच्चारण किया जाता है, वे जिनेश्वर जय को प्राप्त हों, सान्निध्य करने वाले हों।

(4) ॐ रोहिणी प्रज्ञप्ति वज्र शृंखला वज्रांकुशी-अप्रतिचक्रा पुरुषदत्ता काली महाकाली गौरी गान्धारी सर्वास्त्रा महाज्वाला मानवी वैरोट्या अच्छुप्ता मानसी महामानसी षोडश विद्यादेव्यो रक्षन्तु वो नित्यं स्वाहा।

अर्थ—ॐ 1. रोहिणी, 2. प्रज्ञप्ति, 3. वज्रशृंखला, 4. वज्राङ्कुशी, 5. अप्रतिचक्रा, 6. पुरुषदत्ता, 7. काली, 8. महाकाली, 9. गौरी, 10. गान्धारी, 11. सर्वास्त्रमहाज्वाला, 12. मानवी, 13. वैरोट्या, 14. अच्छुप्ता, 15. मानसी और 16. महामानसी। ये सोलह विद्यादेवियां तुम्हारा रक्षण करें।

(5) ॐ आचार्योपाध्याय-प्रभृति-चातुर्वर्णस्य श्री श्रमण-संघस्य शान्तिर्भवतु तुष्टिर्भवतु पुष्टिर्भवतु।

अर्थ—ॐ आचार्य; उपाध्याय आदि चार प्रकार के श्री श्रमण-संघ के लिए शान्ति हो, तुष्टि हो, पुष्टि हो।

(6) ॐ ग्रहाश्चन्द्र सूर्यांगारक बुध बृहस्पति शुक्र शनैश्चर राहु केतु सहिताः सलोकपालाः सोम यम वरुण कुबेर वासवाऽऽदित्य स्कन्द विनायकोपेता ये चान्येऽपि ग्राम-नगर-क्षेत्र-देवताऽऽदयस्ते सर्वे प्रीयन्तां प्रीयन्तां अक्षीण कोष कोष्ठागारा नरपतयश्च भवन्तु स्वाहा।

अर्थ–ॐ चन्द्र, सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु आदि ग्रह; इन नौ ग्रहों सहित अन्य सामान्य ग्रह, लोकपाल-सोम, यम, वरुण और कुबेर, तथा इन्द्र, सूर्य, कार्तिकेय, विनायक आदि देव एवं इसके अतिरिक्त अन्य ग्रामदेवता, नगरदेवता, क्षेत्रदेवता आदि दूसरे भी जो देव हों, वे सब प्रसन्न हों, प्रसन्न हों और राजा अक्षय कोष और कोठार वाले हों। स्वाहा।।

(7) ॐ पुत्र मित्र भ्रातृ कलत्र सुहृत् स्वजन-संबंधि बन्धुवर्ग सहिता नित्यं चाऽऽमोद प्रमोद कारिणः (भवन्तु स्वाहा)।

अर्थ–ॐ आप पुत्र, मित्र, भाई, स्त्री, हितैषी, स्वजातीय, स्नेहीजन और संबंधी परिवार वालों सहित आनन्द-प्रमोद करने वाले हों, सुखी हों।

(8) अस्मिंश्च भूमण्डल आयतन निवासि साधु साध्वी श्रावक श्राविकाणां रोगोपसर्ग व्याधि दुःख दुर्भिक्ष-दौर्मनस्योपशमनाय शान्तिर्भवतु।

अर्थ–इस भूमण्डल पर अपने-अपने स्थान पर रहे हुए साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविकाओं के रोग, उपसर्ग, व्याधि, दुःख, दुष्काल और विषाद के उपशमन द्वारा शान्ति हो।

(9) ॐ तुष्टि पुष्टि ऋद्धि वृद्धि मांगल्योत्सवाः सदा प्रादुर्भूतानि पापानि शाम्यन्तु, दुरितानि, शत्रवः पराङ्मुखा भवन्तु स्वाहा।

अर्थ–ॐ आपकी सदा तुष्टि हो, पुष्टि हो, ऋद्धि मिले, वृद्धि हो, मांगल्य की प्राप्ति हो और आपका निरन्तर अभ्युदय हो। आपके प्रादुर्भूत पापकर्म नष्ट हों, भय और कठिनाइयां शान्त हों तथा आपका शत्रुवर्ग विमुख बने।

श्रीमते शान्ति नाथाय, नमः शान्ति विधायिने।
त्रैलोक्यस्याऽमराधीश - मुकुटाभ्य-र्चिताङ्घ्रये॥1॥

अर्थ–ज्ञानादिक लक्ष्मी वाले, तीन लोक के प्राणियों को शान्ति करने वाले और देवेन्द्रों के मुकुटों से पूजित चरण वाले, पूज्य श्री शान्तिनाथ भगवान् को नमस्कार हो।

शान्तिः शान्तिकरः श्रीमान्, शान्तिं दिशतु मे गुरुः।
शान्तिरेव सदा तेषां, येषां शान्ति-र्गृहे गृहे॥2॥

अर्थ–जगत् में शान्ति करने वाले, जगत् को धर्म का उपदेश देने वाले; पूज्य शान्तिनाथ भगवान् मुझे शान्ति प्रदान करें। जिनके घर-घर में श्री शान्तिनाथ की महिमा गायी जाती है उनके यहां सदा शान्ति ही होती है।

उन्मृष्ट रिष्ट दुष्ट ग्रह गति, दुःस्वप्न दुर्निमित्तादि।
सम्पादित हित सम्पन्न-नाम-ग्रहणे जयति शान्तेः॥3॥

अर्थ–उपद्रव, ग्रहों की दुष्टगति, दुःस्वप्न, दुष्ट अंगस्फुरण और दुष्ट निमित्तादि का नाश करने वाला तथा आत्महित और सम्पत्ति को प्राप्त कराने वाला श्री शान्तिनाथ भगवान् का नामोच्चारण जय को प्राप्त होता है।

श्रीसंघ-जगज्जनपद-राजाधिप राज सन्निवेशानाम्।
गोष्ठिक-पुर मुख्यानां, व्याहरणैर्व्याहरेच्छान्तिम्॥4॥

अर्थ–श्रीसंघ, जगत् के जनपद (देश), महाराजा और राजाओं के निवास-स्थान, विद्वन्मण्डली के सभ्य तथा अग्रगण्य नागरिकों के नाम लेकर शान्ति बोलनी चाहिए।

श्रीश्रमण सङ्घस्य शान्तिर्भवतु।
श्रीपौरजनस्य शान्तिर्भवतु।
श्रीजनपदानां शान्तिर्भवतु।
श्रीराजाधिपानां शान्तिर्भवतु।
श्रीराजसन्नि वेशानां शान्तिर्भवतु।
श्रीगोष्ठिकानां शान्तिर्भवतु।
श्रीपोरमुख्यानां शान्तिर्भवतु।
श्रीब्रह्मलोकस्य शान्तिर्भवतु।

अर्थ–श्री श्रमण संघ के लिए शान्ति हो।

श्रीनगरजनों के लिए शान्ति हो।

श्री देशों के लिए शान्ति हो।

श्री महाराजाओं के लिए शान्ति हो।

श्री राजाओं के निवास स्थानों के लिए शान्ति हो।

श्री गोष्ठिकों-धर्मगोष्ठी करने वाले विद्वन्मण्डली के सभ्यों के लिए शान्ति हो।

शहर के गणमान्य श्री अग्रगण्य नागरिकों के लिए शान्ति हो।

श्रीब्रह्मलोक के लिए शान्ति हो।

ॐ स्वाहा! ॐ स्वाहा!। ॐ श्रीपार्श्वनाथाय स्वाहा!!

ॐ स्वाहा! ॐ स्वाहा! ॐ श्रीपार्श्वनाथाय स्वाहा!!!

○○○

श्री ऋषिमण्डल स्तोत्रम्

आद्यंताक्षर संलक्ष्य-मक्षरं, व्याप्य यत् स्थितम्।
अग्नि-ज्वाला-समं नाद, बिन्दु रेखा समन्वितम्।।1।।

अग्नि-ज्वाला समाक्रान्तं, मनोमल-विशोधकम्।
देदीप्यमान हृत् पद्मे, तत्पदं नौमि निर्मलम्।।2।।

'अर्हं' मित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्ध चक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणिदध्महे।।3।।

ॐ नमोऽर्हद्भ्यः ईशेभ्यः, ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः।
ॐ नमः सर्व सूरिभ्यः, उपाध्यायेभ्यः ॐ नमः।।4।।

ॐ नमः सर्व-साधुभ्यः, ॐ ज्ञानेभ्यो नमो नमः।
ॐ नमः तत्त्व दृष्टिभ्यः, चारित्रेभ्यस्तु ॐ नमः।।5।।

श्रेयसेऽस्तु श्रिय स्त्वेतद् - अर्ह-दाद्यष्टकं शुभम्।
स्थानेष्वष्टसु विन्यस्तं, पृथग् बीज समन्वितम्।।6।।

आद्यं पदं शिखां रक्षेत्, परं रक्षेत्तु मस्तकम्।
तृतीयं रक्षेन् नेत्रे द्वे, तुर्यं रक्षेच्च नासिकाम्।।7।।

पञ्चमंतु मुखं रक्षेत्, षष्ठं रक्षेच्च घण्टिकाम्।
नाभ्यन्तं सप्तमं रक्षेत्, रक्षेत् पादान्तमष्टमम्।।8।।

पूर्वं-प्रणवतः सान्तः, सरेफो द्व्यब्धि पञ्चषान्।
सप्ताष्ट दश सूर्यांकान्, श्रितो बिन्दु स्वरान् पृथक्।।9।।

पूज्य नामाक्षरा आद्याः, पञ्चैते ज्ञान दर्शने।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये, ह्रीं-सान्तः समलंकृतः।।10।।

जम्बूवृक्षधरो द्वीपः क्षारोदधि-समावृतः।
अर्हदाद्यष्ट - कैरष्ट, काष्ठाधिष्ठैरलंकृतः।।11।।

तन्मध्ये संगतो मेरुः, कूटलक्षै-रलंकृतः।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारः, तारा मण्डल मण्डितः।।12।।

तस्योपरि सकारान्तं, बीज मध्यास्य सर्वगम्।
नमामि बिम्ब-मार्हन्त्यं, ललाटस्थं निरंजनम्।।13।।

अक्षयं निर्मलं शान्तं, बहुलं जाड्यतोज्झितम्।
निरीहं निरहंकारं, सारं सारतरं धनम्।।14।।

अनुद्धतं शुभ स्फीतं, सात्विकं राजसं मतम्।
तामसं चिर संबुद्धं, तैजसं शर्वरी समम्।।15।।

साकारं च निराकारं, सरसं विरसं परम्।
परापरं परातीतं, परम्पर परात्परम्।।16।।

सकलं निष्कलं तुष्टं, निर्वृतं भ्रान्ति वर्जितम्।
निरंजनं निराकांक्षं, निर्लेपं वीतसंशयम्।।17।।

ब्राह्मणमीश्वरं बुद्धं, शुद्धं सिद्धमभंगुरम्।
ज्योति रूपं महादेवं, लोकालोक प्रकाशकम्।।18।।

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः, सरेफो बिन्दु मण्डितः।
तुर्यस्वर कला युक्तो, बहुधा नाद-मालितः।।19।।

एक वर्णं द्विवर्णं च, त्रि वर्णं तुर्य वर्णकम्।
पञ्च वर्णं महावर्णं, सपरं च परापरम्।।20।।

अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे, ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णैर् निजैर् निजैर् युक्ता, ध्यातव्यास्तत्र संगता।।21।।

नादश्चन्द्र समाकारो, बिन्दु-र्नील समप्रभः।
कलाऽरुण समासान्तः, स्वर्णाभः सर्वतो मुखः।।22।।

शिरः संलीन ईकारो, विनीलो वर्णतः स्मृतः।
वर्णानुसार संलीनं, तीर्थकृन् मण्डलं स्तुमः।।23।।

चन्द्रप्रभ-पुष्पदन्तौ, 'नाद' स्थिति समाश्रितौ।
'बिन्दु' मध्यगतौ नेमि, सुव्रतौ जिन सत्तमौ।।24।।

पद्मप्रभ वासुपुज्यौ, कलापद - मधिष्ठितौ।
शिर ई स्थिति संलीनौ, पार्श्व मल्लि जिनोत्तमौ।।25।।

शेषास्तीर्थंकरा सर्वे, 'ह-र' स्थाने नियोजिताः।
माया बीजाक्षरं प्राप्ताः, चतुर्विंशति-रर्हताम्।।26।।

गत राग द्वेष मोहाः, सर्व पाप विवर्जिताः।
सर्वदा सर्व लोकेषु, ते भवन्ति जिनोत्तमाः।।27।।

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु डाकिनी।।28।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु राकिनी।।29।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु लाकिनी।।30।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु काकिनी।।31।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु शाकिनी।।32।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु हाकिनी।।33।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु याकिनी।।34।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु पन्नगाः।।35।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु हस्तिनः।।36।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु राक्षसाः।।37।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु वह्नयः।।38।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु सिंहकाः।।39।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु दुर्जनाः।।40।।

देव देवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादित सर्वांग, मा मां हिनस्तु भूमिपाः।।41।।

श्री गौतमस्य या मुद्रा, तस्य या भुवि लब्धयः।
ताभिरभ्यधिकं ज्योति-रर्हन् सर्व-निधीश्वरः।।42।।

पाताल वासिनो देवाः, देवा भूपीठ-वासिनः।
स्वर्ग वासिनोऽपि ये देवाः, सर्वे रक्षन्तु मामितः।।43।।

येऽवधि लब्धयो ये तु, परमावधि लब्धयः।
ते सर्वे मुनयो दिव्याः, मां संरक्षन्तु सर्वदा॥44॥

दुर्जना भूत वेताला, पिशाचा मुद्‌गलास्तथा।
ते सर्वेप्युपशाम्यन्तु, देव-देव प्रभावतः॥45॥

ॐ श्रीं ह्रीश्च धृति - र्लक्ष्मी, गौरी चण्डी सरस्वती।
जयाऽम्बा विजया नित्या, क्लिन्नाऽजिता मदद्रवा॥46॥

कामांगा कामबाणा च, सानन्दा नन्द मालिनी।
माया मायाविनी रौद्री, कला काली कलिप्रिया॥47॥

एताः सर्वा महादेव्यो, वर्तन्ते या जगत् त्रये।
मह्यं सर्वाः प्रयच्छन्तु, कान्तिं कीर्तिं धृतिं मतिम्॥48॥

दिव्यो गोप्यः सुदुष्प्राप्यः, श्री ऋषि मण्डल स्तवः।
भाषित स्तीर्थनाथेन, जगत् त्राण - कृतेऽनघः॥49॥

रणे राजकुले वह्नौ, जले दुर्गे गजे हरौ।
श्मशाने विपिने घोरे, स्मृतो रक्षति मानवम्॥50॥

राज्य भ्रष्टा निजं राज्यं, पद भ्रष्टा निजं पदम्।
लक्ष्मी भ्रष्टा निजां लक्ष्मीं, प्राप्नुवन्ति न संशयः॥51॥

भार्यार्थी लभते भार्यां, सुतार्थी लभते सुतम्।
वित्तार्थी लभते वित्तं, नरः स्मरण मात्रतः॥52॥

स्वर्णे रौप्ये पटे कांस्ये, लिखित्वा यस्तु पूजयेत्।
तस्यैवाष्ट महासिद्धि-र्गृहे भवति शाश्वती॥53॥

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं, गलके मूर्ध्नि वा भुजे।
धारितं सर्वदा दिव्यं, सर्व भीति विनाशकम्॥54॥

भूतैः प्रेतैर् ग्रहैर् यक्षैः, पिशाचै-र्मुद्गलै-र्मलैः।
वात पित्त कफोद्रेकै-र्मुच्यते नात्र संशयः॥55॥

भूर्भुवः स्वस्त्रयी पीठवर्तिनः शाश्वता जिनाः।
तैः स्तुतै-र्वन्दितै-र्दृष्टैर् यत्फलं तत्फलं स्मृतौ॥56॥

एतद् गोप्यं महास्तोत्रं, न देयं यस्य कस्यचित्।
मिथ्यात्व वासिने दत्ते, बाल हत्या पदे-पदे॥57॥

आचाम्लादि तपः कृत्वा, पूजयित्वा जिनावलीम्।
अष्ट साहस्त्रिको जापः, कार्यस्तत् सिद्धि - हेतवे॥58॥

शतमष्टोत्तरं प्रातः, ये स्मरन्ति दिने दिने।
तेषां न व्याधयो देहे, प्रभवन्ति न चापदः॥59॥

अष्ट मासावधिं यावत्, प्रातः प्रातस्तु यः पठेत्।
स्तोत्रमेतन् महातेजो, जिनबिम्बं स पश्यति॥60॥

दृष्टे सत्यमर्हंतो बिम्बे, भवे सप्तमके ध्रुवम्।
पदमाप्नोति शुद्धात्मा, परमानन्द सम्पदाम्॥61॥

विश्व वन्द्यो भवेद् ध्याता, कल्याणानि च सोऽश्नुते।
गत्वा स्थानं परं सोऽपि, भूयस्तु न निवर्तते॥62॥

इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं, स्तुतीनामुत्तमं परम्।
पठनात् स्मरणा-ज्जापात्, लभते पदमव्ययम्॥63॥

○○○

अंतिम मंगल

जिने भक्तिर् जिने भक्तिर्, जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे।
सम्यक्त्वमेव संसार-वारणं मोक्ष कारणम्।।1।।

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः, श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे।
सज्ज्ञानमेव संसार-वारणं मोक्ष कारणम्।।2।।

गुरौ भक्तिर् गुरौ भक्तिर्, गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे।
चारित्रमेव संसार-वारणं मोक्ष कारणम्।।3।।

❍❍❍

पंचम विभाग : परिशिष्ट

साधना, आराधना
और
विशिष्ट जानकारियाँ

महामन्त्र नवकार कल्प

मूल नवकार मन्त्र

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं,
नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्व साहूणं।

सूचना—यह मन्त्रराज नवकार मन्त्र है। इससे बढ़कर तीन लोक में कोई भी मन्त्र नहीं है। पूर्व या उत्तर दिशा को मुख करके पवित्रभाव से एक माला प्रतिदिन करने से सब प्रकार का आनन्द-मंगल रहता है, सब संकट दूर हो जाते हैं।

○○○

भक्तामर स्तोत्र की साधना

भक्तामर स्तोत्र दोपहर से पहले ही पढ़ना चाहिए, सूर्योदय का समय सबसे उत्तम है। वर्षभर निरन्तर पढ़ना शुरू करना हो तो श्रावण, भादवा, कार्तिक, मगसिर, पौष या माघ में करें। तिथि पूर्णा, नन्दा और जया हो, रिक्ता न हो। शुक्ल-पक्ष हो। उस दिन उपवास रखें या एकाशन करें। ब्रह्मचर्य से रहें।

भक्तामर का दूसरा काव्य लक्ष्मी की प्राप्ति और शत्रु-विजय के लिए है। इसी प्रकार छठा बुद्धि-विकास के लिए, दसवाँ वचन-सिद्धि के लिए, ग्यारहवाँ खोई हुई वस्तु की पुनः प्राप्ति के लिए है। पन्द्रहवाँ ब्रह्मचर्य, स्वप्नदोष की निवृत्ति, राजदरबार में सम्मान, प्रतिष्ठा और लक्ष्मी की वृद्धि के लिए है। उन्नीसवें से दूसरों के द्वारा किए हुए जादू, भूत-प्रेत का असर दूर हो, रोजगार अच्छा हो, जन्मदरिद्र भी भूखा न रहे। बीसवें से पुत्र की प्राप्ति हो। इक्कीसवें से स्वजन और परजन सबका प्रेम प्राप्त

हो। अट्ठाईसवें से सब प्रकार की मन की शुभ इच्छा पूर्ण हो। छत्तीसवें से सम्पत्ति का लाभ हो। पैंतालीसवें से सब प्रकार का भय और उपसर्ग दूर हो, तेज प्रताप हो, सब प्रकार के रोगों की शान्ति हो। छियालीसवें से राजा का भय दूर हो, जेलखाने से छूटे आदि।

ऊपर बताये काव्यों का जप एक माला प्रतिदिन प्रातःकाल के समय करना चाहिए। यह भक्तामर स्तोत्र महान् प्रभावशाली है। सब प्रकार से आनन्द-मंगल करने वाला है। इसके कर्ता आचार्य मानतुंग हैं। पाठ पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके करना चाहिए।

ooo

कल्याण-मंदिर की साधना

कल्याण-मंदिर स्तोत्र आचार्य सिद्धसेन दिवाकर-कृत है। जैन और अजैन संसार में इसका बहुत अधिक महत्व है। यह चमत्कारी स्तोत्र है। इसका पाठ संध्या, सूर्यास्त के समय या सोते समय करना चाहिए। वर्षभर के लिए निरंतर जप करना हो, तो भगवान् पार्श्वनाथ के जन्मदिन पोषवदी दशमी के दिन से शुरू करना चाहिए। उस दिन उपवास रखें, ब्रह्मचर्य से रहें। स्तोत्र का पाठ पूर्व और उत्तर दिशा की तरफ मुख करके करना चाहिए।

वर्षभर के लिए निरन्तर जप करना हो, तो भगवान् पार्श्वनाथ के जन्मदिन पोषवदी दशमी के दिन से शुरू करना चाहिए। उस दिन उपवास रखें, ब्रह्मचर्य से रहें। स्तोत्र का पाठ पूर्व या उत्तर दिशा की तरफ मुख करके करना चाहिए। कल्याण-मन्दिर का पाँचवाँ काव्य लक्ष्मी और व्यापार के लिए, छठा सन्तान-प्राप्ति के लिए है। दसवें से सब प्रकार के भय दूर हों। सतरहवें से गृह-क्लेह दूर हो। पच्चीसवें से रोग-शोक

दूर हो। सत्ताईसवें से शत्रु शान्त हो, विजय हो। इकत्तीसवें से शुभाशुभ प्रश्न का उत्तर मिले। सैंतीसवें से राजा, प्रजा और परिवार में सम्मान हो, प्रतिष्ठा बढ़े। तैतालीसवें से बन्दीखाने से छूटे, सब प्रकार से लक्ष्मी का लाभ हो। प्रतिदिन एक माला का जप करना चाहिए।

ooo

तपश्चरण की विधि

तीर्थंकर-गोत्रतप (बीस स्थानक तप)

तीर्थंकर गोत्र बंध के बीस बोल बताए हैं। उनके तप का जैन-संसार में बहुत प्रचलन है। बीस स्थानक तप की बीस ओली पूर्ण करनी होती हैं। एक ओली में बीस पद की आराधना करनी चाहिए। जिस दिन पद की आराधना करे, उस दिन ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे और जमीन पर सोवे। शक्ति हो तो उपवास करे, अन्यथा आयंबिल या एकासन करे। जिस दिन जिस पद की आराधना हो, उस दिन नीचे लिखे अनुसार उस पद की बीस माला फेरें। यह तप महान् है। शुद्ध आराधना होने से तीर्थंकर गोत्र का बंध हो, तीसरे भव में मोक्ष प्राप्त हो। माला-जप का क्रम इस प्रकार है-

1. नमो अरिहंताणं
2. नमो सिद्धाणं
3. नमो पवयणस्स
4. नमो आयरियाणं
5. नमो थेराणं
6. नमो उवज्झायाणं
7. नमो लोए सव्वसाहूणं
8. नमो णाणस्स
9. नमो दंसणस्स
10. नमो विनयसंपन्नाणं
11. नमो चरित्तस्स
12. नमो बंभवयधारीणं
13. नमो किरियाणं
14. नमो तवस्सीणं

15. नमो गोयमस्स

16. नमो जिणाणं

17. नमो चरणस्स

18. नमो अपुव्वणाणस्स

19. नमो सुय नाणस्स

20. नमो तित्थस्स

विधि—कुछ पुराने ग्रंथों में उपर्युक्त जप के पहले ॐ ह्रीं का उल्लेख भी मिलता है। जैसे ॐ ह्रीं नमो अरहंताणं, ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं इत्यादि।

ooo

अष्टकर्म सूदन तप

1. ज्ञानावरणीय—एक उपवास का तप। पांच लोगस्स का ध्यान! **ॐ ह्रीं अनंत-ज्ञानगुणेभ्यो नमः**—इस मंत्र की बीस माला फेरनी चाहिए।

2. दर्शनावरणीय—एकासना। नौ लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अनंत दर्शन गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

3. वेदनीय—एकलसिथं (एक अन्न का दाना ही खाना, शेष तप)। दो लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अव्याबाध गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

4. मोहनीय—एकलठाणा (एक बार और एक साथ एक आसन से ही आहार तथा जल ग्रहण करना) अठाईस लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं यथाख्यात गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

5. आयुकर्म—एकदत्ति (एक बार में एक साथ जो मिले वही खाना, दुबारा नहीं लेना)। चार लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अक्षयनिधि गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

6. नामकर्म—निवी (घी, दूध और नमक से रहित रूखा खाना) एक सौ तीन लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अमूर्त गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

7. गोत्रकर्म–आयंबिल। दो लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अगुरुलघु गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

8. अंतराय कर्म–अष्ट कवल (सिर्फ आठ कौर अर्थात् ग्रास, खाना)। पांच लोगस्स का ध्यान। **'ॐ ह्रीं अनंतवीर्य गुणेभ्यो नमः'** की बीस माला।

○○○

रोहिणी तप

सत्ताईस नक्षत्रों में चौथा नक्षत्र रोहिणी है। यह नक्षत्र महीने में जिस दिन हो, उस दिन उपवास करें और वासुपूज्य-स्वामी की तीन बार भाव वंदना करके **'ॐ ह्रीं वासुपूज्य जिनाय नमः'**–इस मंत्र की बीस माला फेरें। इस प्रकार सात वर्ष और सात महीने तक यह तप किया जाता है। रोहिणी तप स्त्रियां करती हैं। इस तप की आराधना करने से मन की अभिलाषा पूर्ण हो, सौभाग्य की वृद्धि हो, पुत्रादि के अभाव का शोक दूर हो।

○○○

वर्धमान आयंबिल तप

प्रथम एक आयंबिल करे और ऊपर एक उपवास, फिर दो आयंबिल और ऊपर एक उपवास, फिर तीन आयंबिल और ऊपर एक उपवास, इस क्रम से बढ़ते-बढ़ते सौ आयंबिल और ऊपर एक उपवास करें। इस तप क्रम के हिसाब से कुल सौ उपवास और पांच हजार पचास आयंबिल होते हैं। इस तप में तप के दिन **'ॐ ह्रीं नमो जिणाणं'** की बीस माला जपनी चाहिए। बारह लोगस्स का ध्यान करें।

ज्ञान-पंचमी तप

कार्तिक सुदी पंचमी से यह तप शुरू किया जाता है। हर एक महीने की सुदी पंचमी को उपवास करते हुए पांच वर्ष और पांच मास में पैंसठ उपवास होते हैं। इस तप में उपवास के दिन **'ॐ ह्रीं नमो नाणस्स'** की बीस माला फेरनी चाहिए और इक्यावन लोगस्स का ध्यान करना चाहिए।

○○○

पौष दशमी तप

पौष वदी दशमी के पहले यानी 'नवमी' के दिन शक्कर के पानी का एकासणा करें, यानी उस दिन सिर्फ गर्म जल में शक्कर डालकर एक बार पीवें। बाद में दशमी के दिन भोजन तथा जल एक साथ एक आसन से ही लेवें और फिर चौविहार कर लें। फिर एकादशी के दिन नवमी के समान शक्कर के पानी का एकाशन करें। तीनों दिन ब्रह्मचर्य से रहें, जमीन पर सोएं और यदि प्रतिक्रमण आता हो तो सुबह-शाम प्रतिक्रमण भी करें। तीनों दिन **'ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय अर्हते नमः'** इस मंत्र की बीस माला फेरें। फिर हर महीने की वदी दशमी को उपवास या एकलठाणा करते रहें। यह तप दस वर्ष में पूर्ण होता है।

○○○

पंचरंगी तप

इस तप में 25 पुरुष अथवा 25 स्त्रियां होती हैं।

पहले दिन-पांच जने पांच-पांच उपवास यानी पंचौला करें। प्रतिदिन प्रत्येक व्यक्ति **'मतिज्ञानाय नमः'** पद की बीस माला फेरे। अठाईस लोगस्स का ध्यान करें।

दूसरे दिन–पांच जने चार-चार उपवास यानी चौला करें और प्रतिदिन **'श्रुतज्ञानाय नमः'** पद की बीस माला फेरें। चौदह लोगस्स का ध्यान करें।

तीसरे दिन–पांच जने तीन-तीन उपवास यानी तेला करें और प्रतिदिन **'अवधिज्ञानाय नमः'** पद की बीस माला फेरें तथा छह लोगस्स का ध्यान करें।

चौथे दिन–पांच जने दो-दो उपवास यानी बेला करें और **'मनः पर्यायज्ञानाय नमः'** पद की बीस माला फेरें। दो लोगस्स का ध्यान करें।

पांचवें दिन–पांच जने एक-एक उपवास करें और **'केवलज्ञानाय नमः'** पद की बीस माला फेरें। एक लोगस्स का ध्यान करें।

ooo

पाक्षिक तप

किसी भी महीने की सुदी एकम से लेकर पूर्णिमा तक लगातार पंद्रह उपवास करने का नाम 'पाक्षिक तप' है। यदि किसी साधक की लगातार पंद्रह उपवास करने की शक्ति न हो, तो किसी एक महीने के पहले शुक्लपक्ष की दूज को, फिर तीसरे शुक्लपक्ष की तीज को, इस प्रकार एक-एक करके पंद्रह शुक्लपक्ष में पंद्रह उपवास करें। प्रत्येक उपवास में **'श्रीमुनिसुव्रत सर्वज्ञाय नमः'**–इस मंत्र की बीस माला फेरें।

ooo

छहमासी तप

अपनी इच्छानुसार एक-सौ अस्सी उपवासों की पूर्ति करने से 'जघन्य छहमासी' तप का लाभ होता है। उपवास के दिन **'श्री महावीर स्वामी तीर्थंकराय नमः'** मंत्र की 21 माला फेरें।

वर्षी तप

वर्षीतप में तीन-सौ साठ उपवास करने होते हैं। जिस दिन उपवास हो उस दिन प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, दान अवश्य करें। तप का प्रारंभ वैसाख सुदी तीज से करें और एक दिन उपवास और अगले दिन पारणा, इस प्रकार दो वर्ष में तीन-सौ साठ उपवास करने के बाद, अंतिम पारणा इक्षुरस से वैसाख सुदी तीज को करें। उपवास के दिन **'श्रीऋषभदेव तीर्थंकराय नमः'** इस मंत्र की 20 माला फेरें।

ooo

अकषाय तप

सोलह कषाय की निवृत्ति के लिए पहले दिन एकासणा, दूसरे दिन नीवी, तीसरे दिन आयंबिल और चौथे दिन उपवास करें। इस प्रकार अनुक्रम से चार बार करने से सोलह दिन में 'अकषाय तप' पूर्ण होता है। प्रत्येक दिन **'ॐ ह्रीं श्रीं क्षीण-कषाय वीतरागाय नमः'** मंत्र की 20 माला फेरनी चाहिए।

ooo

णमोक्कार मंत्र तप

यह तप णमोक्कार मंत्र का है। णमोक्कार मंत्र के मूल पद पांच हैं। प्रत्येक के क्रमशः सात, पांच, सात, सात और नौ अक्षर हैं। जिस पद के जितने अक्षर हों, उतने ही उपवास करें और उसी पद की बीस माला फेरें।

ooo

नव-पद की ओली

चैत्र सुदी एकम अथवा आसोज सुदी एकम से नवपद की ओली नौ दिन के लिए प्रारंभ की जाती है। कुछ ग्रंथकार चैत्र सुदी सप्तमी और आसोज सुदी सप्तमी से प्रारंभ करके पूर्णिमा तक नौ दिन ओली मनाते हैं। आज कल यही परम्परा है। यदि तिथि घटती हो तो छठ से, और बढ़ती हो तो अष्टमी से प्रारंभ किया जा सकता है। नौ दिन तक निरंतर नौ आयंबिल करने चाहिएं।

प्रथम पद अरहंत का है, गरम जल के साथ श्वेत रंग यानी चावल का आयंबिल करें । **'नमो अरिहंताणं'** की बारह माला जपें । दूसरा पद सिद्ध का है, लाल रंग यानी गेहूँ। आदि का आयंबिल करें । **'नमो सिद्धाणं'** की आठ माला जपें । तीसरा पद आचार्य का हैं, पीले रंग यानी चने का आयंबिल करें । **'नमो आयरियाणं'** की छत्तीस माला जपें । चौथा पद उपाध्याय का है, हरे रंग यानी मूंग का आयंबिल करें । **'नमो उवज्झायाणं'** की पच्चीस माला जपें । पांचवाँ पद साधु का है, काले रंग यानी उड़द का आयंबिल करें । **'नमो लोए सव्वसाहूणं'** की सत्ताईस माला जपें । अन्तिम चार पद क्रमशः दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप के हैं। अतः श्वेत रंग यानी चावल का आयंबिल करें। पद के अनुसार ही क्रमशः **'नमो दंसणस्स'** की सडसठ, **'नमो नाणस्स'** की इक्यावन, **'नमो चरित्तस्स'** की सत्तर, और **'नमो तवस्स'** की पचास माला जपनी चाहिए।

○○○

चौबीस तीर्थंकर कल्याणक तप

कार्तिक मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
3	वदि 5	केवलज्ञान	श्रावस्ती
22	वदि 12	च्यवन	सौरिपुर
6	वदि 12	जन्म	कौशांबी
6	वदि 13(12)	दीक्षा	कौशाम्बी
24	वदि 30	मोक्ष	पावापुरी
9	सुदि 3 (3)	केवल	काकन्दी
18	सुदि 12	केवल	हस्तिनापुर

मगसिर मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
9	वदि 5	जन्म	काकंदी
9	वदि 6	दीक्षा	काकंदी
24	वदि 10	दीक्षा	कुंडलपुर
6	वदि 11	मोक्ष	सम्मेतशिखर
18	सुदि 10	जन्म	हस्तिनापुर
18	सुदि 10	मोक्ष	सम्मेतशिखर
18	सुदि 11	दीक्षा	हस्तिनापुर
19	सुदि 11	जन्म	मिथिला

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
19	सुदि 11	दीक्षा	मिथिला
19	सुदि 11	केवल	–
21	सुदि 11	केवल	–
3	सुदि 14	जन्म	श्रावस्ती
3	सुदि 15	दीक्षा	श्रावस्ती

पौष मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
23	वदि 10	जन्म	वाराणसी
23	वदि 11	दीक्षा	वाराणसी
8	वदि 12	जन्म	चन्द्रपुरी
8	वदि 13	दीक्षा	चन्द्रपुरी
10	वदि 14	केवल	भद्दिलपुर
13	सुदि 6	केवल	कांपिल्यपुर
16	सुदि 9	केवल	हस्तिनापुर
2	सुदि 11	केवल	विनीता
4	सुदि 14	केवल	अयोध्या
15	सुदि 15	केवल	रत्नपुर

माघ मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
6	वदि 6	च्यवन	कौशाम्बी
10	वदि 12	जन्म	भद्दिलपुर
10	वदि 12	दीक्षा	भद्दिलपुर
1	वदि 13	मोक्ष	कैलाशपर्वत
11	वदि 30	केवल	सिद्धपुर
4	सुदि 2	जन्म	अयोध्या
12	सुदि 2	केवल	चम्पा
15	सुदि 3	जन्म	रत्नपुर
13	सुदि 3	जन्म	कांपिल्यपुर
13	सुदि 4	दीक्षा	कांपिल्यपुर
2	सुदि 8	जन्म	अयोध्या
2	सुदि 9	दीक्षा	अयोध्या
4	सुदि 12	दीक्षा	अयोध्या
15	सुदि 13	दीक्षा	रत्नपुर

फाल्गुन मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
7	वदि 6	केवल	वाराणसी
7	वदि 6	मोक्ष	सम्मेतशिखर
8	वदि 7	केवल	चन्द्रपुरी
9	वदि 9	च्यवन	काकन्दी
1	वदि 11	केवल	पुरिमताल
20	वदि 11	केवल	राजगृह
11	वदि 12	जन्म	सिंहपुर
11	वदि 13 (30)	दीक्षा	सिंहपुर
12	वदि 14	जन्म	चम्पा
12	वदि 30	दीक्षा	चम्पा
18	सुदि 2 (1)	च्यवन	हस्तिनापुर
19	सुदि 4	च्यवन	मिथिला
3	सुदि 8	च्यवन	श्रावस्ती
20	सुदि 12	दीक्षा	राजगृही
19	सुदि 12	मोक्ष	सम्मेतशिखर

चैत्र मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
23	वदि 4	च्यवन	वाराणसी
23	वदि 4	केवल	आमलकवृक्ष
8	वदि 5	च्यवन	चन्द्रपुरी
1	वदि 8	जन्म	विनीता
1	वदि 9 (8)	दीक्षा	विनीता
17	सुदि 3	केवल	हस्तिनापुर
19	सुदि 4	मोक्ष	सम्मेतशिखर
14	सुदि 5	मोक्ष	सम्मेतशिखर
2	सुदि 5	मोक्ष	सम्मेतशिखर
3	सुदि 5	मोक्ष	सम्मेतशिखर
5	सुदि 9	मोक्ष	सम्मेतशिखर
5	सुदि 11	केवल	सम्मेतशिखर
24	सुदि 13	जन्म (वैशाली)	कुण्डलपुर
6	सुदि 15	केवल	कौशाम्बी

वैशाख मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
17	वदि 1	मोक्ष	सम्मेतशिखर
10	वदि 2	मोक्ष	सम्मेतशिखर
17	वदि 5	दीक्षा	हस्तिनापुर
10	वदि 6	च्यवन	भुठ्ठिलपुर
21	वदि 10	मोक्ष	सम्मेतशिखर
14	वदि 13	जन्म	अयोध्या
14	वदि 14	दीक्षा	अयोध्या
14	वदि 14	केवल	अयोध्या
17	वदि 14	जन्म	हस्तिनापुर
4	सुदि 4	च्यवन	अयोध्या
15	सुदि 7	च्यवन	रत्नपुर
4	सुदि 8	मोक्ष	सम्मेतशिखर
5	सुदि 8	जन्म	अयोध्या
5	सुदि 9	दीक्षा	अयोध्या
24	सुदि 10	केवल	ऋजुबालिका-तट
13	सुदि 12	च्यवन	कांपिल्यपुर
2	सुदि 13	च्यवन	

ज्येष्ठ मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
11	वदि 6	च्यवन	सिंहपुर
20	वदि 8	जन्म	राजगृह
20	वदि 9	मोक्ष	सम्मेतशिखर
16	वदि 13	जन्म	हस्तिनापुर
16	वदि 13	मोक्ष	सम्मेतशिखर
16	वदि 14	दीक्षा	हस्तिनापुर
15	सुदि 5	मोक्ष	सम्मेतशिखर
12	सुदि 9	च्यवन	चम्पा
7	सुदि 12	जन्म	वाराणसी
7	सुदि 13	दीक्षा	वाराणसी

आषाढ मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
1	वदि 4	च्यवन	मथिला
13	वदि 7	मोक्ष	सम्मेतशिखर
21	वदि 9	दीक्षा	मिथिला
24	सुदि 6	च्यवन	वैशाली
22	सुदि 8	मोक्ष	गिरनार
12	सुदि 14	मोक्ष	चम्पा

श्रावण मास

11	वदि 3	मोक्ष	सम्मेतशिखर
14	वदि 7	च्यवन	अयोध्या
21	वदि 8	जन्म	मिथिला
17	वदि 9	च्यवन	हस्तिनापुर
5	सुदि 2	च्यवन	
22	सुदि 5	जन्म	सौरिपुर
22	सुदि 6	दीक्षा	द्वारिका
23	सुदि 8	मोक्ष	सम्मेतशिखर
20	सुदि 15	च्यवन	राजगृह

भादवा मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
16	वदि 7	च्यवन	हस्तिनापुर
8	वदि 7	मोक्ष	सम्मेतशिखर
7	वदि 8	च्यवन	वाराणसी
9	सुदि 9	मोक्ष	सम्मेतशिखर

आसोज मास

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	स्थान
22	वदि 30	केवल	रैवताचल
21	सुदि 5	जन्म	मिथिला

यह कल्याण तप है। जिस दिन कल्याणक का दिन हो, उस दिन उपवास करना अथवा एकासणा करना। ब्रह्मचर्य से रहना। ऊपर दिए हुए कल्याणकों में नीचे लिखे अनुसार 21 माला का जप करना चाहिए।

1. च्यवन-कल्याणक के दिन कल्याणक वाले तीर्थंकर के नाम के साथ **'परमेष्ठिने नमः'** जपना चाहिए; जैसे-**'श्री ऋषभदेव परमेष्ठिने नमः', 'श्री अजितनाथ परमेष्ठिने नमः'** इत्यादि।

2. जन्मकल्याणक के दिन इसी प्रकार **'अर्हते नमः'** जपना चाहिए। जैसे **'श्रीऋषभदेव-अर्हते नमः', 'श्री अजितनाथ-अर्हते नमः'** इत्यादि।

3. दीक्षा-कल्याणक के दिन **'नाथाय नमः'** जपना चाहिए। जैसे **'श्री ऋषभनाथाय नमः', 'श्री अजितनाथाय नमः 'श्रीसंभवनाथाय नमः'** इत्यादि।

4. केवल-ज्ञान-कल्याणक के दिन **'सर्वज्ञाय नमः'** जपना चाहिए। जैसे **'श्री ऋषभदेवसर्वज्ञाय नमः', 'श्री अजितनाथसर्वज्ञाय नमः'** इत्यादि।

5. मोक्ष-कल्याणक के दिन **'पारंगताय नमः'** जपना चाहिए। जैसे **'श्री ऋषभदेव-पारंगताय नमः श्री अजितनाथ-पारंगताय नमः'** इत्यादि। सब उपवास 121 होते हैं। अधिक से अधिक पाँच वर्ष में पूर्ण कर लेने चाहिएं।

ooo

तप करने का फल

नरक में जितने काल दु:ख भोगने से अशुभ कर्म नष्ट होते हैं, उतने कर्म नीचे लिखे तपों की शुद्ध आराधना से क्षय हो जाते हैं–

नवकारसी	सौ वर्ष
पोरसी	एक हजार वर्ष
डेढ़ पोरसी	दस हजार वर्ष
पुरिमड्ढ	एक लाख वर्ष
एकासना	दस लाख वर्ष
नीवी	एक करोड़ वर्ष
एकलठाणा	दस करोड़ वर्ष
एकलदत्ती	सौ करोड़ वर्ष
आयंबिल	एक हजार करोड़ वर्ष
उपवास	दस हजार करोड़ वर्ष
छट्ठ (बेला)	एक लाख करोड़ वर्ष
अट्ठम (तेला)	दस लाख करोड़ वर्ष

एक अट्ठम के बाद हर एक उपवास की वृद्धि से दस गुने वर्षों के कर्म-क्षय का भाव समझ लेना चाहिए ।

○○○

नवाक्षरी मन्त्र

ॐ ह्रीं अर्हम् नमः क्ष्रीं स्वाहा !

सूचना–पहले नौ बार नवकार मन्त्र पढ़ कर बाद में इस मन्त्र की नौ मालाएँ फेरें। निरन्तर 21 दिन तक जप करने से सब प्रकार का राज-सम्बन्धी या अन्य सभी तरह का संकट दूर हो जाता है।

प्रेमभाववर्द्धक मन्त्र

ॐ ऐं ह्रीं नमो लोए सव्वसाहूणं!

सूचना–पूर्व दिशा की ओर मुख करके इस मन्त्र का जप करें। एक बार मन्त्र का जप करें और नये कपड़े में एक गाँठ लगा दें। इस प्रकार एक-सौ आठ बार जप करें और नये कपड़े में एक-सौ आठ गाँठ लगा दें। ऐसा करने से घर में, परिवार में किसी के साथ कलह या अनबन हो तो सब-क्लेश शान्त हो जाता है, आपस में प्रेम-भाव बढ़ जाता है।

सर्वकार्य साधक मन्त्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रः असिआउसा स्वाहा।

सूचना–इस मन्त्र का सवा लाख जप, निरन्तर बीच में अन्तराल डाले बिना, करने से मन-चिन्तित सब कार्यों की सिद्धि हो जाती है। यह मन्त्र दरिद्रता-गरीबी का नाश करने वाला है। उत्तर दिशा की ओर मुख करके एक बार भोजन और ब्रह्मचर्य का व्रत रख कर 21 दिन में सवा लाख जप करने से, यह मन्त्र सब कार्यों की सिद्धि करता है।

महासुख प्राप्ति कारक मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं नमो अरिहंताणं, ॐ ह्रीं श्रीं नमो सिद्धाणं, ॐ ह्रीं श्रीं नमो आयरियाणं, ॐ ह्रीं श्रीं नमो उवज्झायाणं, ॐ ह्री श्रीं

नमो लोए सव्वसाहूणं, ॐ ह्रीं श्रीं नमो नाणस्स, ॐ ह्रीं श्रीं नमो दंसणस्स, ॐ ह्रीं श्रीं नमो चरित्तस्स, ॐ ह्रीं श्रीं नमो तवस्स।

विधि–उत्तर दिशा में मुख करके सोते समय 21 बार जप करने से सब प्रकार के सुख की प्राप्ति होती है।

संकट निवारक, मनोवांछित दायक मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं नमिउण असुर-सुर-गरुल-भुयग-परिवंदिए, गय किलेसे अरिहे सिद्धायरिए उवज्झाए सव्वसाहूणं नमः स्वाहा।

विधि–पहले पंचमी, दशमी या पूर्णमासी को रवि-पुष्य रवि-मूल या गुरु-पुष्य नक्षत्र हो, उस दिन से 27 दिनों में इसका 12500 जाप करके इसे सिद्ध कर लें। प्रारम्भ में अट्ठमतप (तेला) करें, अन्यथा, बीच-बीच में आयम्बिल या एकाशन करें, जप की पूर्णाहुति के दिन उपवास करें। उसके बाद संकटकाल में इस मंत्र की 21 माला फेरने से शान्ति हो जाती है। मनोवांछित कार्यसिद्धि हो जाती है। जाप एकान्त में करें।

स्मरणशक्ति-वर्द्धक मंत्र

ॐ ह्रीं चउद्दसपुव्विणं, ऊँ ह्रीं पयाणुसारिणं, ॐ ह्रीं एगार-संगधारिणं, ॐ ह्रीं उज्जुमइणं, ॐ ह्रीं विउलमइणं स्वाहा।

विधि–पहले **'तीर्थंकरगणधरप्रसादादेष योगः फलतु'** यह 7 बार कह कर इस मंत्र की एक माला रोजाना फेरें। इससे बुद्धि तीव्र होगी।

भूतप्रेतादिनिवारण मंत्र

ॐ नमो उग्गतवचरणपारीणं, ॐ नमो हिततवाणं, ॐ नमो तत्ततवाणं, ॐ नमो पडिमापडिवन्नाणं एएसिं पराविज्जापहारणे पसिज्जउ स्वाहा।

विधि–पहले **'तीर्थंकरगणधरप्रसादादेष योगः फलतु'** इस प्रकार 7 बार बोल कर फिर 21 दिन तक प्रतिदिन 1 माला फेरें। कोई भी देवदोष की शंका होगी तो दूर हो जायेगी।

विशिष्ट विद्याप्राप्ति का मंत्र

'ॐ ह्रीं बीयबुद्धिणं, ऊँ ह्रीं कोट्ठबुद्धिणं, ऊँ ह्रीं संभिन्न-सोयाणं, ॐ ह्रीं अक्खीण महाणसलद्धिणं सव्वलद्धिणं नमः स्वाहा।

विधि–तेला करके इस मंत्र का 12500 जप पीली माला से तीन दिन में कर लें। फिर प्रतिदिन 108 बार जपें।

बुद्धिवर्द्धक एवं परीक्षोत्तीर्ण–मंत्र

ऐं सरस्वत्यै नमः।

विधि–पहले सवा लाख जप करके इसे सिद्ध कर लें। फिर जब भी कार्य हो, तब 11 माला रात को सोते समय या प्रातः उठते समय फेरें। इससे स्मरणशक्ति बढ़ती है। परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है।

ऐश्वर्यदायक मन्त्र

ॐ ह्रीं वरे सुवरे असिआउसा नमः।

सूचना–इस मन्त्र का एकान्त स्थान में प्रतिदिन सुबह, दोपहर और शाम को एक-सौ आठ जप करने से अर्थात् तीनों काल में एक-एक माला करके तीन माला फेरने से सब प्रकार की सम्पत्ति, लक्ष्मी और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। किसी पद आदि की उन्नति के लिए भी इसका जप किया जा सकता है।

रोग-निवारक मन्त्र

ॐ नमो विप्पोसहि-पत्ताणं, ॐ नमो खेलोसहिपत्ताणं, ॐ नमो जल्लोसहिपत्ताणं, ॐ नमो सव्वोसहिपत्ताणं स्वाहा।

सूचना–इस मन्त्र की प्रतिदिन एक माला फेरने से सब प्रकार के रोगों की पीड़ा शान्त हो जाती है, रोगी का कष्ट कम हो जाता है।

ग्रहपीड़ा-नाशक मन्त्र

जब सूर्य और मंगल की पीड़ा हो तो–**ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं**, चन्द्रमा और शुक्र की पीड़ा हो तो–**ॐ ह्रीं नमो अरिहंताणं**, बुध की पीड़ा हो तो–**ॐ ह्रीं नमो उवज्झायाणं**, गुरु-बृहस्पति की पीड़ा हो तो–**ॐ ह्रीं नमो आयरियाणं**, तथा शनि, राहु और केतु की पीड़ा हो तो–**ॐ ह्रीं नमो लोए सव्वसाहूणं** मन्त्र का जप करना चाहिए। जितने दिनों तक ग्रह-पीड़ा-कारण रहे उतने दिन तक प्रतिदिन ऊपर लिखे मन्त्रों का एक हजार जप करना उचित है। इन मन्त्रों के जप से किसी भी प्रकार की ग्रह-पीड़ा नहीं होगी।

परिवार-रक्षा मन्त्र

ॐ अरिहे सर्वं रक्ष ह्रँ फट् स्वाहा।

सूचना–इस मन्त्र के द्वारा परिवार की रक्षा के लिए जप करना चाहिए। परिवार पर आए सब आपत्ति, संकट दूर हो जाते हैं। एक माला प्रात:काल और एक सायंकाल फेरनी चाहिए।

मंगल मन्त्र

ॐ अ-सि-आ-उ-सा नमः।

सूचना–इस मन्त्र का सूर्योदय के समय सूर्य की ओर मुख करके 108 बार जप करने से गृह–कलह दूर हो, शान्ति हो और धन–सम्पत्ति की प्राप्ति हो।

द्रव्य–प्राप्ति मन्त्र

ॐ ह्रीं नमो अरिहंताणं सिद्धाणं आयरियाणं उवज्झायाणं साहूणं मम, ऋद्धि–वृद्धि–समीहितं कुरु–कुरु स्वाहा।

सूचना–इस मन्त्र का नित्य प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकाल को प्रत्येक समय में बत्तीस बार मन में ही ध्यान के रूप में मानसिक जप करें। सब प्रकार की सुख–समृद्धि, धन का लाभ और कल्याण हो।

सप्ताक्षरी मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः।

सूचना–यह बहुत प्राचीन और प्रभावशाली मन्त्र है। सब प्रकार के सुख, सम्पत्ति आदि के मनोरथ इससे पूर्ण हो जाते हैं।

हृदय–जप

जहां हृदय है वहाँ मन के संकल्प से ही पाँच पंखुड़ी का कमल बनाना चाहिए। पहली पंखुड़ी सफेद रंग की, दूसरी लाल रंग की, तीसरी पीले रंग की, चौथी हरे रंग की और पांचवीं काले रंग की। कमल के बीच में अर्हम् का ध्यान करें और ऊपर लिखी पंखुड़ियों पर क्रमशः **'नमो अरिहंताणं'** आदि पांच पदों का मन से ही जप करें। इस प्रकार नौ बार नवकार मंत्र का जप करने से आध्यात्मिक बल बढ़ता है।

ओम् का जप

'ओम्' नवकार मन्त्र के पाँच पद का वाचक है। पिछले हृदय-जप में बताये गये सफेद, लाल आदि पांचों रंगों की पंखुड़ियों पर ओम् का क्रमशः ध्यान करना चाहिए।

अ-सि-आ-उ-सा के मन्त्र में भी 'ओम्' रहा हुआ है। अतः नाभि-कमल में अ, मस्तक-कमल में सि, मुख-कमल में आ, हृदय-कमल में उ और कंठ-कमल में सा अक्षर का ध्यान करने से सब प्रकार से आनन्द मंगल रहता है।।

सोऽहम् का जप

'सो' का अर्थ वह यानी 'अर्हन्त-देव' और अहम् का अर्थ 'मैं' है। दोनों का मिल कर अर्थ होता है कि—मैं अर्हंतदेव हूँ। इस मन्त्र का जप श्वास के साथ करना चाहिए। अन्दर की ओर श्वास आए, तब 'सो' बोलना और जब बाहर की ओर श्वास जाए, तब 'ऽहम्' कहना चाहिए। यह मन्त्र निश्चयदृष्टि का है।

अर्हम् का ध्यान

जिसके सब ओर निर्मल सुनहरी किरणें निकलती हों, ऐसे सुवर्णकमल के बीच श्वेत रंग में अर्हम् का ध्यान करना चाहिए। उक्त कमल को सर्वप्रथम ऊँचे आकाश में चमकता हुआ विचार करें। बाद में क्रमशः मुख में प्रवेश करता हुआ, भृकुटि में भ्रमण करता हुआ, अन्त में भाल-मण्डल में स्थिर होता हुआ सोचें।

'ॐ ह्रीं श्रीं अर्हम् अ-सि-आ-उ-सा नमः।'

इस मन्त्र का 12,500 जाप करने से सब प्रकार का रोग, संकट दूर हो जाता है; पुत्ररत्न की प्राप्ति के लिए इस मन्त्र का सवा लाख बार जाप

करना चाहिए। पद्मासन लगा कर, पूर्व या उत्तर दिशा में मुख रख कर, ब्रह्मचर्य की साधना से जप करना चाहिए।

नवपद का ध्यान

अपने हृदय में संकल्प से आठ पंखुड़ी का कमल बनाएँ–चार पंखुड़ी पूर्व आदि चार दिशाओं में और चार पंखुडी ईशान आदि चार विदिशाओं में। बीच में **नमो अरिहंताणं** का ध्यान करें। फिर चार दिशाओं वाली पंखुड़ियों पर अनुक्रम से **'नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं'** का ध्यान करें। इसके बाद चार विदिशाओं वाली पंखुड़ियों पर क्रमशः **'नमो दंसणस्स, नमो नाणस्स, नमो चरित्तस्स, नमो तवस्स'** का ध्यान करना चाहिए। दिशाओं का क्रम पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर है और विदिशाएँ ईशान (उत्तर और पूर्व का मिलन), अग्निकोण (पूर्व और दक्षिण का मिलन) आदि के क्रम से है।

लोगस्स कल्प

ऐं ॐ ह्रीं एँ लोगस्स उज्जोयगरे, धम्मतित्थयरे जिणे। अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली-मम मनस्तुष्टिं कुरु-कुरु ॐ स्वाहा।

विधि–इस मन्त्र को पूर्व दिशा की ओर मुख करके सूर्योदय के समय खड़ा हो कर **'काउस्सग्ग'** के रूप में 108 बार मौन सहित जपें। दिन में एक बार भोजन करें। ब्रह्मचर्य से रहें, भूमि पर या पट्टे पर सोएँ। निरन्तर चौदह दिन तक जप करने से मान-सम्मान, धन-सम्पत्ति प्राप्त हो और सब प्रकार का संकट दूर हो। (इति प्रथम मण्डल)

ॐ क्रां क्रीं ह्रां ह्रीं उसभमजियं च वंदे, संभवमभिनंदणं च सुमइं च। पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे स्वाहा !

विधि–उत्तर दिशा की ओर मुख रख कर पद्मासन लगा कर 108 बार जपें। सोमवार से 7 दिन तक मौन रखें, एक बार भोजन करें, ब्रह्मचर्य पालें, भूमि पर शयन करें। झूठ न बोलें, सफेद वस्तु – चावल आदि का भोजन करें। गृह-कलह और राज-काज के झगड़े दूर हों। सब प्रकार से आनन्द रहे। –(इति द्वितीय मण्डल)

ॐ एँ ह्रीं झूं झीं सुविहिं च पुप्फदंतं सीयल सिज्जंस वासूपुज्जं च। विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि स्वाहा!

विधि–इस मन्त्र को लाल रंग की माला से 108 बार जपें। ब्रह्मचर्य पालें और भूमि पर शयन करें। 21 दिन तक जपते रहने से शत्रु का भय दूर हो, संग्राम में या मुकद्दमे में जय हो। –(इति तृतीय मण्डल)

ॐ ह्रीं श्रीं कुंथुं अरं च मल्लिं वंदे मुणिसुव्वयं नमि जिणं च। वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च, मम मनोवाञ्छित पूरय-पूरय ह्रीं स्वाहा।

विधि–इस मन्त्र का 11,000 जप पीले रंग की माला से पूर्व दिशा की तरफ मुख करके करना चाहिए। भूत-प्रेत की बाधा दूर हो, परिवार की शोभा बढ़े। लिख कर गले में बाँधने से ज्वर-पीड़ा भी दूर हो।

(इति चतुर्थ मण्डल)

ॐ ह्रीं ह्रां एवं मए अभित्थुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा। चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु स्वाहा !

विधि–इस मन्त्र का जप 5500 है। पूर्वदिशा की ओर हाथ जोड़ कर खड़े हों, तथा मुख ऊपर आकाश की तरफ करें। सब प्रकार का सुख मिले, सबको वल्लभ यानी प्रिय लगे। (इति पंचम मण्डल)

ॐ अंबराय कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा। आरोग्ग-बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु स्वाहा !

विधि–इस मन्त्र को उत्तरदिशा की ओर मुँह करके 15000 बार जपने से सत्‌-कार्यों में वृद्धि हो, देवगण भी प्रसन्न हों, जय-जयकार हो, सब प्रकार का सुख मिले और अन्त में समाधिमरण का गौरव प्राप्त हो।

(इति षष्ठ मण्डल)

ॐ ह्रीं एँ ओं जीं जौं चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहिय पयासयरा। सागर-वरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु। मम मनोवांछितं पूरय-पूरय स्वाहा !

विधि–इस मन्त्र का पूर्वदिशा की ओर मुँह रख कर 1000 जप करने से सब प्रकार से मन की आशा पूर्ण हो। यश और प्रतिष्ठा बढ़े। सब लोगों का पूजनीय हो। (इति सप्तम मण्डल)

○○○

उपसर्गहर स्तोत्र का कल्प

(1) ॐ ह्रीं, श्रीं, अर्हम्‌ नमिऊण, पास विसहर, वसह, जिण, फुलिंग, ह्रीं श्रीं नमः।

सूचना–उपसर्ग-हर स्तोत्र चौदहपूर्वी भद्रबाहु स्वामी का बनाया हुआ है। महान्‌ प्रभावशाली है। यह उपसर्गहर स्तोत्र का मूल बीजमन्त्र है। अतएव कोई भी संकट आ जाए तो पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठें, सबसे पहले **'श्रीभद्रबाहुस्वामिप्रसादात्‌ एष योग फलतु'**-ऐसा कहें, फिर ऊपर लिखे बीजमन्त्र की एक माला पद्मासन लगाकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके फेरें, और बाद में उपसर्गहर स्तोत्र 27 बार पढ़ें। इस प्रकार 27 दिन तक निरन्तर साधना करने से सब संकट दूर हो जाते हैं तथा सब प्रकार के आनन्द, मंगल और सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है।

(2) ॐ पार्श्वनाथाय ह्रीं स्वाहा !

सूचना–इस मन्त्र का जप 108 बार प्रतिदिन करने से सब प्रकार का संकट दूर हो। राज्य-भय दूर हो, संघर्ष में विजय हो।

(3) ॐ ह्रीं श्रीं कलिकुण्डस्वामिने नमः।

सूचना–इस मन्त्र का सवा लाख जप करने से कठिन से कठिन कार्य की सिद्धि हो, दरिद्रता दूर हो, लक्ष्मी की प्राप्ति हो। यह जप 21 दिन में पूर्ण करें। एक बार भोजन करें, ब्रह्मचर्य से रहें और भूमि पर शयन करे।।

(4) ॐ नमो भगवते श्रीपार्श्वनाथाय क्षेमं कराय ह्रीं नमः।

सूचना–यह क्षेम करने वाला मन्त्र है। अचानक आने वाला संकट और भय सब दूर हो।

(5) ॐ ह्रीं श्रीं हर-हर स्वाहा।

सूचना–यह मन्त्र प्रतिदिन 108 बार जप करने के लिए है। रोग हो आपत्ति हो, किसी भी प्रकार की चिंता हो, वह इस मन्त्र से दूर हो जाती है।

○○○

संतिकर स्तोत्र की साधना

पर्युषण पर्व पर अथवा दीपावली के अवसर पर तेला करके सम्पूर्ण संतिकर स्तोत्र का प्रतिदिन 108 बार पाठ करना चाहिए। उक्त साधना करने के बाद जब कभी ज्वर आदि रोग का किसी को प्रकोप हो, तब 7 बार सम्पूर्ण संतिकर स्तोत्र पढ़ने के बाद दूसरी और तीसरी गाथा का 108 बार जप करना। सब प्रकार से शीघ्र ही शान्ति हो।

पाक्षिक, चौमासी और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करने के बाद तीन बार संतिकर स्तोत्र का पाठ पढ़ें और दूसरे सब भाई खड़े हो कर श्रवण करें। ऐसा करने से किसी प्रकार के उपद्रव की शंका नहीं रहती।

○○○

तिजय पहुत्त स्तोत्र की साधना

यह 170 तीर्थंकर देवों की स्तुति करने वाला स्तोत्र है। जैन-जगत् में इसकी बहुत बड़ी महिमा है।

हर हुंहः सर सुंसुः ॐ क्लीं ह्रीं हुं फट् स्वाहा !

इस मन्त्र का जाप करने से अत्यन्त कोपायमान अथवा रुष्ट राजा या शत्रु आदि भी प्रसन्न हो जाता है।

श्री सर्वतोभद्र यंत्र

25 ह	80 र	क्षि	15 हुं	50 हः
20 स	45 र	प	30 सुं	75 सः
क्षि	प	ॐ	स्वा	हा
70 ह	35 र	स्वा	60 हुं	5 हः
55 स	10 र	हा	65 सुं	40 सः

इस यंत्र का हृदय में ध्यान करने से बुद्धि निर्मल होती है, पाप का नाश होता है, सब प्रकार के रोग व संकट दूर हो जाते हैं। यह यंत्र केशर, चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्य से शुद्ध थाली आदि पात्र में लिख कर प्रासुक गर्म जल से धो कर रोगी को पिलाने से रोग भी दूर हो जाता है। इस यंत्र को दीपावली पर्व पर केशर आदि सुगन्धित द्रव्य से कागज पर लिखें

और 108 बार पूर्ण तिजयपहुत्त स्तोत्र पढ़ कर उसे सिद्ध कर लें, फिर हमेशा अपने पास रखें तो अपने परिवार और समाज में सबको प्रिय हो, मान-प्रतिष्ठा बढ़े, तथा लक्ष्मी की प्राप्ति हो।

ooo

नमिऊण स्तोत्र की साधना

(1) ॐ नमो भगवतो अरहओ अजिय भगवई महाविज्जा य अजिअए उवसोमए अणिहए महाविज्जा सुभंकरे स्वाहा।

सूचना–यह मन्त्र चौविहार उपवास करके 1008 बार श्वेत माला से जपना चाहिए। इसके सिद्ध हो जाने पर सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

(2) ॐ नमो अरहंताणं, ॐ नमो भगवईए चंदाई महाविज्जाए।

सूचना–ग्राम में प्रवेश करते समय इस विद्या का सात बार जप करने से कार्य में सफलता प्राप्त होती है। सम्मान बढ़ता है। परन्तु पहले भगवान् पार्श्वनाथ के जन्मदिन 'पौष वदी दशमी' के दिन उपवास रख कर एक हजार जप करके यह विद्या सिद्ध कर लेनी चाहिए।

(3) ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं अर्हँ नमः।

सूचना–इस मन्त्र का तीनों काल-सुबह, दोपहर और सायंकाल 108 जप करने से प्रत्येक कार्य की सिद्धि होती है।

(4) नमिऊण पास विसहर वसह जिण फुलिंग।

सूचना–नमिऊण स्तोत्र की 23वीं गाथा में जो अठारह अक्षर का मन्त्र बताया है, वह यही है। यह चिंतामणि मन्त्र है। साधना की विधि के लिए मन्त्राधिराज चिंतामणि ग्रन्थ देखना चाहिए। संक्षेप में, एक माला सूर्योदय के समय फेरनी चाहिए। मन की सब चिन्ताएं दूर हों।

दीपावली का जप

दीपावली के दिन उपवास रखें, शुद्ध भाव से ब्रह्मचर्य पालें। पहली आधी रात तक **'नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स'**–इस मंत्र की माला फेरें और आधी रात के पश्चात् सूर्योदय तक **'ॐ नमो भगवओ गोयमस्स सिद्धस्स बुद्धस्स अक्खीण-महाणस्स'–मम मनोवांछित आणय आणय पूरय पूरय ऋद्धिं वृद्धिं कुरू कुरू स्वाहा।** इस मंत्र का जाप करें। अर्धरात्रि के समय या सूर्योदय के समय केशर या अष्टगंध से उपर्युक्त यंत्र लिख कर अपने पास रखें। लक्ष्मी की प्राप्ति हो, सब प्रकार से आनन्द हो।

दीपावली यंत्र

१	१४	४	१५
८	११	५	१०
१३	२	१६	३
१२	७	९	६
ॐ	ह्रीं	श्रीं	क्लीं

ooo

तिथि आदि का विचार

जैन-ज्योतिष में पन्द्रह तिथियों के पांच प्रकार बताए गए हैं–नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा। इनमें 'रिक्ता' शुभ कार्य में वर्जनीय है; बाकी सब शुभ हैं। कौन-से दिन कौन-सी तिथि होती है, इसके लिए निम्नांकित यंत्र देखिए–

१	६	११	नन्दा
२	७	१२	भद्रा
३	८	१३	जया
४	९	१४	रिक्ता
५	१०	१५	पूर्णा

○○○

सिद्धि योग

नन्दा तिथि को शुक्रवार हो, भद्रा को बुधवार हो, जया को मंगलवार हो, रिक्ता को शनिवार और पूर्णा को गुरुवार हो, तो सिद्धि-योग माना जाता है। सिद्धि-योग में किए हुए शुभकार्य सफल होते हैं। नीचे के यंत्र में स्पष्टतया समझ लीजिए कि कौन-सी तिथि और कौन-से वार को सिद्धि योग होता है।

१	६	११	शुक्र
२	७	१२	बुध
३	८	१३	मंगल
४	९	१४	शनि
५	१०	१५	गुरु

○○○

मृत्यु योग

१	६	११	रवि, मंगल
२	७	१२	सोम, गुरु
३	८	१३	बुध
४	९	१४	शुक्र
५	१०	१५	शनि

सूचना–मृत्यु–योग अशुभ माना जाता है, इसलिए कोई भी शुभकार्य इन दिनों में प्रारम्भ नहीं करना चाहिए।

○○○

सूर्य-दग्धा तिथि

धन तथा मीन संक्रांति की दौज, वृष तथा कुम्भ की चौथ, मेष तथा कर्क की छठ, कन्या तथा मिथुन की आठम, वृश्चिक तथा सिंह की दशमी, मकर तथा तुला की संक्रांति की बारस–सूर्यदग्धा तिथि होती है। इन तिथियों का सभी शुभ कार्यों में निषेध है।

○○○

चन्द्र-दग्धा तिथि

धन तथा कुम्भ राशि का चन्द्रमा होने पर दौज, मेष तथा मिथुन राशि का चन्द्रमा होने पर चौथ, तुला तथा सिंह राशि का चन्द्रमा होने पर छठ, मीन तथा मकर राशि का चन्द्रमा होने पर आठम, वृष तथा कर्क राशि का चन्द्रमा होने पर दशमी, वृश्चिक तथा कन्या राशि का चन्द्रमा

होने पर बारस–चन्द्र–दग्धा तिथि मानी जाती है। शुभ कार्य आरम्भ करते समय इनका भी निषेध है।

○○○

अमृत-सिद्धि योग

रविवार को हस्त नक्षत्र हो, गुरुवार को पुष्य हो, बुधवार को अनुराधा हो, शनिवार को रोहिणी हो, सोमवार को मृगशिर हो, शुक्रवार को रेवती हो, और मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र हो–तो अमृतसिद्धि योग बनता है। इस योग में किए गए कार्य शीघ्र ही सिद्ध हो जाते हैं।

○○○

विजय-योग

विजय योग प्रतिदिन आता है। प्रत्येक दिन के चार पहर होते हैं। उनमें पहले दो पहर की आखिरी घड़ी और आगे के दो पहर की पहली घड़ी, विजय–योग की होती है। इस योग में किये हुए कार्य सफल होते है। जैन ज्योतिष में इसकी बड़ी महिमा है।

○○○

चन्द्र-विचार

राशि	दिशा
मेष, सिंह, धनु	पूर्व दिशा में
वृष, कन्या, मकर	दक्षिण दिशा में
मिथुन, तुला, कुम्भ	पश्चिम दिशा में
वृश्चिक, कर्क, मीन	उत्तर दिशा में

सूचना—यात्रा में सम्मुख चन्द्रमा हो तो अर्थ का लाभ होता है, दाहिनी तरफ हो तो सुख तथा सम्पत्ति, पीठ पीछे हो तो प्राणों की पीड़ा और बाईं तरफ हो तो धन का क्षय होता है।

○○○

दिशा-शूल विचार

सोम और शनिवार	पूर्व दिशा में
गुरुवार	दक्षिण दिशा में
रवि और शुक्रवार	पश्चिम दिशा में
बुध और मंगलवार	उत्तर दिशा में

सूचना—यात्रा में यानी प्रदेशगमन में दिशा-शूल सामने और दाहिने अच्छा नहीं होता है। यदि किसी आवश्यक कार्य के लिए दिशा-शूल के होते भी जाना पड़े तो एक प्राचीन कथन के अनुसार नीचे लिखी वस्तुओं का वार के क्रम से सेवन करें—

गुड़ मंगल, बुध खांड, बृहस्पति राई खाजे।
शुक्र वायविडंग शनिश्चर दही खाजे॥
रवि तंबोल, सोम दर्पण, एता कर दिशाशूल भी जावे!

○○○

सब कामों में वर्जित ज्वालामुखी योग

प्रतिपदा तिथि (एकम) को मूल नक्षत्र, पंचमी को भरणी, अष्टमी को कृत्तिका, नौमी को रोहिणी, दशमी को अश्लेषा नक्षत्र हो तो ज्वालामुखी योग होता है।

○○○

दिशाओं में वर्जित नक्षत्र

रोहिणी नक्षत्र हो तो पूर्व में, श्रावण हो तो पश्चिम में, चित्रा हो तो दक्षिण में, और हस्त हो तो उत्तर दिशा में नहीं जाना चाहिए।

ooo

किस दिशा में कौन-सा वार लाभप्रद

मंगल और बुधवार पूर्व दिशा में, सोम और शनिवार दक्षिण दिशा में, गुरुवार पश्चिम दिशा में, रवि और शुक्रवार उत्तर दिशा में यात्रा हेतु लाभप्रद माना जाता है।

ooo

छींक विचार

छींक पीठ की कुशल उचारे, बांयीं छींक कारज सब सारे।
सम्मुख छींक लड़ाई भाषे, छींक दाहिनी द्रव्य विनाशे।।
ऊंची छींक कही जयकारी, नीची छींक होय भय भारी।
अपनी छींक महादुखदाई, ऐसे छींक विचारो भाई।।
छींकत खाइए, छींकत पीइए, छींकत रहिये सोय।
छींकत पर - घर मत जाइए, तुरंत लड़ाई होय।।
एक नाक दो छींक, काम बने सब ठीक।।

ooo

स्वर-विज्ञान

प्रवास–बाहर ग्राम जाने में, स्कूल या पुस्तकालय आदि के उद्घाटन में, गृह–प्रवेश में, वस्तु संचय करने में और किसी भी शुभ कार्य में चन्द्र नाड़ी, अर्थात् नाक का बायां स्वर चलता हुआ शुभ समझा जाता है। युद्ध में, विवाद में, विद्यारम्भ में, विघ्न–शांति में, व्यापार में तथा भोजन आदि अन्य छोटे–छोटे कार्यों में सूर्य नाड़ी, अर्थात् नाक का दाहिना स्वर चलता हुआ उत्तम माना जाता है।

चन्द्र नाड़ी चलती हो, तो पूर्व और उत्तर दिशा में शूल समझना चाहिए तथा सूर्य नाड़ी चलती हो, तब पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में शूल मानना चाहिए। शूल वाली दिशा में गमन करना हितकारी नहीं है। **'ज्योतिष हीर'** ग्रन्थ में लिखा है कि कृष्ण पक्ष में गुरुवार, शुक्रवार, बुधवार, सोमवार के दिन चन्द्र स्वर चलता हो तो विशेष शुभ माना जाता है तथा शुक्ल पक्ष में रविवार, मंगल और शनिवार के दिन सूर्य स्वर चलता हो तो विशेष शुभ माना जाता है। रात्रि के समय में चन्द्र स्वर और दिन के समय में सूर्य स्वर चलता हो, तब प्रवास अर्थात् यात्रा करना अच्छा समझा जाता है। **'दिन शुद्धि'** ग्रन्थ में कहा जाता है कि जिस तरफ का स्वर चलता है, उसी तरफ का पैर उठाकर गमन करने से कार्य में सफलता प्राप्त होती है।

जब दोनों स्वर चलते हों, तब सुषुम्ना नाड़ी होती है। इस नाड़ी में किसी भी शुभ कार्य का आरम्भ नहीं करना चाहिए।

दाहिने स्वर में भोजन खावे, बाएं पीवे पानी।
बायीं करवट सोवतां, रहे निरोग शरीर॥

○○○

दिन का चौघड़िया

(प्रत्येक चौघड़िया सूर्योदय से सूर्यास्त के समय का 8वां भाग)

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल

सूचना–ऊपर के कोष्ठक से यह समझना चाहिए कि जिस दिन जो वार हो, उस दिन उसी वार के नीचे लिखा हुआ चौघड़िया (चार घड़ी का समय) सूर्योदय के समय में बैठता है, वह पहला चौघड़िया समझना चाहिए। उसके उतरने के बाद उस वार से छठे वार का चौघड़िया बैठता है, वह उस वार का दूसरा चौघड़िया समझना चाहिए। दूसरे के उतरने के बाद उस छठे वार से छठे वार का चौघड़िया बैठता है, वह उस वार का तीसरा चौघड़िया समझना चाहिए। यही क्रम आगे भी समझना।

उदाहरण के लिए देखिए–रविवार के दिन पहला उद्वेग नामक चौघड़िया है। उसके उतरने के बाद रविवार से छठवां वार शुक्र है, जिसका चौघड़िया चल है, सो यह रविवार का दूसरा चौघड़िया हुआ। इसी क्रम से प्रत्येक वार के दिन-भर का चौघड़िया जान लेना चाहिए।

एक चौघड़िया डेढ़ घंटे तक रहता है, अर्थात् सवेरे के छह बजे से लेकर शाम के छह बजे तक बारह घंटे में आठ चौघड़िये व्यतीत होते हैं। इनमें से अमृत, शुभ और लाभ—ये तीन चौघड़िये उत्तम हैं तथा उद्वेग रोग और काल—ये तीन चौघड़िये अशुभ हैं। चल नामक चौघड़िया मध्यम है। कोई भी शुभ कार्य अच्छे चौघड़ियों में करना अच्छा माना जाता है।

○○○

रात्रि का चौघड़िया

(सूर्यास्त से प्रातः सूर्योदय के बीच समय का 8वां भाग)

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग
चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
रोग	लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल
लाभ	शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चल	काल
शुभ	चल	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

सूचना—इस कोष्ठक में पहले कोष्ठक से केवल इतना ही अन्तर है कि एक वार पहले चौघड़िए के उतरने के बाद उस वार से पांचवें वार का दूसरा चौघड़िया बैठता है यानी आरम्भ होता है। शेष सब विषय ऊपर दिन के चौघड़िये के अनुसार ही हैं।

दिल्ली रेखांश अक्षांश पर आधारित सूर्योदय-सूर्यास्त सारिणी

जनवरी	सूर्योदय	नवकारसी	पोरसी	दो पोरसी	सूर्यास्त
1	7.18	8.06	9.15	12.24	5.30
8	7.20	8.08	9.54	12.28	5.36
15	7.19	8.07	9.55	12.31	5.42
21	7.18	8.06	9.55	12.32	5.47
28	7.16	8.04	9.55	12.35	5.52
31	7.15	8.30	9.55	12.35	5.55
फरवरी					
1	7.14	8.02	9.55	12.36	5.56
8	7.10	7.58	9.53	12.36	6.02
15	7.04	7.52	9.50	12.36	6.07
21	6.58	7.46	9.46	12.35	6.12
28	6.51	7.39	9.43	12.34	6.16
मार्च					
1	6.50	7.38	9.42	12.33	6.16
8	6.43	7.31	9.38	12.32	6.21
15	6.35	7.23	9.33	12.30	6.25
21	6.28	7.16	9.28	12.28	6.28
28	6.19	7.07	9.22	12.25	6.31
31	6.16	7.04	9.21	12.25	6.33
अप्रैल					
1	6.15	7.03	9.20	12.24	6.33
8	6.07	6.55	9.15	12.23	6.38
15	5.59	6.47	9.10	12.21	6.42
21	5.53	6.41	9.07	12.20	6.46
28	5.47	6.35	9.03	12.19	6.50
30	5.45	6.33	9.02	12.18	6.51

मई	सूर्योदय	नवकारसी	पोरसी	दो पोरसी	सूर्यास्त
1	5.45	6.33	9.02	12.18	6.51
8	5.39	6.27	8.59	12.18	6.56
15	5.34	6.22	8.56	12.17	7.00
21	5.31	6.19	8.54	12.17	7.03
28	5.29	6.17	8.54	12.18	7.07
31	5.28	6.16	8.53	12.18	7.08
जून					
1	5.28	6.16	8.53	12.18	7.08
8	5.27	6.15	8.54	12.20	7.12
15	5.26	6.14	8.54	12.22	7.16
21	5.27	6.14	8.55	12.23	7.17
28	5.29	6.17	8.57	12.25	7.18
30	5.30	6.18	8.57	12.24	7.18
जुलाई					
1	5.30	6.18	8.57	12.24	7.18
8	5.33	6.21	9.00	12.27	7.18
15	5.37	6.25	9.02	12.27	7.16
21	5.40	6.28	9.04	12.28	7.15
28	5.44	632	9.06	12.28	7.11
31	5.45	6.33	9.07	12.29	7.10
अगस्त					
1	5.46	6.34	9.07	12.28	7.09
8	5.49	6.37	9.08	12.26	7.03
15	5.53	6.41	9.09	12.25	6.57
21	5.57	6.45	9.11	12.25	6.52
28	6.01	6.49	9.12	12.23	6.45
31	6.03	6.51	9.13	12.23	6.42

सितम्बर	सूर्योदय	नवकारसी	पोरसी	दो पोरसी	सूर्यास्त
1	6.04	6.52	9.13	12.22	6.41
8	6.07	6.55	9.14	12.20	6.33
15	6.10	6.58	9.14	12.17	6.24
21	6.13	7.01	9.14	12.15	6.17
28	6.17	7.05	9.15	12.12	6.08
30	6.18	7.06	9.15	12.12	6.06
अक्टूबर					
1	6.18	7.06	9.15	12.12	6.05
8	6.22	7.10	9.16	12.10	5.57
15	6.26	7.14	9.17	12.08	5.49
21	6.29	7.17	9.18	12.07	5.43
28	6.34	7.22	9.20	12.06	5.36
31	6.36	7.24	9.21	12.06	5.34
नवम्बर					
1	6.36	7.24	9.21	12.05	5.33
8	6.42	7.30	9.24	12.06	5.28
15	6.47	7.35	9.26	12.05	5.23
21	6.52	7.40	9.30	12.08	5.21
28	6.58	7.46	9.33	12.10	5.19
30	6.59	7.47	9.34	12.09	5.19
दिसम्बर					
1	7.00	7.48	9.35	12.10	5.19
8	7.05	7.53	9.39	12.13	5.20
15	7.10	7.58	9.43	12.16	5.21
21	7.13	8.01	9.46	12.19	5.24
28	7.17	8.05	9.50	12.23	5.28
31	7.18	8.06	9.51	12.24	5.30

ॐ जय महावीर प्रभो

ॐ जय महावीर प्रभो! स्वामी जय महावीर प्रभो!
जग नायक सुखदायक, अति गम्भीर प्रभो! ॐ ....

कुण्डलपुर में जन्मे, त्रिशला के जाये। स्वामी...
पिता सिद्धार्थ राजा, सुर नर हर्षाए।। ॐ ....

दीनानाथ दयानिधि, हैं मंगलकारी। स्वामी...
जग हित संयम धारा, प्रभु पर-उपकारी।। ॐ ....

पापाचार मिटाया, सत्पथ दिखलाया। स्वामी...
दया-धर्म का झण्डा, जग में लहराया।। ॐ ....

अर्जुनमाली गौतम, श्री चन्दनबाला। स्वामी...
पार जगत से बेड़ा, इनका कर डाला।। ॐ ....

पावन नाम तुम्हारा, जग तारणहारा। स्वामी...
निशदिन जो नर ध्यावे, कष्ट मिटे सारा।। ॐ ....

करुणा सागर! तेरी महिमा है न्यारी। स्वामी...
''ज्ञानमुनि'' गुण गावे, चरणन बलिहारी।। ॐ ....

ध्वनि : ॐ जय जगदीश हरे...

○○○

श्रुत-संवर्धन समिति के उद्देश्य

- स्थानकवासी परम्परा के प्राचीन जैन पाण्डुलिपि-भण्डारों का वर्गीकरण, केन्द्रीय रूप से संग्रहण-संरक्षण, सूचिकरण एवं डिजिटाइजेशन करना तथा केन्द्रीय अभिलेखागार की स्थापना करना।
- स्थानकवासी परम्परा के मान्य आगमों एवं साहित्य का प्रकाशन, वितरण एवं केन्द्रीय रूप से सन्दर्भ पुस्तकालय समायोजित करना।
- साधु एवं श्रावकों के उपयोगी धार्मिक उपकरणों व स्थानकवासी जैन साहित्य की केन्द्रीय कार्यालय पर उपलब्धता एवं राष्ट्र स्तर पर वितरण।

श्रुत-संवर्धन समिति
नई दिल्ली